कुतब शतक और उसकी हिन्दुई

*

डॉ० माताप्रसाद गुप्त

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

प्रियवर

मुकुन्द और माधव

को

प्रस्तावना

पुरानी खडी बोली एक साहित्य-रंक भाषा मानी जाती रही है, और इसे साहित्यमे सर्वप्रथम प्रयुक्त करनेका श्रेय दक्षिण भारतके उन सूफी कवियो और लेखकोको दिया जाता रहा है जो उत्तर भारतसे वहाँ गये थे। आठ वर्ष हुए रोडा कृत 'राउल वेल' नामका एक शिलाकित काव्य प्रकाशमे आया, जो ईसवी ११वी शती का है। अब यह एक सुसम्पादित रूपमे अपनी भाषाके अध्ययन-विश्लेषणके साथ 'राउल वेल और उसकी भाषा' नामसे प्रकाशित भी है (सम्पादक—प्रस्तुत लेखक, प्रकाशक—मित्र प्रकाशन (प्रा०) लिमिटेड, प्रयाग)। इसमे एक टक्की रमणीका वर्णन है, जो रचनाकी अन्य छ रमणियोकी भाँति ही उसकी अपनी भाषामे किया गया है। यह वर्णन कुछ पंक्तियोका ही होते हुए भी खडी बोलीका प्राचीनतम रूप हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है, और इससे ज्ञात होता है कि खडी बोली केवल दिल्ली-मेरठकी ही भाषा नही थी, वह टक्क की भी भाषा थी, जो पहले पजाब और अब हरियाणा प्रदेशमे आता है, और इससे यह भी प्रमाणित होता है कि खडी बोली भाषा और साहित्यका इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना उत्तर भारतकी अन्य आधुनिक भाषाओका है: 'राउल वेल' मे ही टक्कीके अतिरिक्त हमे पहली बार राउली (वर्त्तमान पश्चिमी राजस्थानी), मालवी, मराठी, गौडी (बगला), ब्रज तथा अवधीके प्राचीनतम प्रामाणिक रूप उपलब्ध होते है। किन्तु इस 'राउल वेल' की टक्की और दक्खिनीके बीचकी कडी उपलब्ध नही थी। बीचकी एक महत्त्वपूर्ण कडी जिसपर आश्चर्य है कि विद्वानोका ध्यान अभीतक नही गया था, गोरखनाथकी वाणियाँ हैं। गोरखनाथकी वाणियो और उनकी भाषा का रूप सन्दिग्ध माननेके कारण ही कदाचित् उनकी ऐसी उपेक्षा हुई है। किन्तु विश्लेषणसे यह निश्चित रूपसे प्रमाणित हुआ है कि गोरखनाथकी वाणियोकी भाषा पूर्वीय हिन्दी न होकर—जैसा सामान्यत माना जाता है—पुरानी खडी बोली है (दे० आदिकालीन हिन्दी भाषा'—प्रस्तुत लेखक-द्वारा लिखित और शीघ्र प्रकाशनीय)। उसके बादकी और अधिक साहित्यिक कडी प्रस्तुन 'कुतब शतक' है, जिससे न केवल पुरानी खडी

बोलीके भाषा-रूप पर एक अपेक्षाकृत अधिक पूर्ण प्रकाश पडा है, वरन् जिसने एक तो यह प्रमाणित कर दिया है कि ललित साहित्यमे खडी बोलीका भी प्रयोग उतना ही प्राचीन है जितना कि उत्तरी भारत की किसी भी बोली या भाषाका, और दूसरे यह कि सूफी प्रेमाख्यानक काव्योके जिस रूपसे हम अब तक परिचित रहे है, उससे भिन्न और किंचित् स्वतन्त्र रूप भी प्रचलित था, जो इस रचनाके साथ पहली बार प्रकाशमे आ रहा है और इस दृष्टिसे यह रचना दाऊद की 'चादायन' के समकक्ष है।

पाँच वर्षोंसे अधिक हुए जब मै राजस्थान विश्व-विद्यालय जयपुर मे था, वहाँ के हिन्दी विभागके एक प्राध्यापक और 'राजस्थानी भाषा और साहित्य (सं० १५००–१६५०)' के विद्वान् लेखक डॉ० हीरालाल माहेश्वरीसे इस महत्त्वपूर्ण कृति और इसके वार्त्तिक तिलककी सर्वाधिक प्राचीन प्रतियोकी, जो बीकानेरके अनूप सस्कृत पुस्तकालयमे है, अपने लिए की हुई प्रतिलिपियाँ प्राप्त हुई। उदय पुर जाने पर श्री मुनि कान्तिसागरसे उसकी एक अन्य प्राचीन प्रति प्राप्त हुई। इसी प्रकार श्री मुनि जिनविजयजीकी कृपासे जोधपुर-के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानसे उसकी एक अन्य प्राचीन प्रति मिल गयी। रचना-की कतिपय अन्य प्रतियाँ भी मिलती है, किन्तु सर्वाधिक प्राचीन प्रतियाँ ये ही हैं, और रचनाके पाठ-सम्पादनके लिए ये पर्याप्त लगी, इसलिए इनकी सहायता-से रचनाका यह सस्करण उस समय मैंने तैयार कर भारतीय ज्ञानपीठको दे दिया था। सन्तोष है कि अब यह प्रकाशित हो रहा है।

इस संस्करणकी आधार-भूत प्रतियोके लिए बीकानेरके अनूप सस्कृत पुस्तकालयके अधिकारियो और डॉ० हीरालालका, जोधपुरके प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान और उसके सम्मान्य निदेशक श्री मुनि जिनविजय जी, एव उदयपुर के श्री मुनि कान्तिसागर जीका हृदयसे आभारी हूँ, जिनकी सौजन्यपूर्ण सहायता-के बिना यह कार्य असम्भव था, और, प्रकाशनके लिए भारतीय ज्ञानपीठके अधिकारियोको धन्यवाद देता हूँ, जिन्होने कृतिको इस सुन्दर रूपमे प्रकाशित किया है।

मुशी विद्यापीठ,
आगरा,
३. ९. १९६६

—माताप्रसाद गुप्त

विषय-सूची

■ ■

भूमिका

●

प्रतियाँ

इस रचनाकी सर्वाधिक प्राचीन प्रतियाँ तीन है, जो निम्नलिखित है—

१. (अ०) अनूप सस्कृत पुस्तकालय, बीकानेरकी प्रति, जिसकी पुष्पिका निम्नलिखित हैं—

"इति कुतब शतक समाप्त। सवत् १६३३ वर्षे। आषाढ मासे कृष्ण पक्षे सप्तम्या तिथौ सोमवासरे घटिका ४८ पल० ४ उत्तर भाद्रपद नामयौमध नक्षत्रे घटी ६० पल० सौभाग्य नाम्नि योगे घटी ३ पल ३ राज्य श्री सग्राम तत्पुत्र राज्य श्री साँवलदास पठनाय कुतब दी शतक लिलिखे। वा० श्री कनक प्रभस्यान्तेवासिना मु० सकतारवेन। वाचकत्थरनन्द तात् प्रतीहार पुरत्थ वाचकस्य श्रेयासिभूयासि भूयासु।"

रचनाकी प्राप्त प्रतियोमे सबसे अधिक प्राचीन यही है और पाठकी दृष्टिसे भी यह सबसे अधिक प्रामाणिक है। वर्तमान सम्पादन इसकी एक सावधानीसे की हुई प्रतिलिपिके आधारपर किया गया है जिसे राजस्थान विश्वविद्यालयके हिन्दी विभागके प्राध्यापक डॉ० हीरालाल माहेश्वरीने किया था। इस प्रतिलिपिके लिए मै उनका हृदयसे आभारी हूँ। प्रतिके प्रारम्भ और अन्तके पत्रोके छायाचित्र भी उन्हीके सौजन्यसे प्राप्त हुए है।

२. (ध०) : प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुरकी प्रति, जो उसके सम्मान्य निदेशक श्री मुनि जिनविजयजीके सौजन्यसे प्राप्त हुई थी, और जिसकी पुष्पिका निम्नलिखित है—

"इति श्री कुतबशत समाप्त। श्री सवत् १६७० वर्षे वैशाख मासे कृष्ण पक्षे शनिवारे। श्री मन्नागपुरीय तपागच्छ स्वच्छातुच्छ सुगच्छ समुल्लासन सजल जलधराणा श्री अमरकीर्ति सूरीश्वराणा शिष्य धर्मकीर्तिनालेखित श्री चेला साकरसी श्री नागपुर मध्ये।"

यह रचनाकी दूसरी प्राचीनतम प्रति है और पाठकी दृष्टिसे पर्याप्त महत्त्व-की है। इस प्रतिके उपयोगके लिए मै श्री मुनिजीका आभारी हूँ।

३. (का०) : मुनि श्री कान्तिसागर, उदयपुरकी प्रति जिसकी पुष्पिका निम्नलिखित है—

"इति श्री कुतब दी साहिबा बात सम्पूर्णम्। शुभ भवतु। रामाय नम। श्रीकृष्णाय नम। कल्याणमस्तु।"

यह प्रति भी पाठकी दृष्टिसे महत्त्वकी है। इसमे लेखन-काल नही दिया हुआ है, किन्तु यह उपर्युक्त दूसरी प्रतिके आसपासकी ही लिखित प्रतीत होती है। इस प्रतिके उपयोगके लिए मै मुनि कान्तिसागरजीका आभारी हूँ।

रचनाकी कुछ और भी प्रतियाँ है जो अभी तक प्राप्त नही हो सकी है। वे उपर्युक्तसे बादकी है और पाठकी दृष्टिसे भी कदाचित् इतनी महत्त्वपूर्ण नही है जितनी उपर्युक्त है। यदि ये प्राप्त हो सकी तो अगले सस्करणमे उनका उपयोग भी किया जा सकेगा।

उपर्युक्तके अतिरिक्त रचनाके एक वार्तिक तिलक (टीका) का पाठ परिशिष्टके रूपमे दिया जा रहा है और उसकी भाषाका विश्लेषण किया जा रहा है। इसकी एकमात्र प्रति अनूप सस्कृत पुस्तकालय, बीकानेरमे है और सवत् १७२२ के लिखे हुए एक गुटकेमे है। इसकी भी प्रतिलिपि उपर्युक्त डॉ० हीरालाल माहेश्वरीसे प्राप्त हुई थी, जिसके लिए मै पुन उनका आभारी हूँ।

पाठ-सम्पादन

रचनाकी उपर्युक्त तीन प्रतियोमे-से अ० स्वतन्त्र पाठ-परम्पराकी है, क्योकि उसकी एक भी विकृति अन्य दोमे नही मिलती है।

ध० तथा का० कही-कहीसे सकीर्ण सम्बन्धसे सम्बन्धित है और एक पाठ-परम्पराकी प्रतियाँ है, यह उनकी निम्नलिखित विकृतियोसे प्रमाणित है

१ रचनाके प्रारम्भमे दोनोमे एक गद्य वार्तिक है। ध० मे यह अपेक्षाकृत छोटा और का०मे बडा है। यह अ०मे नही है और निश्चित रूपसे प्रक्षिप्त है। ध० वाले विवरण ही का०मे अपेक्षाकृत अधिक विस्तार और अधिक अतिरजित रूपमे दिये गये है। उदाहरणार्थ—

(१) ध० का 'एक लाख टका' का०मे 'दो लाख टका' हो गया है।

(२) सम्पादित पाठके १०३२ तथा १०४१ दोनोमे पूर्ववर्ती चरणसे अन्त साम्यके कारण छूटे हुए हैं।

कुछ और छोटे-मोटे विकृति-साम्यके स्थल पाद-टिप्पणियोमे दिये गये पाठान्तरोमे देखे जा सकते है। ये स्थल अधिक नही है। इसलिए यह विकृति या सकीर्ण सम्बन्ध बहुत निकटका नही ज्ञात होता है। इसे कही-न-कही दूरका ही होना चाहिए। फिर भी इतने विकृति-साम्यसे यह प्रमाणित हो जाता है कि दोनो प्रतियोकी पाठ-परम्परा एक-दूसरेसे स्वतन्त्र नही है।

इस सम्बन्धको यदि हम व्यक्त करना चाहे तो इस प्रकार कर मकते है
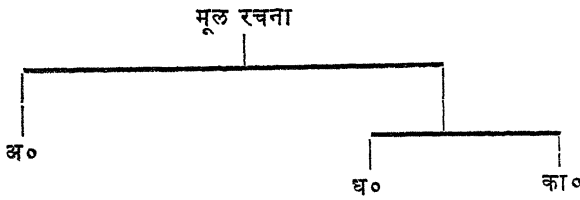
फलत पाठ-निर्धारणमे अ० के साक्ष्यको उतना ही महत्त्व मिला है जितना ध० और का० के सम्मिलित साक्ष्यको। जहाँपर तीनो प्रतियोका पाठ समान है, उसे स्वीकार किया गया है। जहाँपर अ० का पाठ ध० और का० मे-से किसीसे भी मिल जाता है, अन्य पाठको अस्वीकार कर अ० के पाठको स्वीकार किया गया है, जहाँपर अ० मे एक पाठ है और ध० तथा का० मे कोई अन्य पाठ, वहाँपर जो पाठ अपेक्षाकृत प्राचीनतर और अधिक सम्भव ज्ञात हुआ है, वह स्वीकार किया गया है। जहाँपर तीनो प्रनियाँ तीन पाठ देती है वहाँपर प्राय अ० के पाठको स्वीकार किया गया है। अ० के पाठको यह विशिष्ट मान्यता उसकी प्रतिकी अपेक्षाकृत अधिक प्राचीनताके कारण तो दी ही गयी है, उसका पाठ भाषा आदिकी दृष्टिसे रचनाके, प्राचीन रूपको अधिक सुरक्षित रखे हुए प्रतीत हुआ है, इसलिए भी उसको यह महत्त्व दिया गया है।

परिशिष्टमे वार्त्तिकका पाठ उसकी एकमात्र प्राप्त सवत् १७२२ की प्रतिके अनुसार दिया गया है। उसका सम्पादन भविष्यमे उसकी और प्रतियाँ मिलने-पर ही किया जा सकेगा।

रचनाका नाम

रचनाका नाम उसके पाठके बीचमे कही नही आता हे। प्रयुक्त प्रतियोके अन्तमे आनेवाले नाम है अ० 'कुतब शतक' तथा 'कुतबदी शतक', ध० 'कुतब शत', का० 'कुतबदी साहिबा बात'। निर्धारित पाठ-सम्पादनके सिद्धान्तोके अनुसार नाम 'कुतब शतक' होना चाहिए, क्योकि वह अ० मे तथा अपर शाखाकी प्रति ध० मे 'कुतब शत' के रूपमे मिलता है। रचना वात-वन्ध (वार्ता-बन्ध) काव्यरूपमे प्रस्तुत की गयी है, इसलिए उसका अन्य नाम 'कुतबदी साहिबा बात' भी सार्थक हे।

किन्तु प्रयुक्त तीनमे-से एक प्रतिमे भी छन्दो या अनुच्छेदोकी सख्या सौ या उसके आसपास नही है। इनकी सख्या किसी प्रतिमे आदिसे अन्त तक किसी क्रमसे दी हुई भी नही है। केवल अ० मे कुछ दूर तक क्रम-सख्या दी हुई है, बादमे पुन नयी क्रम-सख्याएँ है। उसमे ४७ तक तो क्रम-सख्या एक है, उसके बाद विभिन्न प्रसगोमे आनेवाले दोहोकी क्रम-सख्याएँ मात्र है और वे स्वतन्त्र है। शेष प्रतियोमे इतना भी नही मिलता है। इसलिए इन ४७ अनुच्छेदोकी सख्या-पद्धति देखकर शेष-रचनामे भी अनुच्छेदोकी क्रम-सख्याएँ प्रस्तुत सम्पादकने लगा दी है। इस प्रकार सख्याए देनेपर रचना ११४ अनुच्छेदोमे समाप्त हुई हे, और उसका 'शतक' नाम भी सार्थक हो सका है।

वार्त्तिकमे अनुच्छेद भी नही थे। आगेके विवेचनोमे उसके स्थल-निर्देशके लिए तथा यो भी उसका अभिप्राय ठीक-ठीक समझनेके लिए प्रस्तुत लेखकने उसे १६ अनुच्छेदोमे बॉट दिया है।

रचयिताका नाम

रचनामे कही भी रचयिताका नाम नही आता है और न उसकी प्रतियोकी पुष्पिकाओमे। विभिन्न प्राप्त प्रतियोके पाठोमे इतनी समानता है कि रचना लोक-साहित्यकी वस्तु नही मानी जा सकती है। हे वह किसी एक कविकी कृति ही, यद्यपि उसका नाम हमे ज्ञात नही हो सका है। सम्भव है आगेकी खोजोसे वह ज्ञात हो सके।

यह रचयिता सूफी रहा होगा, यह स्पष्ट रूपसे ज्ञात होता है, क्योकि रचनाका स्वर आदिसे अन्त तक सूफी है, जैसा हम आगे देखेगे। किन्तु यह कवि हिन्दी काव्यकी परम्पराओमे निष्णात था—यह उसकी रचनासे भली-भाँति प्रमाणित है। दोहोकी रचना तो उसने इतनी कुशलता और कला-

त्मकताके साथ की है कि वे अपभ्रशके सर्वोत्कृष्ट दोहोकी परम्परामे रचे हुए प्रतीत होते है। उसके गद्यकी भाषा सुथरी बोलचालकी हिन्दुई है, जिसमे तुकोके लिए आग्रह है, जो मध्ययुगीन गद्यकी विशेषता थी।

वार्त्तिक-लेखकने भी अपना नाम वार्त्तिकमे नही दिया है और न प्रतिकी पुष्पिकामे उसका नाम आता है। सम्भव है आगेकी खोजोसे ही इस 'वार्त्तिक-तिलक'के रचयिता और उसके पूर्ण पाठका भी ज्ञान हो सके।

रचना-तिथि

रचनामे रचना-तिथि नही दी हुई है: उसके प्रारम्भ और अन्त केवल कथाके प्रारम्भ और अन्तके है, रचनाके विषयके नही। रचनाकी प्राचीनतम प्रति सवत् १६३३ की है। यदि रचना इसके ७५-७६ वर्ष पूर्वकी भी मानी जाये तो इसका रचना-काल सन् १५०० ई० के आसपास होना चाहिए। भाषाकी दृष्टिसे रचना कदाचित् इससे भी पूर्वकी होनी चाहिए, जैसा हम आगेके विवेचनसे देखेगे, बादकी नही। मेरा अपना अनुमान है कि रचना पन्द्रहवी शती ईसवीकी होनी चाहिए। उत्तरी भारतकी पुरानी खडी बोलीकी कोई तिथियुक्त रचना प्राप्त होनेपर ही इसकी रचना-तिथिके सम्बन्धमे और अधिक निश्चयपूर्वक कुछ कहा जा सकेगा।

वार्त्तिक तिलककी तिथि भी इसी प्रकार अनिश्चित है। उसकी प्राप्त प्रति सवत् १७२२ की है। उसका रचना-काल यदि प्रतिलिपि-तिथिसे ७५-७६ वर्ष पूर्व माना जाये तो वह सवत् १६४७ के आसपास पडेगा। इस प्रकार यह ईसवी सोलहवी शतीके अन्तकी होनी चाहिए। उसकी भाषा, जैसा हम आगे देखेगे, 'कुतब शतक' की भाषासे कमसे कम एक शती बादकी होनी चाहिए, यह तथ्य भी इसी अनुमानकी पुष्टि करता है। इसकी रचना-तिथिका भी अनुमान उत्तरी भारतकी खडी बोलीकी कोई तिथियुक्त रचना प्राप्त होनेपर अधिक निश्चयात्मकताके साथ हो सकेगा।

कथा-सार

[अनु० १ ११] दिल्लीका एक दावर (न्याय-कर्ता) दानिशमन्द नामका था। उसकी एक ढाढिनी थी, जिसका नाम देवर (देवल) था। दावरकी एक कन्या थी, जिसका नाम साहिबा था। इस साहिबासे प्रीति होनेके कारण उसे उसने एक बडा वचन दे डाला और वह यह था कि उसका विवाह वह शाहज़ादेसे करायेगी। दिल्लीमे फीरोजशाह राज्य करता था, जिसका शाहज़ादा कुतुबुद्दीन

जवान हो गया था, किन्तु उसे अब भी अपनी लज्जालु माता बीबी बिवानांके द्वारा नियुक्त पाँच सौ वृद्धा परिचारिकाओसे घिरा रहना पडता था। ये परिचारिकाएँ इसलिए नियुक्त थी कि शाहजादेपर बाहरकी दुनियाका कोई असर न हो। यह देखकर उस शाहजादेसे मिलनेकी उस ढाढिनीने एक युक्ति निकाली। उसने मालिनका वेष किया और एक छाबड़ेमे पक्की नारगियॉ लेकर वह शाहजादेके पास पहुँच गयी। शाहजादेने उससे नारगियॉ क्रय कर पाँच सोनेके टके दिये और नारगियॉ दो-दो चार-चार करके उसने उपस्थित परिचारिकाओको बाँट दी। उस समय वह मालिन चली गयी, किन्तु थोडी देर बाद वह लौटकर पुन आयी और अपनी नारगियॉ वह शाहजादेसे यह कहकर वापस मॉगने लगी कि वे एक-एक मुहरकी दावर दानिशमन्दकी कन्याके द्वारा मॉगी जा रही थी। शाहजादेने कहा कि वे खायी जा चुकी थी। ढाढिनीने कहा कि वह एक नही सुन सकती थी और यदि नारगियॉ वापस न हुई तो वह सुलतानसे कहने जा रही थी। शाहजादेने पूछा कि वह कौन-सी और कैसी कन्या थी जो इतने अच्छे दाम दे रही थी। इस प्रश्नपर उस मालिनने अपना वास्तविक परिचय दिया और शाहज़ादेको अपना अभिप्राय बताया। तदनन्तर वह उस कन्याका नख-शिख वर्णन करने लगी और उसने उसके अगोका विशद वर्णन किया। शाहजादेने विश्वास नही किया और कहा कि यदि वह उसे साथ ले चलकर उस कन्याको दिखाती तो उसे ही विश्वास हो सकता था। मालिनने कहा कि वह जुमरात (बृहस्पति) को मिल सकती थी यदि राजकुमार फकीर बनकर दावरके यहॉ पहुंचता और अन्य फकीरोके साथ उबले हुए गरम चावलोकी याचना करता। यह कहकर वह चली गयी।

[अनु० २०-३७] जुमरात आयी और शाहजादा जुमा मसजिदमे पहुँचा, जो दावरके घरसे मिली हुई थी। वहॉ उसने देखा कि झुण्डके झुण्ड दरवेश आये हुए थे जिनमे-से बहुतेरे दावरके घरसे उसकी सहन तक किसीकी प्रतीक्षा कर रहे थे। किन्तु उसे देखकर वे तमाम दरवेश यह कहते हुए इधर-उधर दौडने लगे कि खुदाका फरिश्ता आया हुआ था। इस हलचलका लाभ उठाकर शाहजादेने उनके छोडे हुए फकीरी उपकरणोको धारण कर लिया और जिस समय सुलतान नमाजके लिए गया, वह दावरके दरवाज़ेपर जा पहुचा और वह भी अन्य दरवेशोके साथ उबले हुए गरम चावलोकी याचना करने लगा। दावरकी कन्या वहॉपर उस ढाढिनीके साथ उपस्थित थी। ढाढिनीने शाहजादेको उसे दिखलाया। दोनोने एक-दूसरेको देखा और वे पारस्परिक आकर्षणसे आबद्ध हो

गये। शाहजादेने सोचा कि वह दावरकी उस कन्याको भगा ले जाये और इसके कन्धे भी फडकने लगे। ढाढिनी यह ताड गयी। उसने सोचा कि यदि यह उसे भगा ले गया तो लोग उसे ही बदनाम करेंगे, इसलिए उसने शाहज़ादे-से सकेतोमे कहा कि कुछ समय तक वह और प्रतीक्षा करे, किन्तु इसी अवसर-पर शाहज़ादेके प्रति दावरकी कन्याने अपने प्रणयका निवेदन किया और शाह-ज़ादेने वचन दिया कि वह आमरण उससे प्रेम करेगा।

[अनु० ३८-५१] नमाज़ खत्म करके सुलतान और उसके पीछे-पीछे शाह-जादा वापस हुए। शाहज़ादा अपनी माता बीवी बिवानाँके महलमे गया और वहीपर पर्यंकमे पड गया। उसकी दशा बिगड चली। सवेरा हुआ। वैद्य उपचार करने लगे, दानिशमन्द झाड-फूंक करने लगे, किन्तु कोई लाभ न हुआ। दानिशमन्दोको देखकर वह चिल्ला पडता, 'अरे यह साहिबाँकी नजर है, साहिबाँकी नजर है, (जिसके कारण) न मैने रात जानी है और न फजर (प्रात') जाना है।" बादशाहने सुना तो वह कुपित हुआ कि दरवेशोने उसपर नजर कर दी है। किन्तु बीवी बिवानाँको विश्वास यह था कि फकीरोंकी दुआओसे वह चगा हो जायेगा और उसने प्रचुर धन शाहज़ादेपर वारकर फकीरोको दिया। फिर भी शाहजादेकी दशामे कोई सुधार न हुआ और जब भी कोई दानिशमन्द उसकी झाड-फूंकके लिए आता और अजलिमे पानी लेता, शाहजादा उससे कह उठता, "अरे यह साहिबाँकी नजर है, साहिबाँकी नजर है, जिसके कारण न मैंने रात जानी है और न फजर (प्रात) जाना है।" इसी प्रकार कई दिन बीत गये और कोई युक्ति न चली।

[अनु० ५२-७१] उधर साहिबाँ भी खाटपर पड गयी। ढाढिनीसे उसने नाडी देखनेको कहा तो ढाढिनीने उसकी नाडी देखकर बताया कि उसके दिल-मे एक और दिल आ गया था, जिसके कारण उसकी नाडी दुहरी चल रही थी: एक तो उसकी थी और दूसरी शाहजादेकी थी, जिसके परिणामस्वरूप जब खाना उसने गरम खाया, शाहज़ादेका दिल झुलस गया, ये दोनो दिल जुड़े ही रहनेवाले थे और जुडे हुए ही इस लोकसे विदा होनेवाले थे। यह कहकर उसने वैद्याका वेष बनाया और सुलतानके दरबारमे उपस्थित हुई। लोग उसे वहाँ ले गये जहाँपर शाहजादा पडा हुआ था। ज्योही उसने अजलिमे पानी लिया, शाहजादा पुन पूर्ववत् चिल्ला उठा। वैद्याने उसे ढाढस दिलाया और नाडी दिखानेको कहा। राजकुमार उसे पहचान गया। वैद्याने रोगका निदान कर लिया और रोगीने भी उस रोगको स्वीकार कर लिया। शाहजादेने नेत्र

खोल दिये। बिवानाँ द्रव्य लुटाने लगी। वैद्याने ढोलक मँगायी और उसकी तालपर वह गाने लगी। जैसे ही उसने एक दूहा गाया, शाहजादा उठ बैठा। दूहेमे उसने बताया कि साहिबाँके हृदय-सरोवरमे अब वह हस बनकर केलि कर रहा था, किन्तु उसकी दशा अब शोचनीय हो रही थी। यह सुनते ही शाहजादेका शरीर काँपने लगा। बीबी बिवानाँने इसका कारण पूछा तो वैद्याने बताया कि शाहजादेके दिलमे एक और दिल आ गया था, इसलिए ऐसा हो रहा था और कहा कि शाहजादेके स्वस्थ होनेका एकमात्र यही उपाय था कि दोनो दिल मिल जाते, अन्य कोई युक्ति काम नही कर सकती थी। उसने बताया कि शाहजादा और दावर दानिशमन्दकी कन्याने एक-दूसरेको जुमा मसजिदमे भरपूर देख लिया था, जिससे दोनोकी यह हालत हो गयी थी। बिवानाँने जाकर यह बात सुलतानसे कही। सुलतान दौडा-दौडा दावरके पास आया और उससे बताया कि शाहजादा जी गया है, पर अब उसे अपनी कन्याका विवाह उसके साथ करनेके लिए प्रस्तुत होना चाहिए। दावरने इस प्रस्तावको सहर्ष स्वीकार किया।

[अनु० ७६-८८] विवाहकी तैयारी हुई। बीबी बिवानाँके साथ शाहजादा दावरके दरवाजेपर पहुँचा। इस अवसरपर ढाढिनी अपने सच्चे रूपमे उपस्थित हुई और उसने सेहरा गाया। विवाह सम्पन्न हुआ। साहिबाँ शाहजादेके साथ विदा होकर उसके घर गयी। सवेरा होनेपर ढाढिनी शाहजादेके घरपर गयी और उसने दोनोके प्रथम रात्रिके मिलनका वर्णन गीतोमे किया। अब दोनोके दिन नित्य-नवीन केलिके साथ व्यतीत होने लगे।

[अनु० ८९-१००] ऋतु बदली। वसन्तके बाद ग्रीष्मका आगमन हुआ। प्रासादको ग्रीष्मोचित उपकरणोसे सज्जित किया गया। शाहजादेको भोग और योगमे समान रुचि थी। गायक कभी उसे भोगके गीत सुनाते, कभी योगके, यह सोचकर कि न जाने उसे दोनोमे कौन-से रुचें। एक दिन दो नटिनियाँ आकर खडी हुईं। एक योगिनीका स्वाग किये हुए थी और दूसरी भोगिनीका। योग और भोगके समर्थनमे दोनोने अपने-अपने दूहे कहे और फिर वे चली गयी।

[अनु० १०१-११४] रात्रि होने लगी थी, शाहजादेको कुछ ठण्ड-सी लगी। उसने साहिबाँसे आसव मँगाया। साहिबाँ दौडी-दौडी गयी। दो बार उसने प्याले भर-भर कर दिये। तीसरी बार जब वह प्याला भरने गयी, उसके हाथमे प्याला गिरकर टूट गया। वह डरती हुई सासके पास गयी। शाहजादेने देखा कि वह देर तक नही आयी थी, तो वह उसकी खोजमे निकला। फर्श›

पर बिछी हुई अबीरमे उसे साहिबाँके पदचिह्न दिखाई पडे और साथ ही वह प्याला भी टूटा मिला। वह हँस पडा और मनमे उसने कहा, "मैने करोडकी खैरात करनेका अपने मनमे सकल्प किया था और यह खूब रहा कि पत्थरोका यह प्याला टूट गया और उससे डरकर मेरी पत्नी भाग गयी।" इतनेमे उसकी माँ वहाँ आ पहुँची। शाहजादा सकुच गया। माँने कहा, "साहिबाँने हमे खून [करनेका जैसा जुर्म] दिया।' शाहजादेने पूछा, "माँ, खून क्या ?" माँने कहा, "साठ लाखका क्रय किया हुआ प्याला टूटा पडा है; और क्या खून ?" शाहजादेने कहा, "माँ, मै तो सुलतान फीरोजशाहका उत्पन्न किया हुआ और समरकन्दकी शाहजादी बीबी बिवानाँका जन्म दिया हुआ हूँ—साहिबाँका न्याय [भले ही] उसके पिता दावरके पास हुआ करे।" यह कहकर जब उसने लाल-निर्मित दो पात्र मँगाये तो न जाने कितने आ गये और एक-एक करके उन सबको उसने माताके सिरपर वार—फेरकर तोड डाला। उस समय सारी धरती लाल हो रही थी। सुलतानने सुना। उसने जौहरियोको बुलाकर उनकी कीमत अँकवायी। उन्होने बताया कि तीन अरब बासठ करोड बारह लाखकी सम्पत्ति कुतुबुद्दीनने गँवा दी थी। सुलतानने हुक्म दिया कि टुकडे भण्डारमे रख दिये जाये। कुतुबुद्दीनने निवेदन किया, "उत्तराधिकारमे टुकडे पाऊँगा तो तुम्हारा नाम न चलेगा।" सुलतानने कहा, "तू जो चाहे सो करे, यह सब तेरा ही है।" सुल्तानने हुक्म दिया, वे टुकडे गवाक्षोपर चुन दिये गये, फकीर उन्हे लूटने लगे और बाजे बजने लगे।

रचनाकी ऐतिहासिकता

रचनामे वर्णित घटनाएँ किसी इतिहास-ग्रन्थमे नही मिलती हैं। उसमे सुलतान फीरोजशाह, बीबी बिवानाँ, शाहजादा कुतुब, दावरकी कन्या साहिबाँ, दावर दानिशमन्द तथा देवर ढाढिनीके नाम आते है। अलग-अलग फीरोजशाह और कुतुब नामके एकसे अधिक सुलतान और शाहजादे इतिहासके पृष्ठोमे मिलते है, किन्तु किसी सुलतान फीरोजके साथ शाहजादेके रूपमे किसी कुतुबका नाम उनमे नही मिलता है। इतिहासमे प्राय उन्हीके नाम आते है जो या तो गद्दीपर बैठते है, या तो किसी प्रकारका इतिहासमे उल्लेखनीय कार्य करते है। इस कथामे कुतुब ऐसा कोई कार्य नही करता है जो ऐतिहासिक महत्त्वका हो, और न सुलतान फीरोजशाह ही कोई ऐसा कार्य करता है जो उसकी जीवनीमे उल्लेखनीय महत्त्वका माना जा सकता। इसलिए यदि वर्णित घटना अथवा रचनाके पात्रोपर इतिहाससे कोई प्रकाश नही

पडना है तो आश्चर्य न होना चाहिए। किन्तु इससे यह न समझना चाहिए कि वर्णित कथा सर्वथा कल्पित है। रचनामे कल्पनाके पुटके साथ वास्तविकताके तत्त्व होगे, ऐसा स्पष्ट ज्ञात होता है। किन्तु कथा, कथा ही है, इतिहास नही। इसलिए यदि इतिहासके साक्ष्य उसकी पुष्टि न करते हो तो भी रचनाका महत्त्व एक ऐतिहासिक लघुकथाके रूपमे निश्चित है और निस्सन्देह यह रचना मुगल साम्राज्यकी स्थापनाके पूर्वके भारतीय वायुमण्डलमे पनपते हुए सूफी दर्शनसे प्रभावित इस्लामी जीवनपर अच्छा प्रकाश डालती है। यह कहना अनावश्यक होगा कि हिन्दीमे अपने ढगकी यह अकेली रचना है, भारतकी अन्य भाषाओमे भी कदाचित् ऐसी रचनाएं कम ही होगी।

रचनाकी कथा-सम्पत्ति

रचनाकी कथा-सम्पत्ति साधारण है। नायक-नायिकाके जीवनकी दो ही घटनाएँ सामने रखी गयी है एक है उनका पति-पत्नीके रूपमे बँधना और दूसरी है कुछ बहुमूल्य पात्रोका तोड-तोडकर फकीरोमे वितरित करना।

पहली घटनाके लिए कवि एक चतुरतापूर्ण युक्तिका आश्रय लेता है वह एक ढाढिनीकी कल्पना करता है जो मालिन, वैद्या और ढाढिनी—तीन रूपोमे कथाको आगे बढानेमे समर्थ होती है। मालिन बनकर वह शाहजादेसे साहिबाँके रूपकी चर्चा करती है और उसे उससे मिलनेके लिए प्रेरित करती है, शाहजादेके विरहोन्मादका वैद्या बनकर उपचार करती है और जब दोनो विवाह-द्वारा एक दूसरेको प्राप्त करते है, सेहरा और मिलन-यामिनीके गीत गाकर उनका मनोरजन करती है। इसके बाद ही वह कथासे अलग हो जाती है। इस प्रकारकी दूतीकी कल्पना मध्ययुगमे बहुत प्रचलित रही है, और रचनामे इस विषयमे कोई विशेषता नही दिखाई पडती है। उसके द्वारा किया हुआ रूप-वर्णन, और नायिका तथा नायकके रोगोका निदान अवश्य सरस और विनोदपूर्ण है।

दूसरी घटनाके लिए नायिका-द्वारा एक बहुमूल्य प्यालेके फूटने और उसके कारण उसकी सासके कुपित होनेके प्रसग जुटाये गये है। इस दूसरी घटनाके पूर्व कविने दो छोटे-छोटे सकेत और रखे है जो आनेवाली घटनाके लिए पाठकको तैयार करते है एक तो गायको-द्वारा योग (ज्ञानयोग) और भोग (प्रेमयोग) के गीतोका गाया जाना—और यह सोचकर गाया जाना कि दोनो विषयोमे-से पता नही कौन-सा नायकको रुचे, दूसरा दो नटिनियोका

योगिनी और भोगिनीके वेषमे उपस्थित होना और अलग-अलग ज्ञानयोग तथा प्रेमयोगकी प्रशंसा करना। पहला संकेत तो सर्वथा अविकसित है, किन्तु दूसरा कलात्मकताके साथ विकसित किया गया है, जैसा हम आगे देखेंगे। कुछ ऐसा लगता है कि शाहजादा इस समय जीवनके एक मोडपर आ गया था। जीवन-की सार्थकताके सम्बन्धमे वह चिन्ता करने लगा था, यद्यपि यह चिन्ता कवि-की रचनामे सर्वथा मूक है। इसी समय प्यालेके अकस्मात् टूटने और उसपर एक बवण्डर खडे होनेकी घटना घटित होती है, जो उसकी परमार्थ-वृत्तिको और भी उद्दीप्त कर देती है और वह एक अप्रत्याशित ढगसे अपनी उस वृत्तिको अभिव्यक्ति प्रदान करता है।

नायकके चरित्रमे यह मोड किस प्रकार आता है, इसको अकित करनेका कविने कोई प्रयास नही किया है। उपर्युक्त घटनाके बाद शाहजादेका जीवन किस दिशामे प्रवाहित होता है, यह जाननेकी भी उत्सुकता पाठकके मनमे बनी रह जाती है। वर्णित घटना तो उसके परमार्थ-पथका प्रथम चरण मात्र है।

दोनो घटनाओमे कोई सम्बन्ध भी नही ज्ञात होता है। कुछ-कुछ ऐसा लगता है जैसे विवाह होना या न होता, दूसरी घटना किसी-न किसी रूपमे कोई-न-कोई बहाना पाकर अवश्य ही घटित होती। नायकके परमार्थ-पथमे नायिकाका प्राप्त होना उसका प्रथम चरण भी नही प्रतीत होता है। नायिका-को प्राप्त करनेमे नायकको बाधा होती है और उसको अनायास न पानेके कारण वह विरहोन्माद-रुग्ण हो जाता है, नायककी इतनी ही तपस्या उसकी प्रेम-साधनामे दिखाई पडती है।

किन्तु यह निश्चित ज्ञात होता है कि कथा एक सूफी कथा है, जिसमे प्रेम-योग और ज्ञान-योगका अच्छा पुट दिया गया है। कथाका पूर्वार्द्ध सम्भवतः प्रेम-परक है और उत्तरार्द्ध सम्भवत त्याग-परक, यद्यपि यह भी बहुत स्पष्ट नही है।

पर यह सूफी कथा अन्य सूफी कथाओसे किंचित् भिन्न है, फारसकी सूफी कथाओमे प्रेमपात्रकी निष्ठुरता और प्रेमीके उससे मिलनकी दुर्गमता अत्यधिक अतिरंजनाके साथ चित्रित की जाती है। इस कथामे यह अतिरंजना नही है। अवधीकी सूफी कथाएँ या तो विवाह और मिलन-यामिनीपर समाप्त हो जाती है, और या तो दुःखान्त रूपमे नायक-नायिकाके जीवनकी समाप्ति अकित करती है। इस कथामे यह भी नहीं है। इस कथाकी अन्तिम घटना जीवनमे दान और त्यागका महत्त्व अकित करती है।

सब-कुछ मिलाकर रचनाकी कथा-सम्पत्ति सामान्य ही ज्ञात होती है, उसका महत्त्व इस बातमे है कि अबतक प्राप्त हिन्दीकी सूफी प्रेमकथाओको पढकर उनके सम्बन्धमे जो हमारी धारणा बनी थी, इस कथाको पढकर उसमे कुछ सशोधन करना आवश्यक प्रतीत होता है । ऐसा ज्ञात होता है कि अवधी क्षेत्रमे सूफी प्रेमकथाओकी एक परम्परा विकसित हुई थी जबकि हिन्दी-की अन्य बोलियोके क्षेत्रोमे उससे किंचित् भिन्न सूफी काव्य-परम्पराएँ विकसित हुई थी, जिनपर आगेकी खोजोसे अधिक प्रकाश पडेगा ।

रचनाकी भाव एवं विचार-सम्पत्ति

रचनाकी प्रथम घटना भाव-सम्पत्ति प्रधान है । नायक और नायिका परस्पर दर्शनके अनन्तर विरह-व्याधिसे रुग्ण हो जाते है । नायिका तो फिर भी मर्यादाओके भीतर रहती है, नायक मर्यादाओका अतिक्रमण कर जाता है । वह उन्मादग्रस्त हो जाता है और तभी स्वस्थ होता है जब उसे नायिकाके प्राप्त होनेका विश्वास हो जाता है । किन्तु प्रेमयोगकी इस कथामे भाव-कल्पना सामान्य है । आशा और निराशाके द्वन्द्वो, उद्देश्य-प्राप्तिके मार्गकी बाधाओ और उनसे सघर्ष करनेकी भावनाओका विकास कथामे नही किया गया है । पहले कविने सकेत तो किया है कि सुलतान दोनोको मिलने न देगा

"साहिजादे साहिब्बियाँ साहि करदे लल्लि ।
लज्जा लोयिन नच्चणा लोइ हसदे कल्हि ॥३४॥"

तथा

"साहिबा साहिब्या बिरह जइ जीवदा जाइ ।
लज्जा लीक उलघणी सिर पर पेरो साहि ॥६५॥"

किन्तु आगे इस सूत्रका विकास बिलकुल नही किया है । यह ठीक है कि उन्माद-ग्रस्त पुत्रके स्वस्थ होनेका एकमात्र उपाय उसकी मनचाही प्रेयसीका प्राप्त होना था, यह समझकर ही सुलताननें उक्त सम्बन्धके लिए अपनी स्वीकृति दी होगी, किन्तु एक क्षणके लिए भी तो इस प्रकारकी विवशताका भाव कविने सुलतानमे अकित किया होता । जैसे ही शाहजादेकी माता उससे पुत्रके रोगका कारण बताती है और उसका उपाय करनेको कहती है, सुलतान कह उठता है :

"जहमतियाँ क्या जाणइ ।
जिमी आकास तल होइ तउ हम आणइ ।"

और जब वह कहती है "दावल दानसवद कइ आगलि बिछाओ ऊली।" तो सुलतान बिना एक शब्द कहे उस युक्तिको मान लेता है "सुलताण मानी। दीन दुणिया एक ठउड होत जाणी ॥७३" और वह नगे पैरो दावरके पास दौडा जाता है। पुत्रका स्नेह बडी चीज है और उसके जीवनके लिए बहुत-कुछ किया जा सकता है। किन्तु यह सब रचनामे ऐसे ढगसे हुआ है जैसे पुत्र-मोहने सुलतानको एकदम विवेक शून्य कर दिया हो। यह अस्वाभाविक तो नही है, किन्तु रचनामे भाव-सम्पत्तिकी कमीको अवश्य व्यजित करता है।

दूसरी घटना विचार-प्रधान है। इसे कविने कुछ अधिक योग्यताके साथ पल्लवित किया है। वसन्त ऋतु समाप्त हो गयी है और ग्रीष्मका आगमन हो गया है। प्रासाद ग्रीष्मका सामना करनेके लिए सज्जित किया गया है। यह ग्रीष्म तप और साधनाका प्रतीक ज्ञात होता है। शाहजादेके सम्मुख जो गीत गाये जा रहे है वे या तो योग (ज्ञानयोग) के है और या तो भोग (प्रेमयोग) के। नटिनियाँ योगिनी और भोगिनीका वेष धरकर उसके समक्ष उपस्थित होती है और दूहे कह-कह कर अपने-अपने पक्षका समर्थन करती है। इसी समय नायिका (उसकी प्रेयसी)से प्याला टूटनेका प्रसग घटित होता है और शाह-जादेकी परमार्थ-वृत्ति एक उग्र रूप ग्रहण कर प्रकट हो पडती है। जहाँ वह प्याला टूटा देखता है वही प्रेयसीके पग चिह्न भी देखकर वह समझ जाता है कि इसी कारण वह भाग गयी है और वह हँस पडता है। वह कह उठता है

"षइर करदा कोडि कहि मन अप्पणइ विचारि।
षूब स पत्थर भग्गिया बिभग न भग्गी नारि ॥१०७"

और कवि कहता है .

"साहिजादा हसता हइ। पग देषि देषि ऊलसता हइ। १०८"

पुनः माँ जितनी ही इस सम्पत्ति-विनाशपर क्षुब्ध होती है, उतना ही पुत्र और भी उस सम्पत्ति-विनाशमे सलग्न होता है। पिता जब उसके टुकडोको सग्रहके लिए आदेश करता है, वह इसका भी विरोध करता है और उन्हे फकीरोमे वितरित करनेका अनुरोध करता है जिसे पिता स्वीकार करता है। कहना न होगा कि दूसरी घटनासे यह प्रकट है कि रचनाका प्रमुख सन्देश त्याग और दानका है जिनका सूफी धर्म और इस्लाममे बडा महत्त्व है।

रचनाकी काव्य-सम्पत्ति और शैली

रचनामे दो स्थल कविताकी दृष्टिसे कलापूर्ण है, एक तो ढाढिनी-द्वारा

किया हुआ नायिकाका रूप-वर्णन और दूसरा नटिनियोके द्वारा प्रस्तुत किया हुआ ज्ञानयोग और प्रेमयोगका तुलनात्मक स्तवन। नीचे हम इन दोनोकी विशेषताओपर दृष्टिपात करेगे।

रूप-वर्णन शिख-नख प्रणालीका है। मानवीका रूप-वर्णन इसी प्रणालीपर इस देशमे किया जाता रहा हे। कवि केशोमे यह रूप-वर्णन प्रारम्भ करता है

"केसा के कसि वधियाँ के छुट्टियाँ रुलति।
जाणे सर्पनि अप्पणा चर चिट्टुआ भषति ।। ११"

नायिकाके केश दो प्रकारके है कुछ तो लम्बे हैं जो वेणीके रूपमे कसकर गूँथे हुए है, और कुछ छोटे है उस वेणीमे नही गुँथ सके है और जो हवाके लगनेसे हिल रहे है। दोनो प्रकारके ये केश एक-साथ ऐसे लग रहे है मानो वे छोटे बाल सर्पिणीके रेगते हुए चेटुँए हो जिन्हे वह पकड-पकडकर खा रही हो। केशोकी ऐसी गतिशील उपमा अन्यत्र देखनेमे नही आती हे। वेणीमे न आये हुए छोटे-छोटे बाल हिल रहे है, इसलिए रेगते हुए सर्पिणीके चेटुँओमे उनकी तुलना उपयुक्त ही है, किन्तु इसके आगे भी, वे वेणीसे मिले हुए है, इसलिए उनके सम्बन्धमे यह उक्ति कि मानो सर्पिणी उन्हे खा रही है, एक अत्यन्त जीवन्त कल्पना है। सर्पिणी अपने बच्चोको खा जाती है, यह प्रसिद्ध ही है।

अब वह नायिकाके नेत्रोका वर्णन कर रहा हे, जो यौवनागमके कारण चचल हो रहे हे। वह कहता है

"अगन चद निलाटियाँ भू तर नच्चइ नयण।
जाणे आण वधाइयाँ आगम हुदा मयण ।।१२।।"

"उस अगनाका ललाट चन्द्रमाके सदृश है और उसकी भौहोके नीचे उसके नेत्र नाच रहे है, इसलिए वे ऐसे लगते है मानो वे मदनके आगमनपर बधाइयाँ लेकर प्रस्तुत हो रहे है।" बधाइयाँ लानेकी एक विशेष प्रथा हिन्दी प्रदेशमे प्रचलित रही है। किसी हर्षके अवसरपर—यथा पुत्रोत्पत्ति और पुत्र-विवाह पर—बहने या बेटियाँ उपहार लेकर आती है। यह उपहार गाजे-बाजेके साथ लाया जाता हे। पास-पडोसकी स्त्रियोको लेकर वे गाती-बजाती-नाचती चल पडती हे और इस उत्सवपूर्ण आयोजनके साथ अपने उपहार प्रस्तुत करती है। नायिकाके नेत्रोमे जो चपलता आ गयी है, उसकी कल्पना कवि इसी प्रकारके नृत्यसे करता है जो मदन नरेशके आगमनपर बधाइयाँ लाते हुए प्रस्तुत किया जा रहा है। अपने प्रिय शासकके आगमनपर नेत्रोका

उपढौकन लेकर नाचते हुए उसकी सेवामे उपस्थित होनेकी यह कल्पना बेजोड है।

अब वह नायिकाकी वेणीसे लटकनेवाले एक मोतीका वर्णन कर रहा है। वह कहता है

"वइंणी बधि बिलबिया मुत्ती हेक रुलति।
जाने सीप सुमुष्षीया कठइ कीर चुणति ॥१३॥"

"वेणीसे बँधकर लटकता हुआ मोती (नायिकाके नेत्रोके मध्य नासिकापर) इस प्रकार लोट रहा है मानो जिस सीपी-पुटमे-से वह निकला हो उसके समक्ष ही (बैठकर) पासका शुक उसे चुगनेका यत्न कर रहा हो।" उस मोतीके प्रसगमे नेत्रोकी सीपियोसे तुलना कितनी सरस हो गयी है। मोतीके शुक-द्वारा चुगे जानेकी कल्पना नवीन नही है, नासिकाभरणोमे पडे हुए मोतीके सम्बन्धमे यह कल्पना प्राय मिलती है। किन्तु इस कल्पनामे विशेषता यह है कि उस सीपीके फल्कोकी समक्षतामे ही यह मोती शुक-द्वारा चुगा जा रहा है जिससे इसकी उत्पत्ति हुई है। व्यजना यह है कि यह बात उस सीपीको कितनी खल रही होगी जिसकी सुकुमार सन्तानकी यह दुर्गति उसके सामने हो रही है!

अब कवि नायिकाके किंचित् उभडते हुए उरोजोका वर्णन कर रहा है। वह कहता है

"ही उट्ठा दिट्ठाइयाँ दीहा पचइ च्यारि।
जाणे नी नारिगियाँ बे अँगीया मझारि ॥१४॥"

"उसके उरोज चार-पाँच दिनोसे ही उठते हुए दिखाई पडने लगे है और वे ऐसे है मानो हू-ब-हू दो नारगियाँ उस नायिकाकी कचुकीमे रख दी गयी हो।" यह कल्पना अवश्य लोक-साहित्यमे बहु प्रयुक्त है और इसमे कोई उल्लेखनीय नवीनता नही है।

अब वह नायिकाकी कटिका वर्णन करता है। वह कहता है

"लक धनक्कइ मुट्ठियाँ बिधि रमु रगी बाम।
हत्था काम स पीउ भउ पिय हत्था भउ काम ॥१५॥"

"उस कामिनीकी कटिको मुट्ठीमे लेकर विधाताने जो उसे रस (प्रेम) मे रँगा, उसीसे कामके हाथ पीले पड गये और उस कामिनीको हाथोमे करनेकी कौन कहे, काम स्वय उस कामिनीके हाथो (वश) मे हो गया।" खिलौने

प्रायः कटि-प्रदेशसे ही पकडकर रगे जाते हैं, अत कामको भी जब अपने मादक रंगसे उस कामिनी-पुत्तलिकाको रँगना हुआ होगा, उसकी कटिको उसने अपने हाथकी मुट्ठीमे लिया होगा, किन्तु परिणाम यह हुआ कि उस नायिकाके शरीरके सहज वर्णसे उसकी हथेलियाँ पीली पड गयी और वह स्वय भी उस कामिनीके वशमे हो रहा। यह कल्पना भी सरस प्रतीत होती है।

अब वह नायिकाके चरणो और उसकी उँगलियोका वर्णन कर रहा है। वह कहता है :

"पाइ स रत्ता पकजा अङ्गी अगुलियाह।
जाणे राई वेलिया फूली नीकलियाह ॥१६॥"

"उसके चरण लाल पकज हैं और उनकी उँगलियाँ ऐसी सुन्दर है मानो राईकी गाछमे निकली हुई फलियाँ हो।" कहना नही होगा कि राईकी नयी निकली हुई फलियोसे पैरोकी उँगलियोकी तुलना सुन्दर है, नवीनता तो इसमे है ही।

रूप-वर्णनके ये दोहे गिनतीमे छ हे, किन्तु इनमे-से कई ऐसे हे जिनमे कल्पनाकी जीवन्तता और व्यजकना अद्भुत मात्रामे मिलती है। सभी उपमाएँ भारतीय जीवनसे ली गयी है, यह भी दर्शनीय है।

योगिनी और भोगिनीका स्वाँग करके नटिनियोने जिस ज्ञानयोग और प्रेमयोगका स्वरूप प्रस्तुत किया है, उसमे उन्होने एकमात्र नेत्रोका माध्यम लिया है। एक प्रेमके नेत्रोका वर्णन करती है और उनका बखान करती है तो दूसरी ज्ञानके नेत्रोका वर्णन करती है और उनका बखान करती है। भोगिनी कहती हे

"लोयण ते लोइदिए जे दिट्ठा ही पिट्ठ।
पाथर सर जिम कढ्ढीइ नेह समट्ठा निट्ठ ॥९८"

"लोचन तो वे ही देखते हुए होते है जो देखते-देखते प्रविष्ट हो जाते है और जो स्नेहसे ऐसे दृढ और पुष्ट होते है कि उनको निकालना (चुभे हुए) शरोको सीधा निकालने जैसा (कठिन) होता है।" अनीयुक्त बाणोको सीधे निकालनेकी कठिनाईसे नेत्र-बाणोके निकाले जानेकी कठिनाईकी तुलना अच्छी बन पडी है।

योगिनी कहती है

"लोयण ते लोयदीइ जे लोअदे जग्ग।
अप्पा काम कमच्छुला बहु देषदा कग्ग ॥९३"

"लोचन तो वे देखते हुए होते है जो जगत् (की वास्तविकता) को देखते होते है, अपने-आपको तथा अपने कर्म और कर्मछलको बहुतेरे काग भी देखते होते है।" स्वार्थी और कर्मछल-पटु व्यक्तिकी तुलना कागसे स्वाभाविक लगती है।

भोगिनी कहती है

"लोयण ते लोइदीए जे पेम सु बुट्ठइ धार।
रीझडिया झड मडिकइ सव्वसु अप्पए हार ॥९४"

"लोचन तो वे देखते हुए होते है जो प्रेम धाराकी वृष्टि करते है और रीझ जानेपर उसकी झडी लगाकर सर्वस्व अर्पित करनेवाले होते है।" प्रेमी नेत्रोकी तुलना उन मेघोसे कितनी सटीक बैठी है जो झडी बाँधकर अपना सब-कुछ दे डालते है! प्रेम सच्चा वही है जो प्राणीको निःस्वार्थ त्यागके लिए प्रेरित कर सके।

योगिनी कहती है :

"लोयण ते लोइदीए जे लोडदे अप्प।
तीन्ही तिनि अवत्थडी कउ ण करदा वप्प ॥९५"

"लोचन तो वे देखते हुए होते हैं जो आत्मको देखते होते है। उनकी तीन ही अवस्थाएँ—जाग्रत, स्वप्न और तुरीय होती है, वे कभी भी अपने-आपको ढँकते नही है—सुषुप्तिको नही प्राप्त होते है। इस कथनमे कोई कल्पना नही है, कहनेके ढगमे अभिव्यक्तिकी सरलता-मात्र है।

भोगिनी कहती है.

"लोइण ते लोइदीए जो अणरत्ता ही रत्त।
दीया देह स दज्झिया तोइ पडदा पत्त ॥९६"

"लोचन तो वे देखते हुए होते है जो (मादक द्रव्यादिसे) रक्त न होते हुए भी रक्त होते है, जिनका देह (पतिगोकी भाँति) दीपकसे दग्ध हो गया होता है तो भी जो (दीपकके पास) पहुंचकर उसमे पडते ही है।" प्रेमीकी पतिगेसे तुलना पुरानी ही है, किन्तु दीया देह स दज्झिया' मे नवीनता है : पतिगे अनुभव कर रहे है कि दीपक उनको झुलसाकर अधमरा कर चुका है फिर भी वे सहर्ष उसपर अपने जीवनका उत्सर्ग करनेके लिए पहुँच ही जाते है।

योगिनी कहती है :

"लोयण ते लोइंदीए जे जुग जोइ अरत्त।
माया ओढण भुल्लिया जाणि कलाली मत्त ।।९७"

"लोचन तो वे देखते हुए होते है जो जगत्को अरक्त भावसे देखते हैं और मायाको उसी प्रकार भूले होते है जैसे कलाली मत्त व्यक्तिको भूल जाती है।" कलालीके द्वारा मत्त व्यक्तिकी उपेक्षा और योगी द्वारा की गयी जगत्की उपेक्षा-की तुलना अच्छी बन पडी है।

भोगिनी कहती है :

"लोइण ते लोइदीए जे अंबा ही अब्ब।
ज्युं हीउ पाउस रगीया ताइ मिलदा सब्ब ।।९८"

"लोचन तो वे देखते हुए होते है जो जलवाले बादलोके सदृश होते है—जैसे ही पावस उनके हृदयको अनुरंजित कर देता है, वे (जलके रूपमे अपना सर्वस्व अर्पण करनेको) इकट्ठे हो जाते है।" जलसे आर्द्र बादलोसे प्रेमी नेत्रो-की तुलना अवश्य ही सरस बन पडी है।

योगिनी कहती है ·

"लोइण ते लोइदीए जे जाणि परदा गत्त।
को घरिया पर लग्गीया रत्ता तोइ अरत्त ।।९८"

"लोचन तो वे देखते हुए होते है जो गत (गये) से जान पडते है। यदि किसी घडी वे घर (गृहस्थी) से लगे भी हुए होते है तो वे उससे रक्त (अनुरक्त) (ज्ञात) होते हुए भी अरक्त ही होते है।" इस कथनमे कोई वैशिष्ट्य नही है, किन्तु अन्तिम शब्दोमे विरोधाभासका किंचित् चमत्कार है।

भोगिनी कहती है

"लोइण ते लोइदीए जे रगइ करियाह।
वीकर बाजि न चड्डही ज्युं गज बंगरियाह ।।१००"

"लोचन तो वे देखते हुए होते है जो एकमात्र रग (प्रेम) करते है और प्रेम करके जो फिर कुछ भी और नही करते है, जैसे घोड़ेपर चढनेवाला व्यक्ति घोडेको वेचकर विकृत अगवाले हाथीपर नही चढता है।" प्रेमके मार्गपर लग जानेके बाद और किसी मार्गमे लगनेकी तुलना घोडेको बेचकर विकृत अंगवाले हाथीपर चढनेसे अच्छी जमी है।

स्पष्ट है इस स्वागमे भोगिनी (प्रेमयोगिनी) के कथन जैसे चमत्कारपूर्ण है वैसे योगिनी (ज्ञानयोगिनी) के नही। दूसरी बात यह द्रष्टव्य है कि ये कथन उत्तर-प्रति-उत्तरके रूपमे नही है, अर्थात् एकका दूसरेसे कोई सम्बन्ध नही है, दोनो अपने-अपने पथका गुणगान करते है और एक-दूसरेसे स्वतन्त्र रूपसे करते है। एकसूत्रता यदि है तो इतनी ही कि नेत्रोंको लेकर दोनो-के कथन किये गये है और विशेषता है तो इसी बातमे है कि वे एक रोचक शैलीमे किये गये है। प्रेमयोग और ज्ञानयोगका मध्ययुगीन द्वन्द्व इस रचनामे नेत्रोके माध्यमसे प्रस्तुत किया गया है। सगुण भक्तिमार्गी कवियोकी रचनाओमे ही यह द्वन्द्व अभीतक मिला था, सूफी तथा निर्गुण भक्तिमार्गी कवियोकी रचनाओमे यह द्वन्द्व पहली बार मिल रहा है।

अन्य प्रसगोमे भी कही-कही उक्तियाँ सरस बन पडी हे, यथा नायिकासे नायकके मिलानेके प्रयासकी तुलना द्राक्षावल्लीको आमसे लगानेसे की गयी है .

"साहिब सूं सूरत्तिया हू मालन इहि कम्म।
जिउ किउ दक्खा वल्लिया जउ र विलग्गइ अब ।।९"

फकीरका वेष धारण करनेकी बात सीधी न कहकर फकीरीके उपकरणोको धारण करनेके रूपमे कही गयी है

"साहिजादे षथा न होउ धरि षल्लरी षवेहि।
डीवी डाग सु सिगरी कमरि करदा लेहि ।।१८"

नायक-नायिकाके परस्पर तन्मय होनेकी बात एक ही जीवन-रसको दो पात्रोमे विभक्त करनेके रूपमे कही गयी है

"साहिजादे साहिब्बीया ढढ्ढिनि ढुढे मझि।
जाणे जीवण इक्करा बे पुड कीन्हा भंजि ।।२९"

नायिकाको निर्निमेष देखनेकी नायककी चेष्टाके सम्बन्धमे कहा गया हे कि मानो कोई सिंह किसी मृगीको इस प्रकार देख रहा हो कि उसको आँखोके मार्गसे ही निगलना चाहता हो·

"साहिब सारगी नयण सारगा रिपु साहि।
अषी अषिनु वट्टडी जानि गिलदी ताहि ।।३१"

प्रेमकी अग्निमे बिना तपे हुए प्रेम-पात्रको प्राप्त करनेकी तुलना इस कच्चे भोजन करनेसे की गयी है जो पेटमे विकार उत्पन्न करता है

'तू रस कामन्धा भूषिया साहित बीचु अजाणु।
साई हाथ पकावना षाहि न कच्चा षान ॥३२'

आशाके चेतना-शून्य होनेकी तुलना पावसके आगमनपर बिना बादलोके दर्शन-के भी मयूरोके नाच उठनेसे की गयी है

"आसा अन्धी ढढ्ढिनी भोग करदे गोर।
"गज्जइ गयण न नच्चिया पावस हुंदे मोर ॥३३"

नायिकाका जीवनार्पणका सकल्प नायकपर उसके शरीरको वारनेकी आकाक्षा-द्वारा व्यक्त किया गया है

"ढढ्ढिनिया हिय हत्थ लइ आरतिया करि हेरि।
साहिजादे सिर उप्परइ मो साहिबिया तन फेरि ॥३६"

विरह दु खसे पीडित नायकके सन्तप्त होनेका एक विनोदपूर्ण कारण असगतिके रूपमे यह दिया गया है कि नायिकाके गरम भोजन करनेमे नायकका हृदय सन्तप्त हो जाता है

"ढढ्ढणि ढोरी अपिया साहिबा समुहियाह।
नइ तत्ता पान षाइया दज्झइ साहि हियाह ॥५४"

वरके सेहरेके लिए डूबते हुए सूर्य और वधूकी माँगमे पडे हुए सिन्दूरके लिए सन्ध्याकी कल्पना की गयी है

"वर सिर सोहइ सेहरा वरणी सिरि सिन्दूर।
जाणे सझ मुमष्षिया सिन्धु सपत्ता सूर ॥७८"

वरकी उँगलीमे पडी हुई अँगूठी और वधूके हाथमे पड़ी हुई चूडियोके रक्तवर्णके बारेमे यह कल्पना की गयी है कि मानो कामने किसीके हृदयमे चुभे हुए अपने बाण निकाले हो

"वर कर वीर अगूठिया वरणी कर करि लाल।
जाणे हीयइ हिलगिया काम स कढ्ढइ साल ॥७९"

ढाढिनीके द्वारा गाये जाते हुए सेहरेकी तुलना वर्षासे तृप्त हुए सारसोकी मधुर ध्वनिमे की गयी है

"आसिक अषत भणदीया सेष सुणंदा सार।
जाणे जलहर वुट्ठिया सारसु कीया सुठार ॥८०"

इसी प्रकार और भी अनेक स्थल मिलते हैं जहाँपर रचना अपनी टटकी और कभी-कभी अछूती उक्तियोके द्वारा पाठकको मुग्ध कर लेती है। फलत रचना छोटी होते हुए भी काव्य-रसिकोको चमत्कृत करती है। गद्यमे भी जहाँ-तहाँ ऐसी उक्तियाँ आती है, किन्तु ऐसे स्थल इने-गिने ही है। रचनाकी सरसता उसके पद्यात्मक अशोके कारण ही है। ऐसा लगता है कि गद्यके अनुच्छेद केवल कथाके सामान्य विवरणो तक सीमित रखे गये है, जहाँपर सरस कल्पनाकी सम्भावना प्रतीत हुई है, कथन और वर्णन अनायास दूहोमे किये गये है। साथ ही यह द्रष्टव्य है कि समस्त अप्रस्तुन विधान भारतीय जीवनसे लिया गया है।

इन दूहोमे कविकी शैली अत्यन्त सशक्त है। एक स्थानपर भी उसने कविको धोखा नही दिया है। प्रत्येक शब्द अपने स्थानपर जमकर बैठा हुआ इस प्रकार चमक रहा है जैसे आकाशमे नक्षत्र चमकते है। शब्दोमे प्राणवत्ता स्वत झलकती है, यद्यपि शब्द चयन सहज ढगसे किया हुआ है। रचनामे कही भी प्रयास परिलक्षित नही होता है, यह रचनाकी बड़ी भारी विशेषता है।

गद्याशकी शैलीमे यह विशेषता नही हे। हिन्दीके मध्ययुगमे गद्य उपेक्षित रहा है, यह सभी क्षेत्रोमे देखा जा सकता है। सरस उक्तियाँ और कल्पनापूर्ण कथनोके लिए पद्यका ही सहारा वार्त्ता-बन्ध काव्य-रूप तकमे भी लिया जाता रहा है। और कदाचित् ऐसे वार्त्ता-बन्ध काव्योका पद्य उनके गद्यकी अपेक्षा अपने प्रामाणिक रूपमे अधिक सुरक्षित भी रहा है, क्योकि गद्य भागको आवश्यकताके अनुसार बडा या छोटा किया जाता रहा है जबकि पद्य अपनी सरसता और स्मरण-सुलभताके कारण बहुत-कुछ मूल रूपमे सुरक्षित रखा गया है।

— माताप्रसाद गुप्त

'कुतबशतक' की हिन्दुई

'कुतबशतक' की भाषा

रचनामे उसकी भाषाका नाम नही आया है और न उसके वार्त्तिक तिलकमे, किन्तु वार्त्तिक तिलकमे निम्नलिखित अंशोमे अन्य भाषाओके साथ हिन्दुईका नाम उसके कुछ अधिकतर वर्तनी-विषयक विकल्पोके साथ आया है ·

"बीबी बीवाना कौ फारसी। हिंदुही। च्यारो ही हकीकति। तरीक वेद की। कुरान की। षुदायकी इन्याइति रहम सौ। दिलमही थी। पैदा हुई।"—(वार्त्तिक तिलक, अनु० ६)

"·····बडा भाई ह्यंदू छोटा भाई मुसलमान। ह्यदूई मौं पडित नाम राषौ। सोइ नाम षूब। तब पडिता आपणा सास्त्र देष्या। तब साहिजादा कुतबदीन नवल नाम नजरि आया।"—(वही, अनु० ११)

"ह्यदूगी तुरकी कुरान भी हाजरि हुऐ अवलि पुरान वाला बोला साहिजादे सलामति बहुत षुब सायति का वक्त है एक निवाला उटायए होम करानेवाला बोला ए साहिजादे बहुत षूब सायति का वक्त है घुंट एक ठंढा आब पाणी की लीजिए।—(वही, अनु० १५)

पहले उद्धरणमे 'हिंदुही' का नाम भाषाके रूपमे 'फारसी' के साथ लिया हुआ है। दूसरे उद्धरणमे 'ह्यंदूई' हिन्दुओकी भाषाके रूपमे उल्लिखित हुई है, जिसमे शाहज़ादेका नाम रखनेके लिए पण्डितोसे अनुरोध किया गया है। तीसरे उद्धरणमे 'ह्यंदूगी' 'तुरकी' भाषाके साथ लायी गयी है जैसे प्रथममे वह 'फारसी' के साथ लायी गयी है। इससे स्पष्ट है कि वार्त्तिक तिलकके लेखकके समयमे दिल्लीके शिष्ट समाजमे दो ही भाषाएँ प्रमुख रूपसे प्रचलित थी, हिन्दुओमे 'हिंदुही', 'ह्यदूई' या 'ह्यंदूगी' और मुसलमानोमे 'फारसी' अथवा 'तुरकी'। 'ह्यंदूई' वर्तनी-भेदसे 'हिंदूई है, तथा 'हिंदुही' और 'ह्यदूगी' उसीके अन्य विकल्प हैं। कुछ लेखकोने 'हिंदुकी' और 'हिंदकी' भी इस भाषाके नाम बताये है, किन्तु नागरी लिपिमे उद्धृत किये गये इन तीनो विकल्पोसे स्पष्ट है कि उसका एक नाम

'हिदुगी' रहा होगा, जिसको फारसी लिपिमे लिखनेपर 'हिदुकी' या 'हिदकी' पढा गया होगा ।

'कुतबशतक' की भी भाषा यही है। यद्यपि उसका लेखक उसको किस नामसे जानता था यह निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता है किन्तु इस बातकी सम्भावना यथेष्ट मानी जा सकती है कि वह भी इसको इसी नामसे जानता रहा हो। अन्तर दोनोकी भाषाओमे इतना ही है कि रचना-की भाषा तिलककी भाषामे अपेक्षाकृत प्राचीनतर है। दक्षिण भारतकी मध्य-युगीन मुसलमानी रियासतोमे इसी भाषाको साहित्यिक भाषाके रूपमे स्वीकार कर लिया गया था और इसमे साहित्य-रचना भी की गयी थी। बादमे इसे ही 'दक्खिनी' कहा जाने लगा था ।

आगेके पृष्ठोमे 'कुतबशतक' और उसके वार्त्तिक तिलककी भाषाओका विश्लेषण अलग-अलग कर लेनेके बाद दोनोका तुलनात्मक अध्ययन किया जायेगा। इसी प्रसगमे दक्खिनीके मिलते जुलते रूपोके साथ भी इनके रूपो-की तुलना की जायेगी। दक्खिनीका अध्ययन काफी पूर्णताके साथ किया जा चुका है, किन्तु उत्तरी भारतकी पुरानी 'हिन्दुई'की जानकारी यथेष्ट रूपमे न होनेके कारण 'दक्खिनी' का अध्ययन प्रस्तुत करनेवाले लेखकोने दक्खिनी शब्द-रूपोके इतिहासके सम्बन्धमे कभी-कभी भ्रान्तियाँ भी की है और अनेक ऐसे रूपोको उन्होने पजाबी, राजस्थानी और अवधी तकका बताया है जो कि पुरानी खडी बोलीके थे। आगे इन भ्रान्तियोका निरा-करण यथास्थान किया जायेगा ।

कुतबशतकके शब्द-रूप

संज्ञा

संज्ञा : एक० (अविकृत रूप)

पुल्लिग शब्द सामान्यत प्रत्ययहीन रूपमे प्रयुक्त हुए है। उदाहरण देना अनावश्यक होगा ।

–उ : कही कहीपर अकारान्त शब्द कर्ता और कर्म कारकोमे –उ प्रत्यये-के साथ प्रयुक्त हुए है :

कर्ता – ओ ही 'हालु' (५०) ।

कर्म – 'दीनु' लीया दुनया विछोडी (२३), तत्ता 'भत्त' लाओ (२५), 'भत्तु' लइ आवनइ हइ (२६)।

–आं। आंह दो स्थानोपर अकारान्त शब्द कर्तामे –आ। आह प्रत्ययोके साथ प्रयुक्त हुए है

कर्ता – जउ जोरा तउ तुज्झ ही जउ गोरा तउ तुज्झ (३७), तइ तत्ता भात षाइया दज्झइ साहि 'हियाह' (५४)।

आगे हम देखेगे कि यह –आ प्रत्यय इकारान्त स्त्री० मे (–इया) मे परिवर्तित होकर बहुत प्रयुक्त हुआ है। यह अवधीके पु० –आ। –वा तथा स्त्री० –इयासे तुलनीय है बिहरत हिया करहु पिय टेका ('पद्मावत' छन्द ३५४), उ घोडवा कहाँ गा ? उ घोडिया कहाँ गइ ? यह –आ स्वार्थिक प्रत्यय ज्ञात होता है। –आहका –ह एक अतिरिक्त स्वार्थिक प्रत्ययके रूपमे जोडा हुआ लगता है। यह –ह पद्यो तक ही सीमित है, सो भी तुकोके लिए।

–इया कही-कहीपर अकारान्त पु० शब्द स्वार्थिक –इया प्रत्ययके साथ भी प्रयुक्त हुए है

जानेकी 'करतारिया' (१०), अगन चद 'निलाटिया' (१२), साहिब-साहि 'कुतुब्बिया' (६०)।

स्त्रीलिंग शब्द भी सामान्यत प्रत्ययहीन रूपमे प्रयुक्त हुए है, इनका भी उदाहरण देना अनावश्यक होगा।

–आं स्त्री० इ। ईकारान्त शब्दोको कही-कहीपर स्वार्थिक –आ प्रत्यय जोडकर –इया अन्त्य कर दिया गया है

साहिब सो 'सूरत्तिया' (१), साहिब सू 'सूरत्तिया' (९) जिउ किउ दक्खा 'वल्लिया' जउ र विलग्गइ अब (९) बे 'मालिनिया' दिट्ठाइया (१७), 'बीबिया' आई (२०), 'बीबिया' हरम द्वार धाई (२०), 'गुलाबिया' जागी (२१), 'ढढ्ढिनिया' सोना भला (३५), 'ढढ्ढिनिया' हिय हत्थ लइ (३६), 'बीबियाँ' सहित सुलताण जाण्या (४२)।

–इया : कही-कहीपर अकारान्त शब्दोमे भी स्वार्थिक –इया प्रत्यय जोडा गया है : साहि घरा साहिब्बिया जिण दिण्णिया सुजाणि – (६२)।

–आंह इसी प्रकार कही-कहीपर –आह स्वार्थिक प्रत्यय भी प्रयुक्त हुआ है पाइ स रत्ता पकजा अढ्ढी अगुलियाह (१६)।

इन स्वार्थिक प्रत्ययोके सम्बन्धमे वही कथन लागू होता है जो ऊपर पुल्लिग शब्दोके स्वार्थिक प्रत्ययोके बारेमे किया गया है ।

संज्ञा : बहु० (अविकृत रूप)

पुलिंग शब्दोके बहु० निम्नलिखित प्रकारसे बनाये गये है ।

–आ . अकारान्त शब्दोके बहु० एक० अविकृत रूपमे –आ लगाकर बनाये गये है . जाणै सपनि अप्पणा चर 'चिट्ठआ' भषति (११), 'केसा' के कसि बधिया (११), 'जोवणा' खूब हइ (४), 'हत्था' काम स पीउ भंउ पीय 'हत्था' भउ काम (१५), 'सज्जणा' जागे (७६), ढाहिया 'ढगा' (७६), निहसिया नीसाण 'नादा' (७६), नारिया 'नादा' (७६), वाए वज्जण 'वज्जणा' (८१) ।

–आं : इसी प्रकार वे –आ लगाकर भी बनाये गये है :

पाइ स रत्ता 'पकजा' (१६), लज्जा गउ जुअ 'जोवणा' (६१), मिलि 'सज्जणा' सचोल (८१) ।

दक्खिनी हिन्दीमे केवल –आ प्रत्यय मिलता है ।[१] ऐसा ज्ञात होता है कि –आ या तो परवर्ती है और या तो प्रतिलिपिकारोकी भूलसे –आके सानुनासिकके बिन्दुके छूटनेके कारण हो गया है ।

एक स्थानपर अकारान्त शब्दका बहु० –ह लगाकर भी बनाया गया है बारि 'ऊंछह' लगाये (९०) ।

–आन : दो स्थानोपर एक अकारान्त शब्दका बहु० –आन लगाकर बनाया हुआ है : 'दोस्तान दोस्तान' करि हस्तक्या दीनी, 'दोस्तान दोस्तान' तत्ता भत्तु लाओ (२५) । यह –आन फारसीका प्रत्यय प्रतीत होता है ।

–ए : आकारान्त संज्ञा शब्दोका बहु० –ए लगाकर बना है . पाच सोवनके 'टके' देवरइ घरे (४), मेरे 'दीदे' दूषण लग्ग (८), 'दीदे' घूरते हइ (२१), दीवे लग्गे (२४), साहिबा 'दीदे' उनइ (२७), 'दीदे' दिग्घ उचाइया (२८), साहिलादे के 'षवे' फुरकणइ लागे (३०), साहिजादइ आपणे 'कपरे' कीए (३८), 'दीदे' दुराए (४०), षान 'षानजादे' मलिक 'मलिकजादे' मीया 'मीया जादे'

---

१. दे० 'दक्खिनी हिन्दी' पृ० ४६, 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० २६६ ।

(४३), फेरिबे दस लाख 'टके' सिर उप्परइ (४९), इतनी करतइ 'कपरे' फेरे (५५), दीदह सुं 'दीदे' जोरे (५५), साहिजादे 'दीदे' न भरू (५७), सुणतइ ही 'लल्ले' किए (६७), दावल दाण स पूंगरी 'दीदे' दीठिहु मूरि (७१) दुनी के 'दीदे' ऊघरे (७४) 'गायणे' गावणइ लागे (७६), दोउ 'दूहे' कहे (९१), मागि बे लाल 'ढमरे' (१०९), 'वज्जे' वज्जत वज्जिया (११४)।

–ए : लगाकर बहु० बनानेकी यह प्रवृत्ति दक्खिनीमे भी इसी प्रकार मिलती है।[१] किन्तु डॉ० श्रीराम शर्माका कहना है कि "दक्खिनीमें राजा-राजे-जैसे प्रयोग मराठीका प्रभाव प्रकट करते है।"[२] यदि उनका आशय –ए लगाकर उपर्युक्त प्रकारसे बहु० बनानेके सामान्य नियमसे है, तो उनका यह मत ठीक नही है, प्रस्तुत रचनासे यह भलीभाँति प्रमाणित हो जाता है।

कही-कहीपर बहु० के लिए एक० रूप भी प्रयुक्त हुआ है जाणे सपनि अप्पणा चर 'चिंदुआ' भषति (११), भूतर नच्चइ 'नयण' (१२). 'पाइ' स रत्ता पकजा (१६), 'तबीब' तमाम सब सुलताण कोके (४४)।

स्त्री शब्दोके बहु० निम्नलिखित प्रकारसे बनाये गये है।

–या। यां, इया। इयां : अकारान्त शब्दोके बहु० –या। –इया, अथवा इया। इया लगाकर बने है

'बाडिया बेलिया' नयणे दिषावइ (३), दोस्तान दोस्तान कहि 'हस्तक्या' दीनी (२३), सुलताण 'निवाज्या' कीनी (३८), दाणसवदइ अपनइ अपनइ वरह की 'वाटचा' लीनी (३८), हस्तइ ही 'वात्या' कीया (३९), इतनी 'वात्या' करतइ साहिजादइ 'जहमत्या' कीन्ही (४१), 'आवाज्या' वाजी (५६), जिण ही जीय 'जहमत्तिया' (६६), क्या 'बातिया' निसीब (६८), 'जहमतीया' क्या जाणइं (७३), दरिया हिया 'तरंगिया' कउ ण गिलदा खेलि (८७)।

दक्खिनीमे भी यह प्रवृत्ति मिलती है, किन्तु या। इया प्रत्यय ही वहाँ मिलते हैं।[3] असम्भव नही कि प्रतिलिपि प्रमादके कारण –या। इयाका 'कुतबशतक' मे कही-कहीपर –या। इया हो गया हो।

---

१. वही।
२ वही।
३. 'दक्खिनी हिन्दी', पृ० ४७ तथा 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० ३००।

—इ · अकारान्त शब्दोके बहुवचन कही-कहीपर —इ लगाकर भी बनाये गये है, यह —इ परवर्ती —ए से तुलनीय है

'किताबइ' रही (३८)।

—या इकारान्त शब्दोके बहुवचन रूप —या जोडकर बनाये गये हैं

ढढि्ढण ढोरी 'अखिया' (५३), के दिन केही 'केलिया' (८७)।

इसी प्रकार, ईकारान्त शब्दोके भी—

पक्कीया 'नारिय्या' 'जभीर्या' भर्या (४), 'बेलिया' बकीया कर्या (४), साहिजादे आपणी 'जभीरिया' सुहगीया न बेचुगी (५), सु मुहर मुहर 'जभीरिया' मागती है हइ (५), मुहर मुहर 'जभीरिया' नकी पाछी ल्यावहु (५), पेरो साहि 'दुहाइया' (७), जाणे आण 'वधाइया' (१२), 'आरतिया' करि हेरु (३६), वर कर वीर 'अगूठिया' (७६)।

इकारान्त तथा ईकारान्त शब्दोमे -या लगाकर बहु० बनानेकी यह प्रवृत्ति दक्खिनीमे भी पायी जाती है[1]।

इकारान्त शब्दोके साथ पद्योमे —या के अतिरिक्त कभी-कभी स्वार्थिक —ह भी जुडा हुआ है

पाइ सरत्ता पकजा अङ्गी 'अगुलियाह' (१६), बे मालनिया दिट्ठाइया के सोनी 'गल्हरीयाह' (१७), लइ चलि 'सगरियाह' (१७)।

यह —ह एक अतिरिक्त स्वार्थिक प्रत्ययके रूपमे एक० पुल्लिग शब्दोमे भी प्रयुक्त हुआ है, यह हम ऊपर देख चुके है।

स्त्री० शब्दोमे भी कही-कहीपर बहु० के स्थानपर एक० रूप ही प्रयुक्त हुआ है, यह हम ऊपर एकवचन रूपोके प्रसगमे भी देख चुके है :

इतनी 'वात' करतइं (७६, ८९, ९०, ९१), दुइ 'नटिणी' आइ षरी हुई (९१)।

सज्ञा : एक० (विकृत रूप)

आकारान्त पुल्लिग शब्दोका —आ प्राय. —ए मे परिवर्तित हुआ है

'साहिजादे' कु जीयावणा (५१), साहिबा 'साहिजादे' कु वरणा (७५), 'साहिजादे' कु क्या सुरोग (९०), 'साहिजादे' कु ठड लागी (१०१),

१ वही।

'साहिजादे' सु कम्म (६), 'साहिजादे' सुं सइनान लर्‌या (५१), 'साहि-जादे' सु वषाणइ (७६), 'साहिजादे' के षवे फुग्कणइ लागे (३०), 'साहिजादे' दिल अउर दिल (६९), 'साहिजादे' की दूसरी वइरणि आई (५०), 'साहिजादे' कइ साथि गोर महि वाहणा (५१)।

किन्तु कही-कहीपर यह –आ –अइ। –ऐ मे भी परिवर्तित हुआ है· 'खानइ' की क्या चलावइ (४०), बे 'दीयै' की जाला (१०२)।

इन दोनोमे-से –अइ अपेक्षाकृत कदाचित् प्राचीनतर है। वही –ए मे बदल गया लगता है। दक्खिनीमे –ए रूप ही मिलता है।[1] किन्तु हो सकता है कि यह फारसी लिपि-मात्रमे उसका पुराना साहित्य मिलनेके कारण भी हो, क्योकि फारसी लिपिमे –अइ और –ए एक ही प्रकारसे लिखे जाते है।

अकारान्त पुल्लिग शब्द कभी-कभी अविकृत रूपमे भी प्रयुक्त हुए है

'मरणा' तइ का बुराई (१०६), 'दरिया' का गर्व वादे (४३), 'साहिजा' की साहिबा की (५३), 'जमा' की राति (१९)।

दक्खिनीमे भी यह प्रवृत्ति पायी जाती है।[2]

विकृत रूप-निर्माणकी उपर्युक्त प्रवृत्ति आकारान्त पुल्लिग शब्दो तक ही सीमित है।

संज्ञा : बहु० (विकृत रूप)

पुल्लिग . अकारान्त शब्दोका बहु० –आ : –आ अथवा –ह। –हु लगा-कर बना है

–आ : 'सादा' नइं वग्गे (२४), 'सादा' नइ वजावउ (७५), 'सादा' नइ वाजण लागे (११३)।

–आं . 'दुसमणा'के दिल जरे (७४), मानु चाद 'तारा' सु रिसानइ (१०९)।

अकारान्त शब्दोके बहु० –आ जोडकर दक्खिनी हिन्दीमे भी बनते रहे है।[3] हो सकता है कि प्रतिलिपि प्रमादके कारण ही 'कुतबशतक' मे –आ का –आ हो गया हो।

---

१. 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० ३०१।

२ वही, अनु० ३१६, तथा ३१६ के कुछ उदाहरण।

३ 'दक्खिनी हिन्दी' पृ० ४८, तथा 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० ३०१।

—ह । —हु बंदा 'बंदियहु' की बंदिगी देषणइ हु गया था (३९), दानिस-वदइ अपनइ अपनइ 'घरह' की वाट्या लीनी (३८), 'तबीबह' हाथ धरे (५१), 'इयारह' के हीए भरे (७४)।

स्त्रीलिग ईकारान्त शब्दोका बहु० कुछ स्थानोपर —न। नु लगाकर बनाया गया है :

साहिबा 'सहिन' क्या भरी है (२६), अषी 'अषिनु' वट्टडी साहि गिलदी ताहि (३१)।

दक्खिनीमे भी इस —न का प्रयोग मिलता है।[1]

संज्ञा — लिग-निर्माण :

पु० अकारान्त। आकारान्त शब्दोके स्त्रीलिंग —अ। —आ के स्थानपर —ई लगाकर बनाये गये है

आगइ दावल की 'पूगरी' हइ (५), साहिब सारी 'वत्तडी' (६), कुण स केही 'पूगरा' (७), जाणे आण 'वधाइया' (१२), 'फूल्ली' नी कलियाह (१६), अषी अषिनु 'वट्टडी' (३१), बीबी बीहन 'वत्तडी' (६९), दावल दान स 'पूगरी' (७१), दुइ 'नटिणी' आइ षरी हुई (९१), माया ओढण भुल्लिया जाणि 'कलाली' मत्त (९७)।

स्त्रीलिंग-निर्माणकी यह विधि दक्खिनीमे भी इसी प्रकार पायी जाती है[2]।

कभी-कभी पु० अकारान्त शब्दोका स्त्री० —नि। —नी जोडकर बनाया गया है

जाणे 'सपनि' अप्पणा चर चीदुवा भषति (११), तबीबानी तबीबानी' करि पुकारी (५६)।

यह प्रकृति दक्खिनीमे भी पायी जाती है[3]।

इ। ईकारान्त शब्दोका बहु० भी —नि। —नी। —न जोडकर बनाया गया हे, केवल पु० शब्दका इकार। ईकार अकारमे परिवर्तित हो गया है :

---

१. 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० २९०।

२. वही, अनु० ३०१।

३. वही।

'अग्गा 'मालनी' खुब हइ (४), बे 'मालनी' आइया करे (४), टुक एक गया 'मालनी' फिरि आई (५), साहिब सुं सूरत्तिया हूं 'मालन' इहि कम्म (९), जाणु साहिजादे की दूसरी 'वइरणि' आई (५०)।

दक्खिनीमे भी यह प्रवृत्ति पायी जाती है।[1]

कही-कहीपर कु० मे यह स्त्री० रूप केवल –नि। –नी जोडकर बनाया गया है :

ढढिनी। ढढिनि (रचनामे अनेक बार), 'ढढिनी' 'मालिनी' का वेष कर्या (४), अबे 'मालिनी' या तू इहि काम आई (९)।

दक्खिनीमे भी यह प्रवृत्ति पायी जाती है।[2]

कभी-कभी कु० मे एक ही शब्द (यथा माली>मालनी। मालिनी) उपर्युक्त दोनो रूपोमे मिलता है। यह प्रतिलिपिकारोके प्रमादसे हुआ भी सम्भव हो सकता है।

प्रथमा विभक्ति

–इ।इं : पुल्लिग एकवचनमे अकारान्त-आकारान्त शब्द सामान्यत –इ।इं लगाकर प्रथमाका विभक्तियुक्त रूप बनाते है, आकारान्त शब्दोका आकार ऐसी अवस्थामे अकारमे परिवर्तित हो जाता है

इते बीच 'साहिजादइं' किसऊ की डीवी चोरी (२३), 'साहिजादइ' आपणे कपरे कीए (३८), 'साहिजादइ' जहमत्यां कीन्ही (४१), 'तबीवइ' रोग जण्या (५८), 'साहिजादइ' कुमकुमइ वरषे भराए (९०), दाणसवद साहिजादीसु 'साहिजादइ' कह्या (१०१), रग पर रंग ऊढनी 'साहिजादइ' दीनी हइ (१०२), 'साहिजादइं' लीन्हा (१०२), टुक एक जातइ 'साहिजादइ' कह्या (१०६), जाणइं चंद 'वादलइ' छिपाया (१०८)।

–एाएं : कही-कही पर आकारान्त शब्दके –आ के स्थानपर ए।ए लगाकर भी प्रथमाके विभक्तियुक्त रूप बने है दोइ 'साहिजादे' अप्पणइ हत्थइ कीया (४), 'साहिजादे' चादरि सिर उपरि लीनी (२२)।

–इं : ईकारान्त शब्दोका प्रथमा विभक्तियुक्त रूप –इ जोडकर बना है : 'रोगीइ' रोग मान्या (५८)।

---

१. वही।

२. वही।

५

–इ : पुल्लिग बहुवचनमे अकारान्त शब्दोके साथ भी –इ प्रत्यय लगाकर प्रथमाका विभक्तियुक्त रूप बना है

'दानिसवदइ' अपनइ अपनइ घरह की वाट्या लीनी (३८)।

किन्तु ऐसे उदाहरणोमे शब्दोका मूल बहु० रूप कदाचित् वही है जो एक० का है।

–इ।इ तथा ए।ए मे-से प्राचीनतर कदाचित् प्रथम है दूसरा प्रतिलिपि-कारोकी अपने समयकी भाषाके प्रभावसे आया हुआ लगता है।

विभक्तियुक्त अर्थोमे निर्विभक्तिक प्रयोग भी अनेक मिलते हैं

पु० एक०: 'साहिजादा' सइतान र जाण्या (२०), 'साहि' साहिबा उँचाई (३०), 'सुलताण' निवाजा कीनी (३८), 'सुलताण' सुरति कीनी (३८), 'सुलताण' देस देस मुलक मुलक कु फुरमाण दीनइ (३८), 'तबीब' तमाम सब सुलताण कोके (४४)।

पु० बहु०: 'तबीवह' हाथ धरे (५१)। [–ह इस प्रयोगमे स्वार्थिक प्रतीत होता है।]

विकृत रूपोके स्थानपर निर्विभक्तिक रूपोको प्रयुक्त करनेकी प्रवृत्ति दक्खिनी हिन्दीमे भी पायी जाती है।[1]

यह ध्यान देने योग्य है कि 'ने' का प्रयोग रचनामे कही भी और किसी रूपमे भी नही मिलता है। पुरानी दक्खिनीमे भी बहुत-कुछ यही अवस्था थी। डॉ० श्रीराम शर्मा लिखते है "कारक चिह्नके रूपमे दक्खिनी 'ने' को सामान्यत अस्वीकार करती है, केवल साहित्यिक दक्खिनीमे ही कही-कही 'ने' का प्रयोग मिलता है। 'ख्वाजा बन्दे नवाजकी रचनाओमे हम 'ने' का प्रयोग देखते है। उनके परवर्ती लेखक बुरहानुद्दीन जानमकी रचनाओमे 'ने' का प्रयोग अधिक नही है।"[2] किन्तु ख्वाजा बन्दे नवाज़की रचनाओमे 'ने' के मिलनेके कारणका अनुमान करते हुए डॉ० शर्मा लिखते है "इसका एक कारण यह हो सकता है कि ख्वाजा बन्दे नवाजका अधिकाश समय दिल्लीमे बीता था। उस समय दिल्लीके आस-पासकी खडी बोलीमे 'ने' का प्रयोग होने लगा था।"[3] उनके इस कथनसे मैं सहमत नही हूँ क्योकि प्रस्तुत रचनासे यह प्रमा-

१ वही, अनु० ३१५।

२ वहीं, अनु० ३१५।

३ वही।

णित हो जाता हे कि ख्वाजा बन्दे नवाजके कदाचित् एक शताब्दी बाद तक भी दिल्लीके आस-पासकी खडी बोलीमे 'ने' का प्रचलन नही हुआ था। या तो ख्वाजाने यह प्रयोग अन्यत्रमे ग्रहण किया होगा, और या तो उनकी रचनाओका प्रस्तुत रूप इस रचनाके भी बादका होगा।

—इ स्त्रीलिग एकवचनमे भी अकारान्त। आकारान्त शब्द उसी प्रकार —इ लगाकर प्रथमाका विभक्तियुक्त रूप बनाते है जैसे पुल्लिगमे पॉच सोवन्न के टका 'देवरइ' घरे (४), अबे 'फिरस्तइ' फेरे (४७)।

सविभक्तिक अर्थोमे निर्विभक्तिक प्रयोग स्त्रीलिग एक०मे भी अनेक मिलते है:

'साहिब' सारी बत्तडी साहिजादे सु कम्म (६), 'मालनी' सच जाण्या (२०), दीदे दिग्ध उचाइया 'साहिब' साहिब अगि (२८), 'बीबी' हु रोवणा मांड्या (५१), 'ढढिणि' ढोरी अषिया साहिब समुहियाह (५४), मा' अर-दास करी (१०८)।

स्त्री० बहु० मे भी निर्विभक्तिक प्रयोगके इस प्रकारके उदाहरण मिल जाते है जाणे 'अपछरा' अमी हर्‍या (१०२)।

द्वितीया विभक्ति :

एक० मे सर्वाधिक प्रयुक्त विभक्ति 'कु' है, जो अकारान्त। इकारान्त शब्दोके साथ पु० तथा स्त्री० दोनोमे मिलती हे

षूव 'कु' षूब होइगा (४), दावल 'कु' तीन दिन हुए खाना खाया (५२), इती बात 'कु' का समीना (७५), नदरि ज लब्भइ नदरि 'कु' नर्दार पुकारत जाइ (७२),

पु०। स्त्री० बहु० मे भी —कु का प्रयोग इसी प्रकार मिलता है सुलताण देस देस 'कु' मुलक मुलक 'कु' फुरमाण दीनइ (३८)।

आकारान्त शब्दोमे 'कु' 'आकार' को 'एकार' मे बदलकर लगता है

साहिजादे 'कु' जियावणा (५१), साहिबा साहिजादे 'कु' वरणा (७५), साहिजादे 'कुं' क्या सुरोग (९०), साहिजादे 'कु' ठढ लागी (१०१)।

'कू' के रूपमे यह 'कु' दक्खिनी मे भी मिलता हे, यद्यपि इसके सम्बन्धका

डॉ० श्रीराम शर्माका यह कथन मान्य नही लगता है कि "दक्खिनीका 'कू' व्रज-के 'कह' 'कहु' से सम्बन्धित है।"[1]

एक० स्त्री० मे कही-कही पर 'नु' विभक्ति भी मिलती है :

साहिजादा बीबीय 'नु' पकरि कइ उसही महल मइ आन्या (४०), पाछइ क्या कीजइ तबीबिया 'नु' (५९)।

इसी प्रकार पु० बहु० मे कही-कही पर नइ। नइ विभक्ति भी मिलती है :

सादा 'नइ' वग्गे (२४), सादा 'नइ' बजावउ (७५), सादा 'नइ' वाज-णइ लागे (११३)।

कही-कही पर सविभक्तिक अर्थोमे निर्विभक्तिक रूपोका प्रयोग भी हुआ है : 'साहिजादा' जिलावइ (५९)।

तृतीया विभक्ति

तृतीयाके रूप-निर्माणके लिए दो कुलोकी विभक्तियोका प्रयोग किया गया है 'स' कुलकी तथा 'त' कुल की। 'स' कुलकी विभक्ति —'सु' 'सू' 'सौ' है और 'त' कुलकी है 'तइ', 'तइ', 'ती' तथा 'थी'।

सुं। सूं। सौ : साहिव 'सु' सुरत्तिया वर बोलिया वडाम (१), सुल्ताण 'सु' कहुगी (५), साहिजादे 'सु' कम्म (६), साहिब 'सौ' सुरत्तिया (९) साहिजादे 'सु' सइतान लर्‌या (५१), साहिबा ढढिनी 'सु' कहे (५२), दीदह 'सु' दीदे जोरे (५५), साहिजादे 'सु' वषाणइ (७६), दाणसंवद साहिजादी 'सु' साहिजादइ कह्या (१०१), मानु चाद तारा 'सु' रिसानइ (१०९)।

—थी : षूब 'थी' षूब होइगा (४८)।

—तइं। तइ : तउ कहइगे ढढिनी 'तइ' हुई बुराई (३०), षूब 'तइ' षूब होइ (४९), अबे मरणा 'तइ' क्या बुराई (१०६)।

—ती न जाणीयइ गिरइ 'ती' क्या होइ (१०१)।

ऐसा प्रतीत होता है कि 'सु' विभक्ति 'साथ' के आशयसे प्रयुक्त हुई है, जबकि 'तइ'। 'तइ' तथा 'ती'। 'थी' कार्य-कारण भावसे 'द्वारा' के अर्थमे प्रयुक्त हुई है।

दक्खिनीमे 'सूं', 'ते'। 'ते' तथा 'थे। थे' विभक्तियाँ मिलती है।[2]

---

१. वही, अनु० ३१६।

२. 'दक्खिनी हिन्दी', पृ० २४, तथा 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० ३१७।

कु० मे एक-दो स्थानोपर –ए विभक्तिसे भी काम लिया गया है .

वाडिया वेलिया 'नयणे' दिषावइ (३), टुक एक 'धीरे' (४) ।

कही-कही पर निर्विभक्तिक प्रयोग भी मिलते है :

तू इहि 'काम' आई (९), अषी अषिनु 'वट्टडी' आनि गिलदी ताहि (३१), 'लज्जा' न डरु (५७), 'लाजनु' सोचना हूवा (७३) 'पावहं पाव' सुलताण दरबारि आया (७४)।

चतुर्थी विभक्ति

चतुर्थीकी विभक्ति 'कु' या 'कुं ताई' है।

–कुं : नाडी अत्थि तदोष 'कु' नत्थि तदोष न लेपु (५२) ।

–कुं ताई : पालिंग तइ उतरि करि सलाम 'कु ताई' हुआ (४९) ।

ये विभक्तियाँ दक्खिनीमे भी मिलती है।[१]

क्रियार्थक संज्ञाएँ विकृत रूप-मात्रमे प्रयुक्त हुई है : बदा जमा मसीति बदियहु की बदिगी 'देखणइ' हु गया था (३९), जमा मसीति 'देपणइ' गया था (४६) ।

पंचमी विभक्ति

पचमीकी विभक्तियाँ –हतइ । हृतइ, –तइ और –थी है

–हतइं । हतइ : दानसवद कइ घर 'हतइ' सहन केहुकी वाट चाहने हइ (२१), मंदिर 'हतइ' ढोल कई मदिरि मागी (५९)।

–तइ . कुमकुमा कइ जल महि 'तइ' निकस्या (१०६) ।

–थी डीवी डाग खल्लरी न जाणु कहा 'थी' लीन्ही (८७), दिल मइ 'थी' दिल क्या होइगा (५५) ।

इनके साथ दक्खिनीकी ते । तै तथा थे । थै तुलनीय है, साथ ही उसमे सु । से । सेती विभक्तियाँ भी पायी जाती है।[२]

कु० मे एक स्थानपर पंचमीमे भी निर्विभक्तिक प्रयोग मिलता है ही उट्ठा दिट्ठाइया 'दीहा' पचइ च्यारि (१४) ।

---

१ 'दक्खिनी हिन्दी' पृ० ५६ तथा 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास, अनु० ३१८ ।

२. 'दक्खिनी हिन्दी' पृ० ५४ तथा 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास' अनु० ३१६ ।

षष्ठी विभक्ति

षष्ठीकी विभक्तियाँ –का परिवारकी है, केवल दूहामे कभी-कभी –हृदा– परिवारकी विभक्तियाँ मिल जाती है।

–का परिवारकी विभक्तियाँ निम्नलिखित है

–का : पुल्लिग एक० की विभक्ति – का है, किन्तु अपने सामान्य रूपमे यह तभी प्रयुक्त होती है जब इसके बाद आनेवाली सज्ञा भी अपने सामान्य रूपमे हो

मालिनी 'का' भेप करचा (४), साष 'का' सोरभ आया (२२), दावल दानसवद 'का' घर (२८), इद्र 'का' गर्व भाग्या (४२), दरिया 'का' गर्व वादे (४३), तबीब 'का' भेष करि आई (५६), जीउ 'का' जीउ जाणु (५६), तारहु 'का' तेज छई (८९), एक जोगिणी 'का' स्वाग कीये एक भोगिणी 'का' (९१), पाचि 'का' कारावा (१०२), सारइ लाल 'का' प्याला (१०२), मा साहिबा का' न्याउ अछए (१०९)।

–की : स्त्री० एक० की विभक्त –की है·

ढढिणि दाणसवद 'की' (१), दानसवद 'की' पूँगरी हइ (५), पुदाइ 'की' बदिगी करते हइ (२१), अबे खुदाइ 'की' फिरस्तई आया (२३), सुलताण केलि 'की' खडकी खडे हइ (३८), साहिजा 'की' साहिबा 'की' (५३)।

अपने विकृत रूपमे –का विभक्ति –कइ। –के मे परिवर्तित हो जाती है.

–कइ : साहिजादे 'कइ' आगइ धरचा (४), दावल दानिसवद'के' (कइ ?) मागिस इतना भात (१९), दानिसवद 'कइ' घरह केहुकी वाटइ चाहते हइ (२१), दावल 'कइ' दरबारि वाइ वग्गे (२४), कइ साहिजादे 'कइ' साथि गोर मइ वाहणा (५१), सुलताण 'कइ' दरबारि आई (५६), दावल दानसवद 'कइ' आगलि बिछाओ ओली (६३), तीजइ 'कइ' आवत इ हवाल कीन्हा (१०२)।

–के : करणी 'के' भारतर भरचा (१०२), मा 'के' सिर ऊपर फेरि फेरि भाने (१०९)।

'कइ' तथा 'के' मे से 'के' परवर्ती ज्ञात होता है, और हो सकता है कि प्रतिलिपि-प्रक्रियाकी परम्परामे आया हो।

बहु० पु० की विभक्ति 'के' है

पॉच सोवन्न 'के' टका देवरइ धरे (४), दरेस पच सइ भाग 'के' तूने दीदे घूरते हुइ (२१), साहिजादे 'के' षवे फुरकणइ लागे (३०), मालनी 'के' औसान भागे (३०), साहिजादे 'के' सिर ऊपर अवारणा हुइ (४८), तबीब 'के' रोर भागे (५८), पच सइ सोने 'के' टके षोरइ मिलाओ (५८), सुलताण 'के' बखत बडे (७४), दुनी 'के' दीदे ऊघरे (७४), इयारहू 'के' दिल-भरे (७४), दुसमणा 'के' दिल अरे (७४), पय हडिग्गिया 'के' बोल (८१)।

बहु० स्त्री० की विभक्ति –कीया। क्या है .

जमा मसीति मिस्त 'क्या' भोरइ लागी (२२), साहिबा सहिन 'क्या' भरी हुइ (२६), जन्न की सहण 'क्या' 'सिराई (५५)।

एक० की 'का', 'की' और बहु० की 'के' तथा 'किया' विभक्तियाँ दक्खिनीमे भी मिलती है।[1] 'का' का विकृत रूप दक्खिनीमे 'के' मिलता है। 'कइ' नही। किन्तु प्राचीन दक्खिनीमे यदि वह 'कइ' रहा हो तो आश्चर्य न होगा, क्योकि दक्खिनी साहित्यके लिए प्रयुक्त फारसी लिपिमे 'कइ' तथा 'के' एक ही प्रकारसे लिखे जाते है।

–हृदा परिवारकी विभक्तियॉ निम्नलिखित है—

–हंदा एक० पु० की विभक्ति –हृदा है लोयन 'हृदा' लम्भ (१०), आगम 'हृदा' मयण (१२), अबर 'हृदा' इदला (८५)।

–हंदे बहु० पु० की 'हृदे' है पावस 'हृदे' मोर (३३)।

हृदा-समूहकी ये विभक्तियॉ केवल पद्योमे मिलती है, अतः ऐसा ज्ञात होता है कि ये प्राचीनतर भाषारूपकी सम्पत्ति थी और पद्योमे इनका प्रयोग कुछ-न-कुछ बना हुआ था, यद्यपि तत्कालीन बोलचालकी भाषामे षष्ठीके क्षेत्र-मे –का समूहकी विभक्तियोने पूरा अधिकार कर लिया था।

एक० पु० मे एक स्थानपर -हिं विभक्ति भी मिलती है :

–हिं 'जुवाणिहि' जोग जूआ (७३)।

षष्ठीके लिए कुछ निर्विभक्तिक प्रयोग भी रचनामे मिलते है :

लक 'धण' कइ मुट्ठिया (१५), 'पिय' हत्था भउ काम (१५) हत्था

१. 'दक्खिनी हिन्दी' पृ० ५५, तथा 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० ३२० –उदाहरण।

'काम' स पीउ भउ (१८), 'अषी अषिनु' वट्टडी जाणि गिलदी ताहि (३१), 'साहिबा' नजरि (५६), 'साहिजादे' दीदे देषणइ लग्गे (५८), 'साहिजादे' दिल अउर दिल (६९), पाछइ 'साहा' सुपामण असपती अस चडाया (७४), 'दावल' दरबार सोर हूआ (७४), 'बीबिया' सग साहिजादा आइ दावल दरहि वादा (७६), 'जादे' जा दिन आगला 'साहिब' सा दिन रूप (८८), 'सद्वि लष' लिअदा प्याला भग्गा हइ (१०८), 'सद्वि लप' लिअंदा (१०८) 'समरकद' साहिजादी बीबी बिवाणा जाए (१०९)।

सप्तमी विभक्ति

सप्तमीकी सर्वाधिक प्रयुक्त विभक्ति –'इ' तथा –'अइ' है, जो अकारान्त शब्दोमे लगती है।

–इ . जाणे नी नारगिया बे अंगिया 'मझारि' (१४), 'कमरि' करदा लेहु (१८), इतई बीच साहिजादा दावल कइ 'दरबारि' जाइ वग्गे (२०), जाणेअग्गि अयागिया पडी पुराणइ 'दगि' (२८), दीदे दिग्घ उचाइया साहिब साहिब 'अगि' (२८), जब की सहण क्या 'सिरि' आई (५५), दावल दानिसवद कइ 'आगलि' बिछाओ ओली (७३), पावह पाव सुलताण दावल कइ 'दरबारि' आया (७०), बीबिया 'सगि' साहिजादा आइ दावल दरहि वादा (७६), वरणी 'सिरि' सिंदूर (७८), कउण गिलदा 'षेलि' (८७), की पग 'पतरि' चुक्किया (१०४), टुकरे 'भडारि' घरावउ (११०), 'घरि घरि' लग्गी लाइ (११२)।

–अइ : दोइ अप्पणइ 'हत्थइ' कीया (४), जाणे सीपि सुमुक्खिया 'कंठइ' कीर चुणति (१३), जागतइ वेल्हतइ सगी किरण 'सुविहाणइ' (४०), टुक एक जमा मसीति भिस्त वया 'भोरइ' लागी (२२), नारी दुइ 'जाइगहइ' हइ (५३), 'साहिजादइ' साहिबा हिया (५७), साहिब सा 'हत्थइ' किया 'हत्थइ' साहिब साहि (७७)।

इस –अइ का परिवर्तित रूप –ए है जो दक्खिनीमे मिलता है[1]। –अइ और –ए मे प्राचीनतर –अइ लगता है। सम्भव है पुरानी दक्खिनीमे भी –अइ रूप ही रहा हो, जिसे फारसी लिपिके कारण –ए पढा गया हो, क्योकि फारसी लिपिमे दोनो एक ही प्रकारसे लिखे जाते है।

---

१. 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० ३२१।

कभी-कभी आकारान्त शब्दोका –आ –ए मे परिवर्तित हो गया है, और उसके साथ –ह जुड गया है : किन्तु इसका एक ही उदाहरण है और वह पद्यमे मिलता है घरि षल्लरी 'षवेह' (१८)।

कभी-कभी अकारान्त। आकारान्त शब्दोको इकारान्त करके उनमे स्वार्थिक प्रत्ययके रूपमे –आ। –आह लगाया गया है ·

'हेलिया' साहिजादे कह अग्गइ धर्या (४), जाणे सीप 'सुमुक्खिया' (१३), ढिड्डिणि ढोरी अखिया साहिब 'संमुहियाह' (५४), जे मुत्ताहल दिट्ठिया तइ तन 'मझरिया' (६४)।

इनके अतिरिक्त स्थितिवाची स्वतन्त्र शब्दोके घिसे हुए रूप भी जुडे हुए मिलते हैं। इनमे-से दो प्रमुख है · एक तो 'मै' परिवारके और दूसरे 'पर' परिवारके।

'मै' परिवारके है मइ। मि। मै। महि। मँहि। माँहि उसही महल 'मइ' आन्या (४०), महल 'मइ' आवतइ इंद्रका गर्व भाग्या (४२), दिल्ली सहर 'मइ' ए ज घेरे (४७), कइ साहिजादे के साथ गोर 'मइ' वाहणा (५१), दिल 'मै' दिल आया (५३), पच सइ सोने के टके षोरइ 'मि' लाओ (५८), अबीर 'महि' मुझइ भरम होइ (१०१), कुमकुमा कइ जल 'महि' तइ निकस्या (१०६), अबीर 'मँहि' षोजइ षोज देष्या (१०६), दीली 'माहि' सौर पर्या (५१)।

'पर' परिवारकी है परि। पर तथा उप्परइ। उप्परि। उप्पर।

परि। पर साहिजादा पलग 'पर' लेट्या (४०), रग 'पर' रग ओढनी साहिजादइ दीनी हइ (१०२), जाणे नील कमल 'पर' बे दीयै की जाला (१०२), सिर 'परि' पेरो साहि (८५), चादर सिर 'परि' लीनी (१०८), लइ टुकरे गउष 'परि' चीना (११३)।

उप्परइ। उप्परि। उप्पर : साहिजादे चादरि सिर 'ऊपरि' लीनी (८२), साहिजादे सिर 'उप्परइ' मो साहिबीया तनफेरि (३६), साहिजादे के सिर 'उप्पर' अवारणा हइ (४८), फेरिबे दस लाष टके उर सिर 'उप्परइ' (४६), मा के सिर 'उप्पर' फेरि फेरि माने (१०९)।

निर्विभक्तिक प्रयोगोकी भी सप्तमीमे कोई कमी नही है

'बरस' नव तीनि तेगह पवाणा (२), एकसि 'द्यउस' देवर ढढिनी मालिनी का भेष कर्या (४), पिय 'हत्था' भउ काम (१५), जाणे राई

'वेलिया' फूल्ली नीकलियाह (१७), ढढ्ढिनी 'गाइबा' ही गुमान बोली (२७), दीदे दिग्घ उचाइया साहिब साहिब 'अग' (२८), ढढ्ढिनिया हिय 'हत्थ' लइ—(३६), जउ 'जोरा' तउ तुज्झ ही जउ 'गोरा' तउ तुज्झ (३७), सुलताण केलि की 'खडकी' खडे हइ (३८), आणि 'दरबार' रोके (५१), ढढिणि ढोरी अषिया साहिब 'समुह्यिाह' (५४), नारी नारि 'सुहत्थिया' नारी नारि 'सुहत्थ' (५७), साहि 'घरा' साहिबिया जिणि दिण्णिया सुजाणि (६२), 'लज्जा' गउ गुण आगुणी घण 'लज्जा' वउहार (६१), 'लज्जा' गउ जुअ जोअणा (६१), साहिबिया सर 'मद्धरा' हस करदा केलि (६३), जमाजमीति 'मसीतिया' दुहु दिट्ठिया रसाइ (७२), वर 'सिर' सोहइ सेहरा वरणी 'सिरि' सिंदूर (७८), प्रथम 'पलिंगा' साहिबा साहि दिहदा वयण (८५), इह अउर उगदा 'गयण' (८५), जे अबा ही 'अब्ब' (९८), आए 'पग' पाण (१०१), 'फुरमाण' धाई (१०२)।

दक्खिनीमे भी इसी प्रकारके निर्विभक्तिक प्रयोग पाये जाते है[1]।

सम्बोधन :

सम्बोधनकी दो प्रणालियाँ मिलती है। एक तो सम्बोधनात्मक अव्ययोके साथ पुकारनेकी, और दूसरी बिना इस प्रकारके अव्ययोके पुकारनेकी। प्रथम प्रणालीके प्रयोग भी दो प्रकारके है, या तो सज्ञाएँ अपने सामान्य रूपमे आयी है और या तो विकृत रूपमे।

सामान्य रूपमें : **एक० पु०** 'साहिजा' मुझइ जानता हइ (४९), 'साहिज' साहि वहा (४९)। एक० स्त्री० 'साहिबा' दीदे उनइ (२७), 'साहिबा' साहिजादा जीवइगा (५५), 'साहिबा' आसा आणि (१०१), 'मालणिया' तै दिट्ठिया (१७), 'ढढिनिया' सोना भला (३५), 'ढढिनिया' हिय हत्थ करि (३६)।

बहु० पु० . 'दोस्तान दोस्तान' करि हस्तक्या दीनी (२२), 'दोस्तान दोस्तान' तत्ता भत्तु लाओ (२५), दरेस 'दोस्तान' भत्त लइ आवनइ हइ (२६)।

विकृत रूपमे : **एक० पु०** 'साहिजादे' आपणी जभीरिया सुहगीया न बेचुगी (५), 'साहिजादे' केही कहू साहिब मूरति सुभ्म (१०), 'साहिजादे' षथा न होउ (१८), 'साहिजादे' किणि बुझाइया (५८)।

---

१. वही।

प्रयुक्त अव्यय निम्नलिखित प्रकारके है :

पु० । स्त्री० 'बे' . 'बे' दावल दानमवद का घर (२५), 'बे' दावल साहिजादा जीइया (७४), 'बे' साहिबा अजहु न आई (१०६) ।

पु० । स्त्री० 'अबे' 'अबे' मालनिया तूं इहि काम आई (९), 'अबे' जमा राति कदि हइ (२०), 'अबे' फिरस्तइ फेरे (४७), 'अबे' मरणा तइ क्या बुराई (१०६) ।

स्त्री० 'रि' · देषि 'रि' दिषु (५३) ।

दक्खिनीमे भी ये दोनो प्रणालियाँ पायी जाती है। उसमे उपर्युक्तमे-से 'रि' का पुल्लिग रूप 'रे' है तथा एक अन्य अव्यय 'ऐ' है[1] ।

मिश्र विभक्तियाँ

कही-कहीपर एकसे अधिक विभक्तियाँ एक साथ ही आयी है दिल्ल 'मइ थी' दिल्ल क्या होइगा (५५), कुमकुमा कइ जल 'महि तइ' निकस्या (१०६) ।

सर्वनाम

उत्तम पुरुष :

एकवचन कु० मे एक० कर्त्ताके दो रूप आते है 'हू' तथा 'मइ' :

हूं : हा साहिजादे 'हू' इहि काम आई (९), 'हू' मालनी इहि काम (९) ।

मइं । मइ : 'मइ सउणा सुणि दिट्ठिया (६३), 'मइ' जाणिया निसीब (६९) ।

यह मइ । मइ दक्खिनीके 'मैं' से तुलनीय है। डॉ० श्रीराम शर्माने लिखा है कि 'मइ' रूपका प्रयोग दक्खिनीके अनुप्रासके लिए ही पक्तिके अन्तमे हुआ है।"[2] किन्तु यह सम्भावना भी विचारणीय है कि वास्तविक रूप 'मइ' ही रहा हो, कमसे कम पुरानी दक्खिनीमे, इसीलिए अनुप्रासके स्थानोमे अब भी 'मइ' बना हुआ है, अन्यथा 'मइ' और 'मै' के फारसीमे सर्वथा एक-से लिखे जानेके कारण और आधुनिक उर्दू तथा हिन्दीमे 'मैं' का ही प्रचलन होनेसे

---

१. वही, अनु० ३२२ ।

२. वही, अनु० २२३ ।

शेष स्थानो पर 'मइ' को भी 'मै' पढा गया हो। दक्खिनीमे 'हूँ' नही है।

एक० कर्म-सम्प्रदान : कु० मे इसके दो रूप मिलते है, एक तो 'मुझ' से बना हुआ 'मुझइ' तथा दूसरा 'मेरा' से बना हुआ 'मेरे कु'

–मुझइ . साहिजादा 'मुझइ' जाणता हइ (४९), अबीर महि 'मुझइ' भरम होइ (१०१)।

–मेरे कुं 'मेरे कु' सहम होइगा (४८)।

दक्खिनीके 'मुझे' और 'मेरे कू' तुलनीय है।[1] 'मुझइ' और 'मुझे' फारसी लिपिमे समान रूपसे लिखे जाते है, इसलिए यह विचारणीय है कि पुरानी दक्खिनीमे रूप 'मुझइ' था या 'मुझे'।

एक० सम्बन्ध कु० मे इसका रूप 'मेरा' है

एक० मेरइं एक पुगरा 'मेरइ' हो पुराणा (४६)।

बहु० मेरे . 'मेरे' दीदे दूषण लग्ग (८)।

दक्खिनीका 'मेरे' इससे तुलनीय है।[2] यह विचारणीय अवश्य है कि जो सामान्यत 'मेरे' समझा जाता रहा है, वह पुरानी दक्खिनीमे 'मेरइ' तो नही था, क्योकि फारसी लिपिमे दोनो एक ही प्रकारसे लिखे जाते है।

सम्बन्ध० मे पद्योमे 'मैं' के विकृत रूप 'मो' तथा 'मुज्झ' बिना प्रत्ययके भी प्रयुक्त हुए है 'मो' साहिबिया तन फेरि (३६), यह करदा 'मुज्झ' हइ (३७)।

दक्खिनीमे मुंज। मुझ ही मिलता है।[3] 'मो' नही मिलता है।

बहुवचन कर्त्ता बहु० के रूपमे 'हम' तथा उसके विकृत रूपमे 'हमइ' है

हम 'हम' तब ही पाई (५५), तब कछू 'हम' गावइ (५८), 'हमहु' सुलतान पेरो साहि उपाए (१०८)।

हमइं जहमतिया 'हमइ' सोधी (७३)।

इस 'हमइ' का –अइ संज्ञाकी कर्त्ता विभक्ति -अइ से तुलनीय है।

विकृत सम्बन्ध० एक० हमारा : 'हमारा' क्या तू पराई (५५), 'हमारा' क्या चलइ (६६)।

बहु० हमारे . 'हमारे' हस्तइ हस्तइ दीदे दूषणइ आया (३९)।

---

१ वही। २. वही। ३ वही।

ये सभी रूप दक्खिनीके रूपोसे तुलनीय है।[1]

सर्वनाम : मध्यम पुरुष

कु० मे मध्यम पुरुष सर्व० के लिए 'तू' तथा उसके विभिन्न रूप है। अविकृत एक० मे तु। तू। तू प्रयुक्त है।

या 'तू' इहि काम आई (९), 'तू' रस कामधा भूषिया (३२), 'तु' कहा था (३८), हमारा क्या 'तू' पराई (५५)।

अविकृत बहु० 'तुमह प्रयुक्त हुआ है 'तुमह' बहर करणा (७५)।

विकृत एक० कर्त्ता के दो रूप मिलते है 'तइ तथा तइ

तइ 'तइ' तत्ता षान षाईया (५४)।

तइं . ते 'तइ' ही हसि हंसरा वइ वर गजरियाह (६४)।

किन्तु हो सकता है कि 'तइ' मे 'इ' का बिन्दु भूलसे छूटा हुआ हो।

विकृत एक० सम्बन्धके लिए 'तेरा' तथा 'तुज्झ' प्रयुक्त मिलते हं

तेरा सुलताण कह्या 'तेरा' ई हइ (१११)।

तुझ जउ जोरा तउ 'तुज्झ' ही जउ गोरा तउ 'तुज्झ' (३७), ओर करदा 'तुज्झ' (३७)।

'तू', 'तेरा' 'तुज्झ' और 'तुम्ह' दक्खिनीमे भी पाये जाते है।[2]

सर्वनाम। विशेषण : निकटवर्ती निश्चयवाचक

अविकृत एक० कु० मे इसका रूप पु० 'इह' तथा स्त्री० 'अइ हैं।

पु० : इह . 'इह' अउर उगदा गयण (८५)।

स्त्री० · अइ . दुनी साहिजादइ 'अइ' मत्या लीनी (४१)।

विकृत एक० का रूप 'इहि' हे . 'तू' इहि काम आयी (९) हूँ मालनी 'इहि' काम आयी (९), हूँ मालनी 'इहि' कम्म (९)।

अविकृत बहु० का रूप 'ए' है जो पुल्लिगका है .

'ए' दिल्ली सहर मइ 'ए' ज घेरे (४७)।

विकृत बहु० का 'एण' हे जो पुल्लिगका है

---

१. 'दक्खिनी हिन्दी,' पृ० ४६, तथा 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास,' अनु० ३२५।

२. दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकाम, अनु० ११४।

'एण' 'कपण' लागे अगवल 'एण सुणदा हल्ल (६७)।

'इह' और 'एण' से दक्खिनीके 'ई', 'ये' और 'इन' तुलनीय है।[1]

सर्वनाम। विशेषण : दूरवर्ती निश्चयवाचक

कु० मे तीन परिवारोके सर्व०। वि० दूरवर्ती निश्चयवाचकके रूपमे प्रयुक्त हुए है : वह परिवार, स परिवार और त परिवारके। किन्तु स परिवारका प्रयोग बहुत सीमित है : वह केवल अविकृत एक० कर्त्ताके लिए ही प्रयुक्त हुआ है, शेष रूपोके लिए उसने त परिवारको अपना स्थान दे दिया है।

वह परिवार :

अविकृत एक० ओह। ओही (ओह + ई) हालु (५०)।

विकृत एक० वइ 'वइ' पुज्जइं दिल लभ्भिया (६२)।

उस अब 'उस' सु क्या करण आईया (५८)। 'उस' का वरण सुहदा झग्ग (८), मा साहिबा का न्याउ अछए 'उस' कइ दावल पछइ (१०९)।

'त' परिवार :

विकृत एक० कर्त्ता जिणि लगाइया 'तिणि' ही बुझाइया (५८)।

वही, कर्म अषी अषिनु वट्टडी जाणि गिलदी 'ताहि' (३१)।

वही, करण 'तिसही सु' पुकारइ (४५), 'तिस ही सु' यो कहइ (५०)

विकृत बहु०, कर्त्ता। कर्म 'ते' तइ ही हसि हसरा वइ वर गजरियाह (६४), 'ते' सु कहदी गाइ (८४), 'ते' हवाल कहणा (१०२), जिणि खाइया 'ते' दिषावहू (५)।

वही, सम्बन्ध 'तिन्ही' तिन्नि अवत्थडी (९५)।

स परिवार :

अविकृत एक० सा : जादे जा दिन अग्गला साहिब 'सा' दिन रूप (८८)

वही : सो : जिण ही जीय जहमत्तिया 'सोई' हुआ तबीब (६६)।

वही सु : 'सु' मुह मुहर जंभीरिया मागती हइ (५), बोलणा हइ 'सु' बोलि (५९), ते 'सु' कहदी जाइ (८४)।

---

१ वही, अनु० ३३४।

इन तीनो परिवारोका प्रयोग दक्खिनीमे भी हुआ है और अन्तर भी अधिक नही है।[1]

सर्वनाम · विशेषण : निजवाचक

निजवाचक सर्वनामके रूपमे 'अप्प' । 'आप' का प्रयोग हुआ है ।

एक० कर्त्ता० आर 'आपइ' छपी किनहु छिपाई (१०६) ।

वही, कर्म० अप्प जे लोइदे 'अप्प' (९५) ।

वही, सम्बन्ध (अविकृत) : 'अप्पाएा' पर डर (२५) ।

वही, सम्बन्ध (विकृत) अप्पणइ . दोइ 'अप्पणइ' हत्थइ कीया (४), 'अपनइ अपनइ' घरह की बाटचा लीनी (३८), खइर करतइ कोडि कहि मन 'अप्पणइ' विचारि (१०७) ।

बहु० कर्त्ता, पु० : अप्पा 'अप्पा' काम कमच्छला बहु देखदा काग (९३)

वही, सम्बन्ध (अविकृत) पु० अप्पणा : जाएो सर्पनि अप्पणा चर चिंदुआ भषंति (११) ।

वही, सम्बन्ध (अविकृत), स्त्री० · आपणी . आपएाी जभोरिया सुहगिया न वेचुगी (५) ।

वही, सम्बन्ध (विकृत), पु० : आपणइ 'आपणइ' कपरे कीए (३८) ।

इन प्रयोगोसे तुलनीय है दक्खिनीका अपना । अपन ।[2]

सर्वनाम । विशेषण : सम्बन्धवाचक

सम्बन्ध वाचक सर्वनाम । विशेषरण 'ज' परिवारके हैं। विशेषणके रूपमे अविकृत रूप प्रयुक्त होता है और सर्वनामके रूपमे दोनो प्रयुक्त होते है : अविकृत तथा विकृत रूप ।

एक० विशेषणके रूपमें

जो 'जो' दरवेस ज्यु' था (२३), 'जोई' दानसवद आवइ (५०) ।

जु 'जु' फुरमाण दीना (७५) ।

जा : जादे 'जा' दिन अग्गला (८८)

---

१ वही, अनु० ३३२–३३३ ।

२ वही, अनु० ३३० ।

एक० सर्वनामके रूपमें :

कर्त्ता (अविकृत) जो 'जो' आवे (२०) ।

कर्त्ता-कर्म (विकृत) : जिण । जिणि : 'जिण' मुहर जंभीरिया लिन्न (७), 'जिणि' लगाइया तिणि बुझाइया (५८), साहि घरा साहिबिया 'जिणि' दिण्णया सुजाणि (६२), जिण' ही जीय जहमत्तिया (६६) ।

सम्बन्ध० पु० जिसका, स्त्री० . जिसकी : जिसकी' सूरनि लोवतइं-(८) ।

बहु० विशेषणके रूपमें :

जे : अप्पाण पर डर गत्रा 'जे' आण मर (२५), 'जे' 'जे' रत्ति उगत्तियाँ कालिह कहदी केलि (८२), 'जे' रनि मुट्ठि सुगुठीया (८४) ।

बहु० सर्वनामके रूपमें :

कर्त्ता-कर्म (अविकृत) . जे : 'जे' मुत्ताहल दिट्ठिया तइ तन मंकरिया (६४), 'जे' दिट्ठा ही पिट्ठ (९२), 'जे' लोअदे जग्ग (९३), 'जे' पेम सु वुट्ठइ धार (९४), 'जे' लोइदे अप्प (९५), 'जे' अणरत्ता ही रत्त (९६), 'जे' जुग जोइ अरत्त (९७), 'जे' अबा ही अब्ब (९८), 'जे' जाणि परदा गत्त (९९), 'जे' रगइ करियांह (१००) ।

कर्त्ता-कर्म (विकृत) जिणि । जिणइ : 'जिणि' षाई है ते दिषावहु (५), 'जिणइ' दुणिया जाणी (१०२) ।

अविकृत 'जो' तथा विकृत 'जिस' दक्खिनीमे भी प्रयुक्त होते रहे है ।[1]

सर्वनाम । विशेषण : अनिश्चयवाचक

अनिश्चयवाचक सर्वनाम । विशेषणके रूपमे 'कोउ । को' और 'के' के विभिन्न रूप प्रयुक्त हुए हैं ।

एक० सर्व० कर्त्ता : कोउ जत्र सब 'कोउ' कुमादे होउ तउ कछू कहुं (५०) ।

विशे० को . मिलावणा तमहं 'को' घो (७३), 'को' घग्गिया घर लग्गिया रत्ता तोइ अरत्त (९९) ।

विशे० : के . 'के' दिन के ही केलिया 'के' दिन केही केलि (८७) ।

---

१. वही, अनु० ३३४।

विकृत कर्त्ता० 'किन' : 'किन' हु छिपाई (१०६)।

विकृत सम्बन्ध 'किसऊ' : 'किसऊ' की डीवी 'किसऊ' की डागी, 'किस की खालरी चोरी (८३)।

विकृत सम्बन्ध 'केहु' · 'केहु' की वाट इ चाहते हइ (२०)।

'एक' विशेषणका भी प्रयोग अनिश्चयवाची सर्व० के रूपमे हुआ है :

अविकृत 'एक-स' : 'एकस एकस कु' गहुगी (५)।

विकृत कर्त्ता एकइं : 'एकइ' योग (९०), 'एकइं' भोग (९०)।

'को', 'किस' तथा 'किन' दक्खिनीमे भी प्रयुक्त हुए है।[1]

सर्वनाम। विशेषण : प्रश्नवाचक

जीववाची प्रश्नवाचक सर्वनाम 'कउण'। 'कुण' परिवारके है, और अजीववाची 'क्या' परिवारके :

अविकृत 'कउण' 'कउण' करदा कारिण (६२), 'कउण' गिलदा पेलि (८७), 'कउण' करदा वप्प (९५), 'कउण' हुअदा हाल (१०५)।

विकृत कर्त्ता 'किणि' : साहिजादे 'किणि' बुझाइया (५८)।

विशे० 'कुण' : 'कुण' स केही पूगरी जिहि मुहर जभीरिया लिन्न (७)।

सर्व०। विशे० 'क्या' : खाइया 'क्या' कहावइ (५), षानइ कीक्या चलावइ (४०), अर दिल्ल मइ थी दिल 'क्या' होइगा (५५), सुलताण 'क्या' रिसाई (४८), 'क्या' स नर, क्या स नारी (५६), 'क्या' करहिगा मरू (५७), अब उससु 'क्या' करण आइया (५८), पाछइ 'क्या' कीजइ तबीबियांनु (५०), हमारा 'क्या' चलइ (६६), 'क्या' बातिया निसीब (६८), जहमतीया 'क्या' जाणइ (७३), इती वात कु 'क्या' समीना (७५), ढढिणिया 'क्या' गाया (८४), न जाणीइ साहिजादे कु 'क्या' सु रोग (९०), न जाणीयइ गिरइती 'क्या' होइ (१०१), अत्रे मरणा तइं 'क्या' बुराई (१०६), मा 'क्या' पून (१०८), अउर 'क्या' पून (१०८)

कह्या सुलताण 'कह्या' इउ कीया (७४)।

सर्व० काइं हूआ हूअदे 'काइं' (११४)।

उपर्युक्त 'कउण' तथा 'क्या' से दक्खिनीके 'कौन' तथा 'क्या' तुलनीय है।[2]

---

१ 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास' अनु० ३३५, तथा 'दक्खिनी हिन्दी', पृ० ५१।

२ 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास,' अनु० ३३७-३३८।

'कउण' तथा 'कौन' का अन्तर नागरी तथा फारसी लिपियोके अन्तरके कारण तो नही है, यह अवश्य विचारणीय है।

विशेषण

विशेषण : गुणवाचक

रचनामे विशेषणोके लिग तथा वचन विशेष्यके लिंग-वचनके अनुरूप दिखाई पडते हैं। एक०के लिए सामान्यरूपोमे –आ तथा –ई लगाकर क्रमश पुल्लिग और स्त्रीलिग बनानेकी व्यापक प्रवृत्ति है।

एक० पु० –आ : वर बोलिया 'वडाम' (१), साहिजादा कुतबदी 'जुआणा' (२), तेगह 'पवाणा' (८), वरण 'सुहदा' भग्ग (८), मागि स 'तत्ता' भात (१९), जाणे जीवण 'इक्करा'—(२९), तू रस 'कामघा' 'भूंषिया' (३२), ढढ्ढिनिया सोना 'भला' (३५), तइ 'तत्ता' षान षाइया दाभइ माह हियाह (५४), नेह 'समट्टा' निठ्ठ (९२)।

एक० स्त्री० –ई ढढ्ढिनि दानसवदकी 'अट्ठी' देवर नाम (१) 'दोसी' अग्गा बीबी बिवाना बइट्टी (३), कुण स 'केही' पुंगरी (७), 'पक्की' जाणि जभीरियाँ (८), 'भुट्ठी' मालनि रुन्न (७), साहिजादे 'केही' कहू साहिब सूरति सुम्भ (१०), विधि रसु 'रगी' बाम (१५), पाइ स रत्ता पकजा 'अट्ठी' अगुलि-याह (१६), आसा 'अधी' ढड्ढिनी (२३), ढड्ढिणि या 'णीकी' कही (५२), 'नीकीय' नारी देपु (५२), इह तउ 'उल्टी' कही (३३), साहिवरा साहिबिया जिण दिण्णिया 'सुजाणि' (६२), लज्जा लीक 'उलंघणी' (६६), 'असि' अस माना तर तरुणि (७१), वसत रितु 'पाछी' भई (८९)।

बहु० पु० –आ। आं : ही उट्ठा' दिट्ठाइयाँ (१४), पाइ स 'रत्ता' पकजा (१६)।

बहु० पु० –ए। सब फोउ 'कुमादे' होउ (५९), सुलनान के बषत 'बड़े' (७४), दुनिया दाणसवद 'बडे' वषाणइ (७५)।

बहु० स्त्री० –यां 'पक्किया' नारिग्यां गभीऱ्या भऱ्या (४), बेलिया 'बकिया' कन्या (४), अपनी जभीरिया 'सुहगिया' न बेचुगी (५)।

बहु० स्त्री० –यांह जाणे राई वल्लिया फूल्ली 'नीकलियाह' (१६)

कही-कही बहु०के लिए भी एक० रूप ही प्रयुक्त हुआ है 'मूआ' बहंदा साहि (११४)।

दक्खिनीमे भी प्राय इसी प्रकार गुणवाचक विशेषणोके लिंग और वचन-का निर्माण होता है।[1] डॉ० श्रीराम शर्मा लिखते हैं, "पंजाबीमे विशेष्यके लिग और वचनके अनुसार विशेषणके लिग तथा वचन प्रभावित होते है, दक्खिनीमे इस प्रकारके प्रयोग पंजाबीके प्रभावको प्रकट करते हैं।"[2] दक्खिनी-मे भी यह प्रवृत्ति खडी बोलीसे ही गयी है, यह इस रचनासे प्रमाणित है। इन्शाके गद्यमे जो यह प्रवृत्ति मिलती है, वह भी इसी कारण है।

विशेषण : परिणामवाचक

पु० इना 'इता' ही पूछता सदि हइ (२०)।

स्त्री० इती। इतनी : 'इती' बात करतइ बीबिया ऊठी (७३), 'इती' बात कु क्या समीना (७५), 'इतनी' बात करतइ—(३८), 'इतनी' वात्या कर-तइ—(४१) 'इतनी' करतइ कपरे फेरे (५५), 'इतनी' बात करतइ—(७६), (८९), (९०), (९१), (१०१)।

स्त्री० उंती न जाणउ 'उंती' घरी कित एक अमरे (१०९)।

पु० कितएक : न जाणउ उती घरी 'कितएक' अमरे (१०९)।

पु०। स्त्री० कुछ 'कुछु' षाहु 'कुछु' पुलावहु (२५)।

दक्खिनीमे भी ये विशेपण मिलते है।

विशेषण : संख्यावाचक

संख्याएँ बहुत थोडी मिलती है

एक। एक –स। एक–सि। हेक सदकइ 'एक' फुरमाण लहुं (५९), 'एकस –एकस' कु गहुगी (५), 'एकसि' द्यउस देवर—(४), मुती 'हेक' रुलति (१३)।

दोइ। दुइ। दो : 'दोइ' अप्पणइ इत्थइ कीया (४), बार 'दुइ' च्यारि यो ही पुकान्या (४६), यो करतइ रोज 'दुइ' च्यारि गले (५१), नारिंगी 'दो दो' च्यारि बटे दीया (४)।

बे जाणे नी नारिगिया 'बे' अगिया मझारि (१४)।

जुय : लज्जी गए 'जुय' जोवणा (६१)।

तीनि : 'तीनि' अरब—(११०)।

---

१. वही, अनु० ३५१।

२. वही, अनु० ३५३, ३५५।

तीजी : ढढिणी 'तीजी' बार (८३)।

च्यारे : बार दुइ 'च्यारि' (४६), रोज दुइ 'च्यारि' गले (५१), नारिगी दो दो 'च्यारि च्यारि' बटे दीया (४)।

पाँच : 'पाँच' सोवनके टके देवरइ धरे।

दस, बारह, बासठ, नवे, सइ, लाष, करोड, अरब फेरिबे 'दस' 'लाष' टके (५९), 'नवे' 'पच' 'सइ' हत्थ सोवन्न लट्ठी (६), दरेस 'सइ पच—(२१), पच 'सइ' सोने के टके (५८) तीनि 'अरब' बासठ करोड बारह लाष (११०)।

ये संख्याएँ प्राय इसी प्रकार दक्खिनीमे भी मिलती है।[1]

क्रिया

क्रियार्थक संज्ञा :

यह धातुमे णा। ना लगाकर बनी हे

भत्तु लइ 'आवनइ' हइ (२६, ३८), लज्जा लोयन 'नच्चणा' लोय हसदे कल्लि (३४), दुनिया दुक्ख लगाइया अति 'जागणा' अरग (३५), बीबी दुख 'लइनइ' कहइ परि 'दूषना' न जाणइ (४०), हाला कइ ' मारणा' न थी (४७), 'मारणा' हइ कि 'जियावणा' हइ (४८), माल 'वारणा' हइ (४८), साहिजादे से सिर ऊपर 'अवारणा' हइ (४८), 'फेरणा' हइ (४८), सुलताण 'दइणा' षूब हइ (४९), बीबीहु 'रोवणा' माड्या (५१), 'बोलणा' हुइ सु बोलि (५९), साहिजादे कु 'जीयावणा' (५१), ज 'धावणा' सु घाउ (७०), लाजह 'सोचणा' हूआ (७३), 'मिलावणा' तुमह को धी (७३), ते हवाल 'कहणा' (१०२), जिणइ दुनिया जाणी तिणइ का 'लहणा' (१०२)

डॉ० श्रीराम शर्माके अनुसार दक्खिनीमे-ना लगाकर क्रियार्थक संज्ञा-रूप बने है।[2] किन्तु 'णा' और 'ना' फारसी लिपिमे एक-से लिखे जाते है, इसलिए यह विचारणीय है कि पुरानी दक्खिनीमे क्रियार्थक सज्ञाओमे फारसीके 'नू-अलिफ' का ध्वनिक मूल्य क्या था।

प्रेरणार्थक रूप

यह धातुमे –आव् और –लाव् लगाकर बना है।

–आव् . विरपे भराए (९०), बारि उछ्रह लगाए (६०), घर बणाए

---

१. वही, अनु० ३५३, ३५५।

२. वही, अनु० ३७०।

(९०), भूषण भराए (९०), बितन तणाए (९०), नयणे दिषावइ (३), खाइयाका कहावइ (५), ते दिषावहु (५), षानइकी क्या चलावइ (४०), टुकरे भडारि धरावउ (११०)।

लाव् : कुछ षाहु कुछ षुलावहु (२५), जीव इ तउ जिलाओ (५८)।

विधिके रूप

ये प्रच्छन्न 'तू' के साथ –इ। –हि, –अइ। –ए अथवा –अ लगाकर, प्रच्छन्न 'तुम'के साथ –उ। –अउ। –अहु। –ए लगाकर और प्रच्छन्न 'आप के साथ –ई। –इय अथवा –ई। इ लगाकर बने है।

–इ। –हि : 'धरि' षल्लरी षवेहि (१८), आरतिया करि 'हेरि' (३६), 'देषि' रि दिषु (५३), बोलणा हइ सु'बोलि' (५९), मो साहिबिया तन 'फेरि' (३६) 'खाहि' न कच्चा पान (३२), साहिवा आसा 'आणि' (१०१), 'मागि' वे लाल ढमरे (१०९), 'राषि' भावइ 'गमाइ' (१११)।

–अइ। ए साहिबा दीदे 'उनइ' (२७), बे मालिनिया आइया 'करे' (४)।

–अ ईर कहदा 'बुज्झ' (३७)।

–उ। अउ तबीब तमाम दूरि 'करउ (८८), ज धावणा 'सु धाउ' (७०) तउ मिलि मगल 'गाउ' (७०), नीकी नाडी 'देपु' (५८), साहिजादे दीदे न 'भरु' (५७), लज्जी न 'डरु' (५७), कीया सु 'करु' (५७), टुकरे भंडारि 'घरावउ' (१११)।

–अहु : एताल 'ध्यावहु' (५), नातर मुहर मुहर जभीरिया—'ल्यावहु' (५), कुछ 'षाहु' कुछ 'पुलावहु' (२५)।

–ओ पचसइ सोनइ के टके षोरइ मि 'लाओ' (५८), जीवइ तउ 'जिलाओ' (५८), दावल कह आगइ 'बिछाओ' ऊली (७३)।

आदरार्थक प्रच्छन्न 'आप' के साथ यह रूप –ई। –इय लगाकर बना है

–ई : क्या 'रिसाई' (४८), ढोल कई मदिरि 'मागी' (५०), जुबान 'हुवागी' (५९), पाथर सर जिम 'कड्डीइ' (९२)।

कर्मवाच्यके क्रियारूप –ईइ अथवा –इबा लगाकर बने है

–ईइ न 'जाणीइ' क्या सुरोग (९०), न 'जाणीइ' गिरइ थी क्या होइ (१०१)।

–इबा . 'फेरिबे' दस लाख टके सिर उप्परइ (४९)।

क्रिया : सामान्य वर्तमान काल

सामान्य वर्तमान कालकी एक० क्रियाएँ सामान्यतः धातुमे –इ। अइ जोड-कर बनायी गयी है ·

–इ। अइ : 'गज्जइ' गयण न नच्चिया पावस हदे मोर (३२), षूबतइ षूब 'होइ' (४९), 'दज्झइ' साह हियाह (५४), सहरा ढढिणी सु 'गाणइ' (७६), साहिजाद सु 'वषाणइ' (७६), तुग तोरण करस 'ठाणइ' (७६), वर सिर 'सोहइ' सेहरा (७८), काम स 'कढ्ढइ' साल (७९), अबीर मह मुझइ भरम 'होइ' (१०१), 'देषइ' तउ पग लस्या (१०६), एक पाइ षरा कुतुब दी अरदास 'करइ' (१११), जीमी 'जीवइ' कुतुबदी (११४)।

किन्तु इस रूपका प्रयोग भूतकालके अर्थमे भी हुआ है—क्रियाका रूप तो वर्तमान कालका है, किन्तु आशय उसमे भूतकालका है :

बाडिया बेलिया नयणे 'दिखावइ' (३), साहिजादा आगइ सरकणइ न 'पावइ' (३), कपूर पानइ न 'भावइ' षानइ की क्या 'चलावइ' (४०), बीबी दुष लइनइ कहइ परि दूषना न 'जाणइ' (४०), जोइ दानसवद 'आवइ' पानी 'अजरइ' (४५, ५०), तिस ही सु यो 'पुकारइ' 'कहइ' (४५, ५०)।

–ए : कही-कहीपर यह –अइ –ए मे परिवर्तित हो गया है।

'जाने' की करतारिया (१०), जो 'आवे' (२०), दरबार देषतइ दरिया का गर्व 'वादे' (४३), साहिबा ढढ्ढिणी सु 'कहे' (५२)।

ऐसा ज्ञात होता है कि यह परिवर्तन प्रतिलिपि-प्रक्रियामे हुआ है क्योकि –ए कदाचित् –अइ से परवर्ती है।

हइ (ह्+अइ) : होना – वर्गकी क्रियाएँ 'हइ रूपमे तीन प्रकारकी है · एक वे है जो सामान्य वर्तमान कालको व्यक्त करती है, दूसरी वे है जिनमे किसी कार्यके होते होनेका भाव है और तीसरी वे जिनमे कार्यके आगे होनेका भाव है। पहलेमे केवल 'हइ' प्रयुक्त हुआ है, दूसरेमे क्रियाका वर्तमान कृदन्त रूप और 'हइ' है तथा तीसरेमे क्रियाका क्रियार्थक सज्ञा रूप और 'हइ' है—

१. मालनी षूब 'हइ' (४), जोवणा षुब 'हइ' (४), अबे जमा की राति कदि 'हइ' (२०), एह करदा मुज्झ 'हइ' (३७), सुलताण दइणा षूब 'हइ' (४९), नाडी दुइ जाइगहइ 'हइ' (५३), तेरा ई 'हइ' (१११)।

२. सुलताण फुरमाण देता ई 'हइ (४), मुहर मुहर जभीरिया मागती 'हइ' (५),—पूछता सदि 'हइ' (२०), मुझइ जाणता 'हइ' (४९), साहिजादा

हसता 'हइ' (१०८), पग देषि ऊलसता 'हइ' (१०८)।

३. मुझे घावनइ 'हइ' (२६), दरेस दोस्तान भत्तु लइ आवनइ 'हइ' (२६), फेरणा 'हइ' (४८), फकीर मारणा 'हइ' जीयावणा 'हइ' (४८), माल वारणा 'हइ' (४८), साहिजादे के सिर ऊपर वारणा 'हइ' (४८)।

कही-कहीपर धातुमे –अ प्रत्यय लगाकर भी सामान्य वर्तमानका काम लिया गया है :

–अ मुख मुदिया न 'जीव' (९०)।

अछए (अछ् + अए) : 'हइ' के स्थानपर 'अछए (अछ + अए) का प्रयोग भी एक स्थानपर मिलता है मा साहिबा का न्याउ 'अछए' (१०८)।

अत्थि–नत्थि सस्कृतके 'अस्ति-नास्ति' के प्राकृत रूप 'अत्थि-नत्थि' का प्रयोग भी एक स्थानपर हुआ है : नाडी 'अत्थि' तदोष कु 'नत्थि' तदोप न लेपु (५२)।

–इ एक० 'इ' रूपसे बहु० का भी काम लिया गया है

अगन चद निलाटिया भूनर 'नच्चइ' नयण (१२)।

हइ (ह् + अइ) इसी प्रकार एक० 'हइ' से भी बहु० का काम लिया गया है :

दरवेम पचसइ आसाउरी करते 'हइ' (३०), दरवेस सइ पच माग के नुते दीदे घूरते 'हइ' (८०), दरवेस सइपच षुदाइ की वदिगी करते 'हइ' (२०), दानिसवद कइ घरह तइ सहन केहुकी वाटइ 'चाहते हइ' (२०)।

–अ : इसी प्रकार –अ का प्रयोग भी बहु० के लिए किया गया है :

अगन चंद निलाटिया भू तर नच्चइ नयण।
जाणे 'आण' बधाइया आगम हंदा भयण॥ (१२)

यह अवश्य सम्भव है कि बहु० –अइ तथा हइ मे अनुस्वारका बिन्दु रहा हो, जो प्रतिलिपि-क्रियामे छूट गया हो।

एक० -उ। अउं : रचनामे उत्तम पुरुष एक० तथा बहु० के रूप भी मिलते है। एक० का रूप धातुके साथ –उ। अउ जोडकर बना है

न 'जाणु' निवासा न 'जाणु' फजरि (४५,५०,५६), डीवी डाग षल्लरी न 'जाणु', कहा थी लीन्ही (४७), जीउ का जीउ 'जाणु' (५६), न 'जाणउ' उती घटी कित एक असरे (१०६)।

एक० हू किन्तु कही-कहीपर वह वर्त्तमान कृदन्तके साथ 'हूँ' जोडकर बना है : हा मा जाणता 'हूँ' (४९)।

बहु० –अइं उत्तम पु० बहु० रूप धातुमे –अइं जोडकर बना है : जह-मतिया क्या 'जाणइं' (७३), तउ हम आणइ (७३)।

दक्खिनीमे 'हइ' के स्थानपर 'है' मिलता है।[1] किन्तु इस सम्भावनापर विचार करनेकी आवश्यकता है कि पुरानी दक्खिनीमे भी 'हइ' तो नही था जो फारसीकी लिखावटके कारण अब 'है' पढा जा रहा है—क्योकि फारसी लिपिमे दोनो एक प्रकारसे लिखे जाते है।

'अछ' धातुका प्रयोग दक्खिनीमे और अधिक मात्रामे 'ह्' धातुकी भाँति हुआ है। इसके सम्बन्धमे डॉ० श्रीराम शर्माका कहना है, 'दक्खिनीमे इस धातुका प्रयोग गुजराती अथवा पूर्वी बोलियोके प्रभावसे आया।'[2] प्रस्तुत रचनाने इस मतको गलत प्रमाणित कर दिया है। दक्खिनीमे वह खडी बोली-से ही गया है और किसी भाषासे नही, यह स्पष्ट है।

वर्त्तमान कृदन्तके साथ 'हइ' और 'हइ' के स्थानपर 'है' और 'है' लगा-कर सामान्य वर्त्त० का रूप बनानेकी प्रवृत्ति दक्खिनीमे भी पायी जाती है।[3] उसी प्रकार उत्तम पु० एक० बहु० के उपर्युक्त रूप भी दक्खिनीमे मिलते है।[4]

क्रिया : अपूर्ण वर्त्तमान

अपूर्ण वर्त्तमानका सबसे अधिक प्रयुक्त प्रत्यय एक० मे –अदा है, बहु० मे इसका रूप –अदे हो जाता है

एक० पु० अषी अषिनु वट्टडी जाणि 'गिलंदा' ताहि (३१), साहिजादा साहिबिया साहि 'करदा' लल्लि (३४) साहि 'सुणदा' सार (६१), कउण 'करदा' काणि (६२), हस 'करदा' केलि (६३), सेष 'सुणदा' सार (८०), साहि 'दिहदा' दयण (८५), इह अउर 'उगदा' गयण (८५), साहि 'गहदा' पाणि, (८६), दुक्ख 'छिणदा' सिंचणा सुक्ख 'फलदा' जाणि (८६), तो न 'बुझदा' धूप (८८), वहु 'देषदा' कग्ग (९३) कउण 'हुअदा' हाल (१०५)।

बहु० पु० : लज्जा लोयन नच्चणा लोय 'हसदे' कल्हि (३४), झलहल 'झालदे' नयण (८६), जे 'लोअदे' जग्ग (९३), जे 'लोयंदे' अप्प (९५)।

---

१ वही, अनु० ३८१।

२. वही, अनु० ३७३।

३. वही, अनु० ३८१।

४ वही, अनु० ३८१।

किन्तु कही-कहीपर बहु० पु० के लिए भी एक० पु० रूप –अदा ही प्रयुक्त हुआ है ज्युही पाउमु रगिया ताइ 'मिलदा' सब्ब (९८), जो जाणि 'परदा' गत्त (९९) ।

स्त्री० एक० का प्रत्यय –अदी है कालिह् 'कहदी' केलि (८२) ।

अति सस्कृतके –अतिका भी प्रयोग अपूर्ण वर्त्तमानके लिए हुआ है, किन्तु उसमे लिग और वचनका ध्यान नही रखा गया है

केसा के कसि बधिया के छुट्टिया 'रुलति' (११), जाणे सर्पणि अप्पणा चर चीटुआ 'भपनि' (११), वइणी विधि विलविया मोती हैक 'ग्लनि' (१२), जाणे सीप सुमुष्पिया कठै कीर 'चुगति' (१३)

इन दोनो प्रत्ययोका प्रयोग पद्योमे ही हुआ है, यह अवश्य ध्यानमे रखने योग्य है ।

क्रिया : पूर्ण वर्त्तमान

पूर्ण वर्त्तमानके रूप भूतकृदन्त रूपोके माथ हइ' लगाकर बनाये गये है :

स्त्री० एक० : साहिव्या सहिन क्या 'भरी हइ' (२६), रग पर रग उढनी साहिजादइ 'दीन्ही हइ' (१०२) ।

पु० बहु० . सुलताण केलि की खडकी 'खडे हइ' (३८) ।

दक्खिनीमे भी पूर्ण वर्त्तमान इसी प्रकार बनता रहा है,[1] केवल उसमे बहुवचनका रूप 'है' है और एकवचनका रूप 'है' है । किन्तु यह सम्भावना अवश्य विचारणीय है कि पुरानी दक्खिनीमे भी 'हइ' न रहा हो, जो फारसी-अरबी लिपिके कारण 'है' पढा गया हो, क्योकि फारमी लिपिमे दोनो एक प्रकारसे लिखे जाने है ।

सम्भाव्य वर्त्तमान

सम्भाव्य वर्त्तमानकी रचना सज्ञा और अन्य पुरुषके लिए धातुमे –इ । –अइ लगाकर की गयी है :

–इ । अइ . जउ र 'विलग्गइ' अब (९) 'जीइ' तउ जिलाओ (५८), जउ कछू बीबीया 'बजावइ'—(५९), साहिव साहिव्या बिरह जइ जीवदा 'जाइ' (६५), तउ मूए हमारा क्या 'चलइ' (६६), सो दिल दिल अज्जइ 'मिलइ'—(७०), नदरि न 'लम्भइ' नदरि कु नदरि पुकारत 'जाइ' (७२),

---

१ वही, अनु० ३८४ ।

षूब-षूब होइ' त्यु करावउ (७५), तुमु तरकस अर ईयार 'वाएइ' दुनिया दाणसवद बडे 'वषाणइ' (७५), ।

—ए : एक स्थानपर —ए लगाकर भी यह रूप बनाया गया है . साहिबा आसा आणि 'आए' पग पाण (१०१) ।

उत्तम पु० सर्वनामोके लिए एक० के लिए -उ । अउ तथा बहु० के लिए —इ । अइ लगाकर सम्भाव्य वर्तमानके रूप बने है

—उं । अउं साहिजादा के ही 'कहू ' (कहु ?)' साहिब सूरति सुभ्भ (१०), हथ 'देषु' (५७) तउ 'कछु' कहु (५९), सदकइ एक फुरमाण 'लहु' (५९), तमासा एक अबही 'दिखावउ' (५९), टुकरे 'पाउ' तउ कछू नाम ना 'चलाउ' (१०९) ।

—इ । अइ तउ कछू हम 'गावइ' (५९), साहिजादा 'जिलावइ' (५९), तमासा एक अब ही 'दिषावइ' (५९), जहमतीया क्या 'जाणइ' (७३), जीमी आकास तल होइ तउ हम 'आएइ' (७३) ।

हो सकता है कि कु० मे प्रत्यय —अइ रहा हो, जिसका अनुनासिकका बिन्दु प्रतिलिपि क्रियामे छूट गया हो ।

मध्यम पु० बहु० मे सम्भाव्य वर्त्तमानका रूप —अउ लगाकर बनाया गया है जउ सब कोउ कुसादे 'होउ' (५९),

क्रिया : सामान्य भविष्यत् काल

भविष्यत्मे केवल सामान्य भविष्यत्के रूप मिलते है ।

सज्ञा तथा अन्य पुरुष एक० मे सामान्य भविष्यत् अन्य पु० के रूप धातुमे —अइगा । अहिगा लगाकर बने है :

—अइगा । अहिगा साहिजादा 'जीवइगा' (५५), क्या 'करहिगा मरा (५७), पूब कूं षूब होइगा' (४), फेरतइ फेरतइ षुदाइ रहम 'करइगा' (४८), षूब थी पूब 'होइगा' (४८), मेरे कु सहम 'होइगा' (५५), जोरा ही 'जाइगा' (५५),

बहु० मे धातुमे —अइगे लगा है . तउ 'कहइगे' ढढिनी तइ हुई बुराई (३०) ।

कही—कहीपर एक० मे —इहइ प्रत्यय भी जुडा है, किन्तु केवल पद्यमे : सोइ लज्जा 'रष्षिहइ' जाडे साहि निसीब (६६) ।

प्रथम पु० एक०मे प्रत्यय (पु०-अउगा), स्त्री० अउगी है

सुहगीया न 'बेचुगी' (५), तउ सुलताण सु 'कहुगी' (५), एकस एकस कु 'गहुगी' (५)।

द्वितीय पु० बहु०मे प्रत्यय-अहुगे है जउ न 'देहुगे' तउ सुलताण सु कहुगी(५)।

दक्खिनीमे भी प्रत्यय ये ही है; –इहइ अवश्य उसमे नही मिलता है।[1]

क्रिया : सामान्य भूतकाल

पुल्लिग एकवचनके क्रियारूप धातुमे सामान्यत आ। या। इया जोडकर बनाये गये है।

–आ। या। इया : बर 'बोलिया' वडाम (१), एकसि द्यउस देवर ढढणी मालणीका भेष 'कर्‌या (करचा)' (४), टुक एक 'गया' (५), मालनी सच 'जाण्या', (२०), साहिजादा सइतान र 'जाण्या' (२०), सुलताण बाराम बारी 'आयाँ' (२०), साहिजादा जमा मसीति 'आया' (२०), साप का सोरभ 'आया' (२२), अगर जाती 'जनाया' (२२), दीनु 'लिया' (२३) जो दरवेस ज्यु का त्यु ही 'धाया' (२३), अबे षुदाइकी फिरस्तइ 'आया' (२३), अप्पाए पर डर 'गया' जे आए मर (२५), साहिजादा पछइ सह 'था' (३८), चमाऊ हाथ वाह्‌या' (३९), साहिजादा उस ही महल मइ 'आन्या' (४०), पलग पर 'लेट्या' (४०), तबीबइ तबीब 'लाग्या' (४२), ओषदइ ओषद 'माग्या' (४२), बीबिया सहित सुलताण 'जाग्या' (४२), महल मइ आवतइ इद्रका गर्व भाग्या' (४२) बार दुइ च्यारि यो ही पुकार्‌या (४६), दरवेस हु नजरि की 'दीया' (४६), पलिग तइ उतरि करि सलाम ताई 'हूआ' (४९), यो करतइ दिन 'गर्‌या' (५०), तुलताण षान 'छड्या' (५१), बीबी हु रोवणा 'माड्या' (५१), दिल्ली माहि सोर 'पर्‌या' (५१), साहिजादे सु सइताण 'लर्‌या' (५१), दिल मे दिल 'आया' (५३), तइ तत्ता षान 'षाईया' (५४), देषतइ पाणी अजरि पहर एकइ 'पुकार्‌या' (५६), कीया सु 'करा' (५७), साहिजादा बोल्या' (५८), तबीबह रोग 'जाण्या' (५८), रोगी इ रोग 'मान्या' (५८), फुरमाण 'हूआ' (५८) स्वर 'हूआ' (५९), सोर 'छूट्या' (५९), दूहा ज्यु कह्या त्यू साहिजादा उठया (५९), मइ सउए। सुणि 'दिष्षिया' (६३), सोई 'हूआ' तबीब (६६), जीवदा कहि 'गाइया' (६८), अब 'कपीया'

---

१. वही, अनु० ३७५ तथा 'दक्खिनी हिन्दी' पृ० ५८।

'तबीब' (६८), बीबी बीहून 'पूछीया' (६८), मइ 'जाणिया' निसीब (६९), यो 'बोलिया' तबीब (६९), असि अस 'माणा' तर तरुणि जीमी जीवन मूरि (७१)। लाजहूं सोचणा, 'हूआ' (७३), साहिजादा आसिक 'हूआ' (७३), फुरमाण 'हूआ' (७३), पावहू पाव सुलताण दरबारि 'आया' (७४) सुलताण 'आया (७४), सुकराणा सुकराणा करता सामहा 'धाया' (७४), दावल 'बोल्या' (७५), ताति तूब्र राइ 'रगा' (७६), 'ढाहिया' ढगा (७६), साहिजादा आइ दावल दरहि 'वादा' (७६), सारमु 'किया' सुढार (८०), ढढिणि क्रा 'गाया' (८४), हूलकइ हालि 'अलापिया' (८४), सइ मुह सोम 'विलग्गिया' (८८), दीया देह स 'दज्झिया' (९६), माया ओढण 'भुल्लिया' (९७), ज्यु ही पाउसु 'रगिया' वाइ मिलदा सब्ब (९८), दाणसवद साहिजादी सु साहिजादइ 'कह्या' (१०१), करणीके भारनर साहिबा 'भर्या' (१०२) जाणे अपछरा अमी 'हर्या' (१०२), बार दुइ 'दीन्हा' (१०२) साहिजादइ 'लीन्हा'.(१०२), तीजे के आवन इ हवाल 'कीन्हा' (१०२), 'भग्गा' लाल सुभज्जणा (१०५), टुक एक जातइ साहिजादइ 'कह्या' (१०६), कुमकुमाके जल महि तइ 'निकस्या' (१०६), अबीर महि षोजइ षोज 'देष्या' (१०६) प्याला भूजा 'देष्या' (१०६), देषत ही 'हस्या' (१०६), षूब स पत्थर 'भग्गीया' (१०७), लाजनु सकुचि 'आया' (१०८), जानहु चाद बादलइ 'छिपाया' (१०८), सुलताण 'सुण्या' (१०९), सुलताण 'कह्या' (११०), जिण ही जीव 'अरगिया' (११२), हलकइ जलहल 'ओल्हिया' (११२), टुकरे गउष परि 'चीना' (११३), 'हूआ' हुअदे काइ (११४)।

केवल कही-कहीपर –अउ। ओका भी प्रयोग हुआ है हत्था काम स पीउ भउ पिउ हत्था 'भउ' काम (१५), एक पु गरा मेरइ 'हो' पुराणा (४६), लज्जा 'गउ' गुण आ गुणी (६१), लज्जा 'गउ' जुअ गोवणा (६१), ।

स्त्रीलिग एकवचनमे –ई प्रत्यय लगा है

–ई बीबियाँ लाजलो 'भइ' बधाना (२), बीबी बिवाना 'बइट्ठी' (३), मालनी फिरि 'आई' (५), साहिब 'सारी' वत्तडी (६), या तू इहि काम 'आई (९), हूँ इहि काम 'आई' (९), 'सोनी' गल्हरियाह (१७), बीबियाँ 'आई' (२०), बीबिया हरम द्वार 'धाई' (२०), जमा-राति 'आई' (२०), गुलाबीया 'जागी' (२२), जमा मसीति भिस्त क्या भोरइ 'लागी' (२२), साहिजादइ किसउ की डीवी किसऊ की डागी किसहू

की षालरी 'चोरी' (२३), दुनिया 'विछोडी' (२३), ढढिनी गाइबा ही गुमान 'बोली' (२७), जाणे अगि अणगिया 'पडी पुराणइ द्रगि (२८), साहि साहिबा 'उचाई' (३०), तउ कहइगे ढढिनी तइ 'हुई' बुराई (३०), पुहर एक या राति 'बीती' (३८), डीवी डाग पल्लरी 'अतीनी (३८), 'जगी' किरण सुविहाणइ (४०), फजरि 'हूई' (४८), इतनई करत दीबी बिवाना 'आई' (४८), अम्मा आणि आगइ परी 'हुई' (४९), या करतइ राति 'पाई' (५०), दूसरी वइरणि 'आई' (५०), ढढिणिआ णीकी 'करी' (५२), ओहि ओहि इह तउ उलटी 'कही' (५२), ढढिणी कहि 'रहि' (५३), साहिबा 'बोली' (५३), ढढिणी 'बोली' (५५), हम तबही 'पाई' (५५), जब तू सहण क्या 'सिराई' (५५), हमारा क्या तू 'पराई' (५५), परतीति 'धाई' (५६), तबीबका भेष करि सुलताण कइ दरबार 'आई' तबीबानी तबीबानी 'पुकारी' (५६), अवाज्या 'वाजी' (५६), ढढिणी 'बोली' (५७, ५९, ६६), आज 'अणंदी' वेलि (६३), इती बात करतइ बीबिया 'ऊठी' (७३), दीन दुनिया एक ठउड होत 'जाणी' (७३), बीबिया 'बोली' (७३) सुलताण 'मानी' (७३), सुलताण पासि 'गई' छूटी (७३), अमहु षइर 'करी' (७५), नर ततइ नफेरी 'मडी' (७६), भेरी भूगल भीम 'नढी' (७६), सहणाइ 'तढी' (७६) तरह म 'लग्गी' वेलि (८२), 'गई' गुण रष्षणहार (८३), उह रितु 'गई' (८९), अउर रितु फजर 'भई' (८९), मुरगहु बाग 'दई' (८९), गाइणहु ललित 'कई' (८९), तारह का तेज 'छई' (८९), सुविहाण अबर 'दई' (८९), वसत रितु पाछी 'भई' (८९), धूप काला कहल 'लई' (८९), पढमा वी सिगारी 'बोली' (९२), जोगिणी 'बोली' (९३), जोगिणी 'बोली' (९५, ९७, ९९), भोगिणी 'बोली' (९४, ९६, ९८, १००), साहिजादे कु ठड 'लागी' (१०१) फुरमान ही 'धाई' (१०२), जिणइ दुणिया 'जाणी' (१०२), 'भग्गी' भम्म सु बाल (१०५), 'गई' सासू सरणागता (१०५), साहिबा अजहु न 'आई' (१०६), आपइ 'छिपी' किनहु 'छिपाई' (१०६), खइर करतइ कोड 'कहि' मन अप्पणइ विचारि (१०७), बिभगन 'भग्गी' नारि (१०७), मा आवती 'चीनी' (१०८), चादरि सिर परि 'लीनी' (१०८), मा अरदास 'करी' (१०८), कइमति 'कराई' (११०), कुतबदी 'गमाई' (११०) धरि धरि 'लग्गी' लाइ (११२)।

कुछ स्थलोपर –आना, ईन, ईना, ईन्हाके प्रयोगसे पुल्लिग और –ईनीके प्रयोगसे भी स्त्रीलिग रूप बने हैं—

–आना । ईन । ईना । ईन्हा खून हमहिं 'दीन' (१०८), जु फुरमाण 'दीना' (७५), तब सुलताण 'रिसाना' (४६), सुलताण फुरमाण 'दीना' (११३), बे पुड 'कीन्हा' भजि (२९)।

–ईनी साहिजादा चादरि सिर ऊपरि 'लीनी' (२२), दोस्तान दोस्तान करि हस्त क्या 'दीनी' (२२), सुलताण सुरति 'कीनी' (३८), हत्थइ हत्थ 'लीनी' (५६) ।

पुल्लिग बहुवचन रूप धातुमे –ए।अए लगाकर बने है

–ए । अए : पाँच सोवन्न के टका देवरइ 'धरे' (४), निवाज करणइ सुलताण 'लग्गे' (२४), दीवे 'लग्गे' (२४), सादा नइ 'वग्गे' (२४), साहिजादे साहिब्बियाँ ढढ्ढिढनि ढुडे 'मभि' (२९), मालनीके उंसान 'भागे' (३०), साहिजादेके षवे फुरकणइ 'लागे' (३०), दीदे, 'दुराए' (४०), दानसवद पानी अजरणइ 'लागे' (४४), मत्रहु परजणइ 'लागे' (४४), तबीब तमाम सब सुलताण 'कोके' (४४), दिल्ली सहर मइ ए ज 'घेरे' (४७), अबे फिरस्तइ 'फेरे' (४७), यो करतइ रोज दुइ च्यारि 'गले' (५१), तबीबा हाथ 'घरे' (५१) तबीब होते ते सुलताण 'कोके' (५१), आणि दरबार 'रोके' (५१), दावल कु तीन रोज 'हुए' खाणा खाया (५२), दीदहु सु दीदे 'जोरे (५५), लष 'दउरे' (५६), साहिजादे दीदे देषणइ 'लागे' (५८), तबीब के रोर 'भागे' (५८), सुणतइ ही लल्ले 'कीए' (६७), कपण 'लागे' अग वल एण सुणंदा हल्ल (६७), दुसमणा के दिल 'जरे' (७४), वरततइ नीसाण 'दग्गे' (७६), सज्जणा 'जग्गे' (७६), 'वाए' वज्जण वज्जणा (८१), 'पय (पये ?)' ढढणिप्राके बोल (८१), साहिजादा कुमकुमई वरषे 'भराए' (९०), वारि उछहु 'लगाए' (९०), अबीरहु घर वणाए' (९०), कपूर कस्तूरी भूषण 'भराए' (९०), फूलहु वितन 'तणाए' (९०), गायणहु 'गाए' (९०), दोउ दूहे 'कहे' (९१), माँ के सिर ऊपर फेरि फेरि 'भाने' (१०७), सुलतान सुणतइ जुहरी बुलाए' (११०) ।

कही कहीपर –ए का प्रयोग आदरार्थक बहु० के लिए भी हुआ है साहिजादा दावल कइ दरवारि जाइ 'वग्गे' (२४) ।

कही-कही धातुमे या । इया लगाकर बहु० रूप बने है .

दीदे दिग्घ 'उचाइया' (२८), जे मुत्ताहल 'दिट्ठिया' वइ वर 'गजरियाह'[1] (६४), 'निहसिया' नीसाण नादा (७६) ।

---

१. इसमें –ह स्वाथिक लगता है ।

–आनइ । ईनइ : 'न' युक्त रूपमे –'ए । ऐ' के स्थानपर कदाचित् प्राचीनतर –'अइ' प्रत्ययका प्रयोग हुआ है सुल्ताण देश देस मुलक मुलक कु फुरमाण 'दीनइ' (३८), सुलताण टुक एक 'मुसक्यानइ' (४०), मानु चाद तारा सु 'रिसानइ' (१०९) ।

इन उदाहरणोमे एक-दो आदरार्थक बहु० के भी हो सकते है ।

स्त्रीलिग बहु० का प्रत्यय –या । इया । ईया है ।

यां । इयां । ईयां : पक्कीया जभीऱ्या नारिऱ्या 'भऱ्या' (४) बेलिया बकिया 'कऱ्या' (४), साहिजादे के अग्गइ घऱ्या' (४) दोइ साहिजादे अप्पणइ हत्थइ 'कीया' (४) दो दो च्यारि च्यारि बटे 'दीया' (४), दीदे दिग्घ 'उचाइया' (२८), हसतइ ही वात्या 'किया' (३९), 'बुझाईया 'बुझाईया' (५८), साहिजादा किणि 'बुझाइया' (५८)' जिणि 'लगाईया' तिणि 'बुझाइया' (५८), अब उसमु क्या करण 'आईया' (५८), साहि घग साहिबिया जिणि 'दिण्णिया' सु जाणि (६१), सास सरदा 'वुट्ठिया' (१०३), की पद पतरि 'चुक्किया' (१०४), बज्जे बज्जत 'बज्जिया' (११४) ।

इन उदाहरणोमे-से कुछ आदरार्थक बहु० के भी हो सकते है ।

कही-कहीपर –आ । या । इया युक्तरूप एक० मे प्रयुक्त मिलता है :

ढढ्ढिनी मालनीका मेष 'कऱ्या' (४), मालिनिया दिट्ठिइया' (१७), साहिब सची 'दिट्ठिया' (१७), मालणिया कहि 'नट्ठिया' (१९), तू कहाँ 'था' (३८), वहा पुज्जइ दिल 'लम्भिया' (६२), मानहु कमल 'निकस्या' (१०६) ।

कही-कहीपर बहु० के स्थानपर एक० रूप भी मिलता है

पु० मेरे दीदे दूषन 'लग्ग' (८), गज्जइ गयण न 'नच्चिया' पावस हुदे मोर (३३), हमारे दीदे दूषणइ 'आया' (३९) दरवेस वलइं वलइ 'धाया' (३९) दउ 'लग्गिया' सनत्थ (५०), लज्जा 'गउ' जुअ जोवणा (६६) 'मूआ' बह्दा साहि (११४) ।

स्त्री० : कइ 'सोनी' गल्हरियाह (१७), ढढिणि 'ढोरी' अपिया (५४), जिण 'हीजीय' जहमत्तिया (६६), 'बाजिया' ढप ढोल ढगा (७६), दुइ नटिणी आइ षरी 'हुई' (९१)

–न युक्त रूपोमे भी यह प्रवृत्ति मिलती है जिहि मुहर जभीरिया 'लिन्न'

(७), सुलताण निवाज्या 'कीनी' (३८), दानसवंदइ अपनइ अपनइ घरह ही वाट्या 'लीन्ही' (३८), किनाबइ रही त्या किताबा 'लीनी' (३८), डीवी डाग मल्लरी न जाणु कहा थी लीन्ही' (४७), साहिजादइ जहमन्या 'कीन्ही' (४१), दुनी माहिजादइ इया मत्या 'लीनी' (४१)।

किन्तु यह असम्भव नही है कि अनुनासिकका बिन्दु जो बहु० मे लगा रहा हो, कु० मे प्रतिलिपि क्रियामे छूट गया हो।

–आ, या, इया लगाकर सामान्य भूत दक्खिनीमे भी बनता रहा है।[1]

पूर्ण भूत

पूर्णभूत कृदन्तके साथ 'था' का कोई रूप लगाकर बना है :

बदा बदियहुकी बदिगी देषणइ हु 'गया था' (४९), पुगरा मेरइ जमा मसीति देषणइ 'गया था' (४६)।

भूत कृदन्तमे 'था' लगाकर पूर्णभूत दक्खिनीमे भी बनता रहा है।[2]

अपूर्ण भूत

कोई उदाहरण नहीं है।

सयुक्त क्रिया

कुछ संयुक्त क्रियाएँ भी मिलती है मेरे दीदे 'दूषण लग्ग' (८), निवाज 'करणइ सुलताण लग्गे' (२४), 'गया जे आण मर' (२५), साहिजादेके पवे 'फुरकणइ लागे' (३०), तबीबइ 'ओतरइ लागी' (५९), मडप 'छाव-णइ लागे' (७१), गायणे 'गावणइ लागे' (७६), निवासा 'हउणइ लागी' (१०१), ओह बेला लाल धरती हुई रही' (१०९) फकीर 'लूटणइ लागे' (११३), सादा नइ 'वाजणइ लागे' (११३)।

इसी प्रकार सयुक्त क्रियाएँ दक्खिनीमे भी बनती रही है।[3]

वर्तमान कृदन्त

वर्तमान कृदन्त रूप धातुमे -ता।ती।तइ तथा -ते लगाकर बने है :

---

१. दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास, अनु० ३८३

२. वही, अनु० ३१६

३. वही, अनु० ३८६

–तइ । तइं : जिसकी सूरति 'लोवतइं' मेरे दीदे दूषरग लग्ग (८), 'पूछ-तई पूछतइ' जमाराति आई (२९), इतनी बात 'करतइ' – (३८), 'हस्तइ' ही वात्या कीया (३९), हमारे 'हस्तइ हस्तइ' दीदे दूषणइ आया (३९), साहिजादे 'जागतइ' 'वेल्हतइ' जगी किरण मुविहाणाइ (४०), इतनी वात्या 'करतइ' साहिजादइ जहमत्या कीन्ही (४१), महल मइ 'आवतइ' इन्द्र का गर्व भाग्या (४२), दरबार 'देखतइ' दरिया का गर्व वादे (४३), 'फेरतइ फेरतइ' पुदाइ रहम करेगा (४८), यो 'करतइं' दिन गर्या राति पाई (५०), यो 'कर-तइ' रोज दुइ च्यारि गले (५१), इतनी 'करतइ' कपरे फेरे (५५), 'देष-तइ' पाणी अजरि—(५६), 'सुणतइ' ही लल्ले कीए (६७), इती बात 'करतइं' बीबिया ऊठी (७३), इतनी बात 'करतइ' (७६,८९,९०,९१,१०१) तीजइ कइ 'आवतइ' हवा कीन्हा (१०२), टुक एक 'जातइ' साहिजादा कह्या (१०६) 'सुणतइ' जुहरी बुलाए (११०) ।

–ते फिरस्ता फिरस्ता 'करते' दरवेस वलइ वलइ धाया (३९) ।

किन्तु हो सकता है कि प्रतिलिपिमें भूलसे 'करतइ'का 'करते' हो गया हो ।

–त · कही-कहीपर केवल –त जोडकर वर्तमान कृदन्त बनाया गया है इतनी 'करत' बीबी बिवाना आई (४८), नजरि 'पुकारत' जाइ(७२) दीन दुनिया एक ठउड 'होत' जाणी (७३), 'देषत' ही हस्या (१०६), वज्जे 'वज्जतं' 'वज्जिया (११४) ।

–तइ । तइ और-ते मे से प्राचीनतर-तइ । तइ ही ज्ञात होता है ।

ता । तां : धातुमे –ता । ता लगाकर वर्तमान कृदन्तके पुल्लिग रूप बनाये गये है : 'पूछता' सदि हइ (२०), सुलताण फुरमाण 'देता' ई हइ (४०), हरम द्वार 'जाता' सुलताण टुक एक मुसक्यानइ (३९), मुझइ 'जाणता' हइ (४९), साहिजादा 'हसता' हइ पग देषि 'ऊलसता' हइ (१०८), सुकराणा सुकराणा 'करता' सामहा धाया (७४) ।

–ती : इसी प्रकार –ती लगाकर स्त्रीलिग रूप बनाये गये हैं । मुहर मुहर जंभीरिया 'मागती' हइ (५), मा 'आवती' चीन्ही (१०८) ।

उपर्युक्तके अतिरिक्त –अन्दके विभिन्न रूप लगाकर भी वर्तमान कृदन्त बनाये गये है ·

एकवचन : अंदा : एह 'करदा' मुज्झ हइ उर 'करदा तुज्झ' (३७), साहिब साहिब्या बिरह जउ 'जीवंदा' जाइ (६५), कपण लग्गे अग वल एग

'सुणंदा' हल्ल (६७), 'जीवंदा' कहि गाइया (६८), सास 'सरंदा' वुट्ठिया (१०३), खइर 'करंदा' कोडि कइ—(१०७) ।

–अंदइ : कुसल 'कहंदइ' बार (१०३) ।

–अंदे योग 'करदे' गोर (३३) हुआ 'हूअदे' काइ (११४) ।

–अंदे –अदइका ही किंचित् परवर्ती रूप लगता है ।

बहु० –इंदीइ अंदिए : लोयण ते 'लोइंदीइ, । लोअदिए' (९३-१००) ।

–ता, –ती, –त युक्त वर्तमान कृदन्तके रूप दक्खिनीमे भी मिलते हैं।[1]

अदा वाले रूप कु० मे पद्यो तक ही मीमित है और पूर्ववर्ती भाषारूपसे लिये हुए ज्ञात होते हैं ।

भूत कृदन्त

भूत कृदन्त रचनामे निम्न प्रकारसे बनाये गये है :

एक० पु० । स्त्री०–इया : वइणी बधि 'बिलबिया' मुत्ती हेक रुलति (१३), तू रस कामंधा 'भूषिया' (३२), मुज 'मुंदिया'न जीव (६०), वेरु मडप 'मडिया' (७७) ।

–ये (य+अइ) -एक जोगिणीका स्वाग किये (९१) ।

एक० पु० –आ : साहिजादा 'षरा' हइ (२७), यह दिल 'जोरा' ही रहइगा 'जोरा' ही जाइगा (५२), वेगि आनहु नत 'मूआ' (७३), देषइ तउ पग 'लस्या' (१०६), प्याला 'भूजा' देष्या (१०६), प्याला 'भग्गा' हइ (१०८), एक पाइ 'षरा' कुतुब दी अरदास करइ (१११) ।

एक० स्त्री० –ई : साहिबा सहिन क्या 'भरी' हइ (२६), देवर ढढ्ढिनी अगइ 'षरी' हइ (२६), तबीब की 'जाई' नही (५३), अमा आणि आगइ 'षरी' हुई (४९), सुलताण पासि गई 'छूटी' (७३), साहिबा अरगजइ 'भीनी' हइ (१०२), जाणु काठ की पूतरी कुरि 'वणाई' (१०२), लक लहक्की झीणिया की माणी रति भार (१०३), की 'भीनी' रसभार(१०४) ।

बहु० पु० । स्त्री० –इयां । यां । आं : 'षाइया क्या कहावइ (५), जिणि 'खाइया' ते दिषावहु (५), अग्गा अग्गम 'नट्ठिया' (६), केसा के कसि 'बधिया' के छुट्टिया रुलति (११), जाणे राई वल्लिया फूल्ली 'नीकलिया' (१६) बे मालनिया 'दिट्ठाइया' के सोनी गल्हरियाह (५७), दावर कु

१ वही, अनु० ३८० ।

तीन दिन हुए खाना 'खाया' (५२) जाणे जलहर 'वुट्ठिया' सारसु कीया सुढार (८०), 'रीझडिया' झड मडि करि—(९४), को घरिया घर 'लग्गिया' (९९), साहिजादे 'षथा' न होउ (१८), जे 'दिट्ठा' ही पिट्ठ (८५) ।

बहु० पु० –ए : हमहु सुलताण पेरो साहि 'उपाए' बीबी विवाणा 'जाए' (१०८) ।

बहु० –इया । याके उदाहरणोमे-से कुछ आदरार्थक बहु० के हो सकते हैं और कुछ स्वार्थिक बहु० के भी ।

कही-कहीपर एक० से ही बहु० का भी काम लिया गया है : ही 'उट्ठा' दिट्ठाइया दीहा पचइ च्यारि (१४) ।

कही-कहीपर एक० मे भी बहु० रूप अनुनासिकके आगमके कारण हो गया है : बे मालनी 'आइया' करे (४), दीनु 'लीया' (२३) ।

पूर्वकालिक कृदन्त

कु० मे पूर्वकालिक कृदन्त दो प्रकारसे बनाये गये है क्रिया के धातु रूप-मे –इ। ई लगाकर तथा उसमे –अ लगाकर

–इ । ई केसा के 'कसि' बधिया के छुट्टिया रुलति (११), लक घन 'कइ मुट्ठिया विध रसुरगी वाम (१५), 'लइ' चलि संगरियाह (१७), मालणीया 'कहि' नट्ठिया (१९), दोस्तान दोस्तान 'कहि' हस्त क्या दीनी (२२), इनइ बीच साहिजादा दावल कइ दरवारि 'जाइ' वग्गे (२४), बे पुड कीन्हा 'भजि' (२९), ढढ्ढिनिया हिय हत्थ 'लइ' (३६), आरतिया 'करि' हेरि (३६), फिरस्ता फिरस्ता करते दरवेस 'वलइ वलइ' धाया (३९), इस ही बीच साहिजादा बीबीयनु पकरि 'कइ' उस ही महल मइ आन्या (४०), दरवेसहु नजरि 'की' दीया (४६), हाला 'कइ' मारणा न 'थी '(४७), अमां 'आणि' आगइ षरी हुई (४९), पलिंग तइ 'उतरि करि' सलाम कु ताई हुआ (४९), 'आणि' दरबार रोके (५१), तबीब का भेष 'करि' सुलताण कइ दरवार आई (५६), ते तइ ही हसि हसरा 'वइ' वर गंज-रीया (६४), जीवदा 'कहि' गाइया (६८), सो दिल दिल अज्जइ मिलइ तउ 'मिलि' मगल गाउ (७०), दुइ दिट्ठिया 'रसाइ' साहिजादा 'आइ' दावल दरहि वादा (७६), हलकइ 'हालि' अलापिया (८४), हलकइ हुरक 'बजाइ' (८४), ते सु कहदी 'गाइ' (८४), दुइ नटिणी 'आइ' षरी हुई (९१), रीझडिया झडि 'मडिकइ' सरबसु अप्पण हार (९४), जे जुग 'जोइ' अरत्त (९७), षइर करतइ कोडि कहि मन अप्पणइ

'विचारि' (१०७) पग 'देषि' देषि उलसता है (१०८), लाजनु 'संकुचि' आया (१०८), मा के सिर ऊपर 'फेरि फेरि' माने (१०९), ओह बेला लाल धरती 'हुइ' रही (१०९), रहे सु रेष उसाहि (११२), 'लइ' टुकरे गउष पर चीना (११३)।

अ साहिजादा साहिबा हिया दउ लग्गिया 'सनत्थ' (५७), कंपण पाछइ साहा सुपासण 'चडाया (चड+आया)' (७४), आसिर अष्षत 'भण' दीया (८०), भग्गी 'भम्म' सुबाल (१०५) ।

दक्खिनीमे भी दोनो प्रत्यय मिलते है।[1]

अव्यय : अवधारण-वाचक

इ। इं। ई। ही। हीं: सुलताण फुरमाण देती 'ई' हइ (४), ही उट्ठा दिट्ठाइया दीहा पच 'इ' च्यारि (१४), केहु की वाट 'इ' चाहते हइ (२१), जो दरेस ज्यु था त्यु 'ही' धाया (२३), उस 'ही' महल मइ आन्या (४०), वृन्न 'इ' साहिजादा षरा हइ (२७), कपूर पान 'इ' न भावइ (४०), हस्तइ 'ही' वात्या कीया (३९), फजरि हुई तबीब 'इ' तबीब लाग्या (४२), ओषद 'ई' ओषद माग्या (४२), जो 'इ' दानसवद आवइ (४५, ५०), तिस 'ही' सु पुकारइ (४४, ५०), इतन 'इ' करत बीबी बिवाना आई (४८), ओ 'ही (ओह+ई ?)' हालु (५०), हम तब 'ही' पाई (५५), तमासा एक अब 'ही' दिषावइ (५९) हलक 'इ' हालि अलापिया (८४), रत्ता सो'इ' अरत्त (९९), देषत 'ही' हस्या (१०६), अबीर महि खोज 'इ' खोज देष्या (१०७), सुलताण कह्या तेरा 'ई' हइ (१११) ।

चा। ची पुहर एक 'चा' राति बीती (३८), पढमा 'ची' सिगारी बोली (९२) ।

हु। हुं। हू। उ किस 'हू' की डीवी (२३), किस 'हू' की डागी (२३), किस 'हू' की षालरी चोरी (२३), दरेस 'हु' नजरि की दीया (४६), मत्र 'हु' परजनइ लागे (४४), बीबी 'हु' रोवणा माड्या (५१), दावल दानस पूगरी दीदे दीठि 'हु' भूरि (७१), दु'हु' दिट्ठिया रसाइ (७२), मुरग 'हु' बाग दई (८९), गाइण 'हु' ललित कई (८९), दो'उ' दूहे कहे (९१) ।

---

१. –इ के लिए दे० 'दक्खिनी हिन्दी', पृ० ५९, तथा --उ के लिए दे० 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० ३९२ ।

'ई' तथा 'च' दक्खिनीमे भी है। 'च' के सम्बन्धमे डॉ० श्रीराम शर्माका यह मत है कि वह दक्खिनीमे मराठीसे आया है,[1] इस रचनाके साक्ष्यके अनुसार मान्य नही है।

अव्यय : स्थिति-वाचक

सामहा सुकराणा–सुकराणा करता 'सामहा' आया (७४)।

तर। तळ भू 'तर' नच्चइ नयण (१२), जिमी अकास 'तळ' होइ तऊ हम आणइ (७३), करणी के भार 'तर' साहिबा भर्‌या (१०२)।

पासि सुलताण 'पासि' गयी छूटी (७३)।

साथि : कइ साहिजादे कइ 'साथि' गोर मइ बाहणा (५१)।

आगइ। अगइ . दो सी अग्गा 'आगइ' बीवी बिवाना बइट्ठी (३), साहिजादा 'आगइ' सरकणइ न पावइ (३), साहिजादे कइ 'अग्गइ' षर्‌या (४), 'आगइ' दावल दानसवद की पूगरी हइ (४), देवर ढड्ढिनी 'अगइ' षरी हइ (२६), अमा आणि 'आगइ' षरी हुई (४९)।

अग्गम अग्गा 'अग्गम' नट्ठिया (६)।

पाछी। पछइ। पाछइ मुहर मुहर जभीरिया नकी 'पाछइ' लावहु (५), 'पाछइ' साहा सुषासण—आया (७६), 'पाछइ' क्या कीजइ तबीबिया नु (५९), साहिजादा 'पछइ' सह था (३८), मा साहिबा का न्याउ अछइ उसकइ दावल 'पछइ' (१०९)।

तल, ऊपर, पास, पीछे, आगे तथा साथ दक्खिनीमे भी है।[2]

अव्यय : स्थान-वाचक

जहां : हत्थइ हत्थ लीनी 'जहा' साहि कुतुबदीन गाजी (५६)।

कहां . तू 'कहा' था (३८), न जाणु 'कहा' थी लीन्ही (४७), साहिजादा साहि 'कहा' (४९)।

जहा, कहा दक्खिनीमे भी है।[3]

---

१ 'दक्खिनी हिन्दीका उद्भव और विकास', अनु० ३६४।

२ वही, अनु० ३८०–३९६।

३ वही, अनु० ३९५।

अव्यय : काल-वाचक

अज्ज सो दिल दिल 'अज्जइ' मिलइ तउ मिलि मगल गाउ (७०)।

कल्हि । काल्हि : लोइ हसदे 'कल्हि' (३४), 'काल्हि' कहदी केलि (८२)।

एताल 'एताल' ल्यावहु (५)।

कदि अबे जमाराति 'कदि' कइ (२०)।

तब 'तब' सुलताण रिसाया (४६), हम 'तब' ही पाई (५५)।

जब 'जब' की सहण क्या सिराई (५५)।

अब 'अब' उस सु क्या करण आइया (५८), तमासा एक 'अब' ही दिपावउ (५९), 'अब' कपिया तबीब (६८)।

ततइं . नर 'ततइ' नीसाण दग्गे, (७६) नर 'ततइं' नफेरी मडी (७६)।

ज्युं-ताइ 'ज्यु' ही पाउसु रगिया 'ताइ' मिलदा सब (९८)।

ज्यु-त्युं . दूहा 'ज्यु' कह्या, 'त्यु' साहिजादा उठ्या (५९)।

तो . 'तो' न बुझदा धूप (६८)।

इतइ बीच, एतइ बीच : 'एतइ बीच' साहिजादा जमाम सीति आया (२०), 'इते (इतइ?) बीच' साहिजादा किसऊ की डीवी—चोरी (२३), 'इतई बीच' साहिजादा दावल कइ दरवारि जाइ वग्गे (२४), 'इतइ बीच' साहिजादा पछइ सह था (३८), 'इतइ बीच' साहिजादा बीबीय नु पकरि कइ उसही महल मइ आन्या (४०)।

अज्ज, अताल, कद, तब, जब, अब, पछे तथा बीच दक्खिनीमे भी मिलते है।[1]

अव्यय : रीतिवाचक

जिम । ज्युं अस-अस माणा तर तरुणि 'जीमी' जीवण भूरि (७१), पाधर सर 'जिम' कढीइ नेह समट्ठा निट्ठ (९२), ज्यु गज बगरियाह (१०१)।

जिउं-किउ 'जिउं किउ' दक्खा वल्लिया जउ र विलग्गइ अब (९)।

ज्युं-त्युं जो दरवेस 'ज्यु' था 'त्यु' ही धाया (२३), पूब खूब होइ 'त्यु' करावउ (७५)।

यो बार दुइ च्यारि 'यो' ही पुकान्या (४६), 'यो' करतइ दिन गन्या राति पाई (५०), तिस ही सु 'यो' कहइ (५०), 'यों' करतइ रोज दुइ च्यारि गले (५१), 'यो' ही पुकान्या (५६), 'यो' बोलिया तबीब (६९)।

१. वही, ३९५-३९६

कुं करि . जाणे पूतरी 'कु करि' वणाई (१०२)।

जू, यू क्यू कर दक्खिनीमे भी हैं।[1] पुरानी दक्खिनीमे भी 'यो' रहा हो तो आश्चर्य न होगा, क्योकि फारसीमे उसे 'यू' पढा जा सकता है, किन्तु 'जू' और 'क्यू कर' के साथ 'यू' होना अधिक सम्भव है।

अव्यय : परिमाण-वाचक

टुक एक 'टुक एक' धीरे (४), 'टुक एक' गया मालनी फिरि आई (५), 'टुक एक' जमा मसीति मिस्त क्या भोरइ लागी (२२), सुलतान 'टुक एक' मुसक्यानइ (३९), 'टुक एक' जरतइ—(१०६)।

अव्यय संयोजक

जउ-तउ 'जउ' न देहुगे 'तउ' सुलताण सु कहुगी (५), तिउ किउं दक्खा वल्लिया 'जउ' र विलग्गइ अब (९), 'तउ' कहइगे ढढ्ढिनी तइ हुई बुराई (३०), 'जउ' जोरा 'तउ' तुज्झ ही (३७), 'जउ' गोरा 'तउ' तुज्झ (३७), जीवइ 'तउ' जिलाओ (५८), 'जउ' सब कोउ कुसादे होउ 'तउ' कछू कहु (५९), 'जउ' कछू बीबिया बजावइ 'तउ' हम गावइ (५९), 'तउ' मूए हमारा क्या चलइ (६६), देषइ 'तउ' पग लस्या (१०६), टुकरे पाउं 'तउ' कछू नाम न चलाउ (१११)।

तरह साहिब साहि घर दिया 'तरह' स लग्गी बेलि (८२)।

ज-सु . 'ज' घाउणा 'सु' घाउ (७०)।

जइ : साहिब साहिब्या बिरह 'जइ' जीवंदा जाइ (६५), नदरि 'ज' लम्भइ नदरि कुं नदरि पुकारत जाइ (७२)।

नत । नांतर · 'नानर मुहर मुहर जंभीरिया नकी पाछइ त्यावहु (५), 'नत' साहिजा न साहिवा (७०), 'नत' भूआ (७३)।

सद कइ · 'सद कइ' एक फुरमाण लहु (५९)।

वल : कपण लागे अग 'वल' एण सुगादा हल्ल (६७)।

परि बीबी दूष लइनइ कहइ 'परि' दूषना न जाणइ (४०)।

कइ, के, की : जाणे 'की' करतारिया (१०), केसा 'के' कसि बधिया 'के' छुट्टिया रुलति (११), फकीर मारणा हइ 'कि' जिआवणा हइ (४८), 'कइ' साहिजादे के साथ गोर महि वाहणा (५१), महल हतइ ढोल 'कई' मदिरि मागी (५९)।

---

१ वही, ३९७-३९९।

जांणि । जाणुं । जाणे : पक्की 'जाणि' जभीरिया उसका वरण सुहंदा झग्ग (८), 'जाणे' आण बधाइया (१२), 'जाणे' सर्पनि अप्पणा चर चीटुवा भषति (११), 'जाणे' जीवण इक्करा बे पुड कीन्हा भजि (२९), अंषी अंषिनु वट्टडी 'जाणि' गिलदी ताहि (३१), 'जाणु' साहिजादे की दूसरी वइरणि आई (५०) 'जाणे' सभ सुमुष्षियां सिधु सपत्ता सूर (७८) 'जाणे' जलहर वुट्ठिया (७९), सुष्ष फलदा 'जाणि' (८६), 'जाणु' काठकी पूतरी कु करि वणाई (१०२), 'जाणे' नील कमलपर बे दीयेकी जाला (१०२), 'जाणे' अपछरा अमी हरया (१०२) ।

मानहु । मानुं 'मानहु' कमल विक्स्या (१०६), 'मानु' चाद तारा सु रिसानइ (१०९) ।

'तउ' दक्खिनीमे 'तो' के रूपमे मिलता है ।[1]

अव्यय : स्वीकार-निषेध-वाचक

हां . 'हा' मा जाणता हू (४९), 'हा' साहिजादे जोवणा षुब हइ (४), 'हा' साहिजादे हू इहि काम आई (९) ।

न । ना : साहिजादा आगइ सरकणइ 'न' पावइ (२), षाहि 'न' कच्चा पान (३२), बीबी दूष लइनइ कहइ परि दूषना 'न' जाणइ (४०), डीवी डांग षल्लरी 'न' जाणु कहा थी (४७), 'न' जाणु निवासा 'न' जाणु फजरि (४५, ५०, ५६), 'न' जाणीइ क्या सु रोग (९०), टुकरे पाउ तउ कछू नाम 'ना' चलाउ (१०९) ।

नहीं तबीब 'नही' (५३), तबीब की जाई 'नही' (५३) ।

'हा', 'न' 'नही' दक्खिनीमे भी है ।[2]

अव्यय : विस्मयादि बोधक

इओही : 'इओही' साहिबा णजरि साहिबा णजरि (५६) ।

ओहि-ओहि . 'ओहि ओहि' इह तउ उलटी कही (५३) ।

'एयो' के रूपमे 'इओही' दक्खिनीमे भी है । इसे डॉ० श्रीराम शर्माने तेलुगु बताया है,[3] जो कि कु० के उपर्युक्त साक्ष्यके प्रकाशमे ठीक नही है ।

■

---

१. वही, अनु० ३९८ ।
२. वही, अनु० ३९९
३ वही, अनु० ४००

'कुतबशतक'की भाषा और 'राउल वेल'की टक्की

ग्यारहवी शती ईसवीका एक शिलाकित भाषा-काव्य है जिसमे अन्य छह भाषाओके साथ—जो भारतीय आर्य भाषा परिवारकी तत्कालीन प्रमुख औक्तिक भाषाएँ है—टक्कीका भी वह स्वरूप मिलता है जो अपभ्रशकी स्थितिसे निकलकर आधुनिक औक्तिक भाषाकी स्थितिमे आ चुका था। इस काव्यका नाम है 'राउल वेल' और इसका यशस्वी कवि है रोड या रोडा।[1] यह काव्य सम्भवतः दक्षिण कोसलमे वहाँके किसी सामन्तकी प्रेरणासे रचा गया था, यद्यपि बादमे शिला-फलकपर उत्कीर्ण होकर धार (मालवा) मे किसी प्रासादमे लगाया गया था और इस समय किंचित् भग्न अवस्थामे बम्बईके प्रिन्स ऑव वेल्स म्यूजियममे है। भारतीय आर्य भाषा-परिवारकी वर्तमान सात प्रमुख भाषाओके प्राचीनतम रूप इसमे सुरक्षित है—और शिलाकित होनेके कारण अपने अक्षुण्ण रूपमे सुरक्षित हैं। इस काव्यमे एक सामन्तकी छह प्रदेशोकी सात स्त्रियोका रोचक वर्णन बहुत-कुछ उनकी अपनी भाषाओमे देनेका प्रयास किया गया है। इन सात स्त्रियोमे-से एक टक्किणी है। वर्त्तमान पजाबी प्रदेश तथा हरियाणा, जिस समयकी यह रचना (राउल वेल) है, क्रमश टक्क और भादाणक नामसे अभिहित थे और लगभग एक मिले-जुले क्षेत्रके रूपमे टक्क-भादाणक कहे जाते थे। 'राउल वेल'की टक्किणी इसी परस्पर मिले-जुले क्षेत्रकी कहीकी थी। केवल चौदह अर्द्धालियोमे उसका वर्णन निम्नलिखित प्रकारसे किया गया है; शिलालेखके कुछ अक्षर उसके भग्न होनेके कारण त्रुटित और अपाठ्य है, उन्हे बिन्दु देकर छोड दिया गया है, और जिनके बारेमे अनुमान किया जा सका है, उन्हे कोष्ठकोमे दे दिया गया है, साथमे दी हुई सख्याएँ शिलालेखकी पक्तियोकी है—

(१५) केहा टेरिल्लपुतु तुहु झाखहि। अ डु वेहु तुहु आख(हि)॥
वेहु एक्कु सो एथु वन्निजइ।''''अक्खदह ही आ भिज्जइ॥
अड्डा केह पाहु जो वद्धा। सोप्पर तेहा गोरी लद्धा॥
चद सवाणा टीहा किय्यइ। जे मुहु(१६)एक्केणवि मडिय्यइ॥

---

१. दे० प्रस्तुत लेखक-द्वारा सम्पादित 'राउल वेल और उसकी भाषा'।

अंघिहि कय्यलु डहरा दित्ता। जो (नि)हालि करि मयणू मत्ता॥
कय्यडिअहि सोहहिं दुइ गन्न। म(मं) डन संडन डहि परे अन्न॥
कढी कढि जलाली सोहइ। एहा तेहा सउ जणु मोह(१७)इ॥
आवूघाडे थणहि जो कय्यू। सो सन्नाह अणग हो नं····॥
(क)य्यू वियॅ्यहिं जे थण दीसहि। ते निहालि सब वत्थु उवीसहिं॥
गोरइ अगि वेरगा कय्यू। सझहिं जोन्हहि न संगउ हू॥
पहिरणु घाघरेहिं जो केरा। कछ(१८)डा बछडा डहि पर इतरा॥
सूथना झिक··· इला प(हि)रणु। पाखइ पाखउ धावइ तसु जणु॥
एहा वेहु सुहावा टेल्ल। आन्न तु संदा डहि परइ वोल्ल॥
एही टक्किणि पइसति सोहइ। सा निहालि जणु मल म(१९)ल चाहइ॥

सुविधाके लिए नीचे इसका भाषान्तर दिया जा रहा है—

(१५) ऐ टेल्लिपुत्र (तिलगीका पुत्र), तू कैसा है कि तू भी झंखता है ?··· देख, कि तू भी कहता है,

एक भी (ऐसी) देखो तो उसका यहाँ वर्णन किया जाये, जिसका वर्णन करते हुए हृदय भीगता (स्निग्ध होता) हो।

जो किसी प्रकारकी बाधाओके चरणो (या पाशो)मे बँधा, उसने और केवल उसी प्रकारके व्यक्तिने (ऐसी) गौरागीको प्राप्त किया है।

चन्द्रमाके सवर्ण (कोई पदार्थ) यदि दिनोके लिए भी (निर्मित) किये जाये तो इन्हे (१६)एक (अकेले) (इसके) मुखसे ही बना लिया जाये।

आँखोमे हलका और दीप्त कज्जल है, जिसे निहारकर मदन भी मत्त (हो रहा) है।

दोनो गण्ड कंय्यडियोसे शोभित हो रहे है, (जिसके कारण) अन्य मण्डनादि दग्ध हो चुके है।

कण्ठमे (जो) जलाली (जल्लार देशकी) कण्ठी शोभित है, वह ऐसे-वैसे सभी जनोको मोहित करती है।

(१७) आधे उघाडे हुए स्तनोपर जो कचुक है, वह मानो अनगका सन्नाह हो रहा है।

कचुकके बीचमे जो स्तन दिखाई पड रहे हैं, उन्हे निहारकर (लोग) सभी वस्तुओकी उपेक्षा करते हैं।

गोरे अंगपर दोरंगा कंचुक (ऐसा लगता) है, मानो सन्ध्या और ज्योत्स्नाका संगम ही हो।

घाँघरेका जो परिधान है, (१८) (उसको देखकर) इतर (परिधान)-कछडा आदि दग्ध हो जाते है।

सूथने' ' परिधान (ऐसा है) मानो (उसका एक) पक्ष (दूसरे) पक्षमे दौड रहा हो।

देखो, इस प्रकारके टेल्ल (तिलगे)के स्वाभाविक (वचन) है, (उसके) अन्य सान्द्र (स्निग्ध) बोल तो दग्ध हो जाते हैं।

(राजभवन)मे प्रवेश करती हुई इस प्रकारकी टक्किणी शोभा दे रही है, और इसको निहारकर लोग (आँखें ?) मल-मलकर (१९) देख रहे है।

टक्किणीके इस वर्णनमे मिलनेवाले व्याकरण-रूप निम्नलिखित है—सख्याएँ शिलालेखकी पक्तियोकी है

संज्ञा, कर्त्ता (मूल) :

एक० पु० प्रत्ययहीन : हीआ १५, कछडा १७, बछडा १८, कय्यू १७।

एक० स्त्री० प्रत्ययहीन : कढी १६, टक्किणि १८।

एक० पु० (अकारान्त शब्द)–ु जणु १६, सन्नाहु १७, सगउ १७, पहिरणु १७, जणु १८।

एक० पु० (आकारान्त शब्द ?)-उ पाखउ १८।

बहु० पु० (अकारान्त शब्द) प्रत्ययहीन : गन्न १६, टेल्ल १८, मंडन सडन १६, वोल्ल १८।

संज्ञा, कर्म (मूल) :

एक० पु० (अकारान्त शब्द)–ु कय्यलु १६।

बहु० स्त्री० प्रत्ययहीन : वत्थु १७।

संज्ञा, कर्म (विकृत) :

बहु० स्त्री० गौरी १५

संज्ञा, करण :

एक० पु०–ेण मुहु एक्केण १६

एक० स्त्री०–हि कय्यडिअहि १६

संज्ञा, सम्प्रदान :

बहु० पु० (अकारान्त शब्द)-ा : टीहा १५

संज्ञा, सम्बन्ध :

सामासिक रूप · अड्डा पाहु १५, अणग संनाहु १७, कय्यू विय्यहि १७, चद सवाणा १५, टेल्लिपुतु १५

एक० पु० स्त्री०–हि सम्हि जोन्हहि १७

एक० पु०–हि केरा घाघरेहि केरा १७

बहु० पु०–ह अक्खदह हीआ १५

संज्ञा, अधिकरण :

एक० पु० (अकारान्त शब्द)–ि कढि १६, अगि १७

एक० पु० (आकारान्त शब्द ?)–इं पाखइ १८

एक० पु० (अकारान्त शब्द) – हु : पाहु

एक० । बहु० पु० । स्त्री० (अकारान्त शब्द) –हिं : अघिहिं १६, थणहि १७, विय्यहि १७

संज्ञा, सम्बोधन :

एक० पु० – ु : टेल्लिपुतु १५

सर्वनाम, तृतीय पु० :

एक० पु० । स्त्री० कर्त्ता : सो १५, सो १५, सो १७

बहु० पु० कर्म (विकृत) : ते १७

बहु० पु० कर्म (विकृत) : जे १५

एक० स्त्री० सम्बन्ध : तसु १८

सर्वनाम, सम्बन्ध वाचक :

एक० पु० जो १५, जो १६, जो १७, जो १७

बहु० पु० : जे १७

विशेषण :

एक० । बहु० पु० प्रत्ययहीन : केह १५, दुइ १६, सब १७

वही – ु : एक्कु १५, सउ १६

एक० पु० – ा केहा १५, तेहा १५, वड्डा १५, डहरा १६, दित्ता १६, मत्ता १६, वेरगा १७, एहा १७, एहा १८, सुहावा १८

एक० पु० (विकृत) – अइ गोरइ १७

एक० स्त्री० – ी जलाली १६, एही १८

बहु० पु० – ा : सवाणा १५, एहा १६, तेहा १६, इतरा १८, सदा १८

वही (विकृत) – े आवूघाडे १७

क्रिया, सामान्य वर्त्तमान :

द्वि० पु० एक० पु० – अहि : झाखहि १५, आख(हि) १५

तृ० पु० एक० पु०।स्त्री० – अइ . भिज्जइ १५, सोहइ १६, मोहइ १६, धावइ १८, परइ १८, सोहइ १८, चाहइ १८

तृ० पु० बहु० पु० । स्त्री० – अहिं : सोहहिं १६, दीसहिं १७, उवीसहिं १७

तृ० पु० बहु० पु० – अ पर १८

क्रिया, सम्भावनार्थ वर्त्तमान :

द्वि० पु० एक० पु० – उ वेहु १५, वेहु १५

द्वि० पु० एक० पु० – इज्जइ । इय्यइ वन्निज्जइ १५, किय्यइ १५, मडिय्यइ १६

क्रिया, सामान्यभूत और भूत कृदन्त :

तृ० पु० एक० पु० – उ : हू (हु + उ) १७

वही – ओ : हो १७

तृ० पु० बहु० पु० – ए : परे १६

क्रिया, पूर्वकालिक कृदन्त :

–अ : मल १८, मल १८

–इ . (नि)हालि १६, करि १६, डहि १६ निहालि १७, डहि १८, डहि १८, निहालि १८

क्रिया, वर्त्तमान कृदन्त :

तृ० पु० एक० स्त्री० – अति : पइसति १८

तृ० पु० बहु० पु० – अंद . अक्खंदहं १५

अव्यय :

स्थानवाचक : एगु १५

संयोजक न : न १७, न १७

जणु जणु १८

अवधारण वाचक – ऊ : मयणू १६
वि : एक्केणवि १६
तु : तु १८
पर : पर १५

एक रचनामे मिलनेवाले कुछ-न-कुछ रूप दूसरीमे इसलिए नही मिलते है कि जहाँ एक (राउल वेल) वर्णनात्मक प्रशस्ति काव्य है, दूसरा (कु०) कथा-काव्य है। इसलिए नीचे केवल उन्ही रूपोपर विचार किया जायेगा जो कु० तथा 'राउल वेल' की टक्किणीकी भाषा – दोनो – में पाये जाते हैं।

कर्त्ता० एक० के अविकृत रूप दोनोमे ही एक प्रकारसे आये है प्रत्यय-हीन रूप तो दोनोमे मिलते ही है, एक० पु० अकारान्त शब्द दोनोमे – ु तथा उ प्रत्ययोके साथ भी आते है।

कर्त्ता० बहु० पु० अकारान्त शब्दोके अविकृत रूप टक्किणी भाषामे प्रत्ययहीन ही है, कु० मे भी वे सामान्यत प्रत्ययहीन है, किन्तु कभी-कभी वे – आ। आ। आन प्रत्ययोके साथ भी आते है।

कर्म० एक० पु० शब्दोका रूप टक्किणीकी भाषामे अविकृत ही मिलता है, विभक्तियुक्त नही मिलता है, और विकृत रूपका भी उसमे एक ही उदाहरण आता है जो एक० स्त्री० (ईकारान्त शब्द)मे अनुनासिक-युक्त है। कु० मे वह या तो अविकृत है और या तो विकृत और विभक्तियुक्त है।

कर्म एक० पु० अकारान्त शब्द दोनोमे अविकृत रूपमे – ु प्रत्ययके साथ प्रयुक्त हुए है।

करणमे, टक्किणीकी भाषामे विभक्तियाँ नही है, केवल एक०पु० मे – ें ण तथा बहु० स्त्री० मे – हि प्रत्यय प्रयुक्त हुए हैं। करणके रूप कु० मे सामान्यत: विभक्तियुक्त है, केवल कही-कही पर अविकृत है। असम्भव नही है कि इन विभक्तियोका विकास बादकी वस्तु हो।

सम्प्रदानमे भी स्थिति वही है जो ऊपर करणकी दिखाई पडी है; जबकि कु० मे विभक्तियुक्त रूप ही प्रयुक्त हुए है, टक्किणी भाषामे – ा प्रत्यय मात्र है।

अपादानके रूप टक्किणीकी भाषामे नही है।

सम्बन्धके लिए टक्किणीकी भाषामे या तो सामासिक रूप है और या तो एक – हि तथा बहु० – हं युक्त रूप है, केवल एक स्थानपर एक० – हि के साथ 'केरा' विभक्ति-युक्त रूप भी मिलता है। कु० मे विभक्तियुक्त रूप ही मिलते हैं, केवल एक स्थान पर – हिं प्रत्यय प्रयुक्त मिलता है।

अधिकरण एक० पु० (आकारान्त) शब्दोंमें दोनोंमे – ि प्रत्ययका प्रयोग हुआ है, टक्किणीकी भाषामे – इं तथा – हिं का भी प्रयोग मिलता है और एक स्थानपर – हु का भी प्रयोग हुआ है। कु० मे विभक्तियुक्त प्रयोग भी प्रचुरताके साथ मिलते हैं, जबकि टक्किणीकी भाषामे ऐसा एक भी नही मिलता है। हो सकता है कि इन विभक्तियोका भी विकास बादका हो।

सम्बोधनमे कु० मे अविकृत और विकृत दोनो रूप प्रयुक्त हुए है, टक्किणीकी भाषामे केवल एक उदाहरण मिलता है जो अकारान्त शब्दका है और – ु प्रत्ययके साथ आया है।

इस प्रकार प्रकट है कि कु० संज्ञा-रूपोके सम्बन्धमे टक्किणीकी भाषासे काफी बादकी भाषाका उदाहरण प्रस्तुत करती है—जिसमे प्रत्ययोका स्थान विभक्तियोने ग्रहण कर लिया था, यद्यपि प्रत्ययोका प्रयोग सर्वथा समाप्त नही हुआ था।

सर्वनामोमे-से तृतीय पु० के एक० सो तथा बहु० ते दोनोमे है, निकटवर्ती बहु० स्त्री० (विकृत) टक्किणीकी भाषामे जे है, कु० मे बहु० स्त्री० (विकृत) का प्रयोग नही मिलता है, टक्किणीकी भाषामे सम्बन्धमे सो का तासु हो गया है, कु० मे सो विकृत रूप तिस है, जो कि सम्बन्धके रूपमे प्रयुक्त नही मिलता है।

सम्बन्ध वाचक सर्वनाम एक० जो तथा बहु० जे दोनोमे समान रूपसे आये है।

विशेषणोके एक० पु० रूप० दोनोमे प्राय आकारान्त तथा एक० स्त्री० रूप प्राय ईकारान्त है – और दोनोंकी यह समानता महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वर्त्तमान खडी बोलीकी यह एक निश्चयात्मक विशेषता है। बहु० पु० के लिए अकारान्त शब्दोको आकारान्त भी दोनोमे समान रूपमे किया गया है, दोनोकी यह समानता भी महत्त्वपूर्ण है।

संख्यावाचक विशेषण एक ही—दुइ दोनोमे समान रूपसे मिलता है।

क्रियाके अन्तर्गत तृ० पु० एक० सामान्य वर्त्त० के रूप दोनोमे सामान्यतः – अइ लगाकर बने हैं, किन्तु कही-कही पर वे – अ लगाकर भी बने है।

तृ० पु० बहु० का रूप टक्किणीकी भाषामे – अहिं लगाकर बना है, वह कु० मे नही मिलता है, प्रथम पु० बहु० का रूप कु० मे – अइं लगाकर बना है, जो टक्किणीकी भाषामे नही मिलता है। वर्त्तमान खडी बोलीमे इस विषयमे दोनोमे समानता है, इसलिए यह असम्भव नही है कि – अइं – अहिंका ही बादका विकास हो।

•

सम्भावनार्थ वर्त्तमानका द्वि० पु० एक० का रूप टक्किणीकी भाषा तथा कु० दोनोमे – उ लगाकर बना है, और टक्किणीकी भाषाका – इज्जइ या – इय्यइ कु० मे – ईइके रूपमे मिलता है, जो कि उसीका विकसित रूप ज्ञात होता है।

तृ० पु० एक० पु० सामान्य भूत और भूत कृदन्तका टक्किणीकी भाषाका – उ। ओ युक्त रूप कु० मे भी मिलता है। उसका बहु० का – ए युक्त रूप भी कु० मे समान रूपसे मिलता है।

पूर्वकालिक कृदन्तके रूप दोनोमे – इ अथवा – अ लगाकर बने है, जिनमेसे – इ वाले रूप ही अधिकतासे है।

वर्त्तमान कृदन्तका एक० स्त्री० का एक रूप टक्किणीकी भाषामे – ति युक्त है जबकि कु० मे वह – ती युक्त है। असम्भव नही है कि – ती तथा – ति का यह अन्तर छन्द-रचना जनित हो। उसका दूसरा रूप दोनोमे – अद युक्त है।

अव्ययोमे अवधारणवाचक उ दोनोमे समानरूपसे है। टक्किणी भाषाका सयोजक जणु कु० मे जाणु के रूपमे मिलता है। टक्किणीकी भाषाका निकट स्थानवाचक एथु कु० मे नही है, किन्तु प्रश्न तथा सम्बन्धार्थी स्थानवाचक उसमे कहाँ-जहाँ है, इसलिए यह अनुमान किया जा सकता है कि निकट स्थानवाचक उसमे इहाँ रहा होगा, जो एथु का परवर्ती रूप हो सकता है। टक्किणीकी भाषाका सयोजक न कु० मे नही है, उसका कार्य उसमे जाणि, जाणु अथवा जाणे से लिया गया है।

इस प्रकार प्रकट है कि दोनो रचनाओकी भाषा अभिन्न है, अन्तर इतना ही है कि कु० मे उसी भाषाका परवर्ती रूप है जिसका पूर्ववर्ती रूप 'राउल वेल' की टक्किणीकी भाषामे मिलता है।

वार्तिक तिलकके शब्द-रूप

संज्ञा : एकवचन (अविकृत)

पु० तथा स्त्री० शब्द प्रत्ययहीन रूपोमे प्रयुक्त हैं। उदाहरण देना अनावश्यक होगा।

संज्ञा : बहुवचन (अविकृत)

पुं० : आ>ए तिसके च्यारि बेटे (१), ए च्यारि बेटे पलकोके 'डोरे' खैचि दिस, तारे सौ बावीए (२), मेरे च्यारि 'बेटे' (४), दो लाख 'रुपैए' खैर करो (८), ढाइ लाख 'रुपैए' कुरबान हुवए थे (९), दाई 'कपड़े' पिन्हाइ पेस कीया (१०) सोनेके 'तुके' कुतुब चलावै (१४), 'तूके' ढूढनेवाले ···जमा होई (१४), मसालौके 'चादरे' ·टूट टूट परैगे (१४), ईस ही रौसनि 'वाले' गिणे (१५) ।

पु० : अ (फ़ारसी)>आन : बादिसाहान (३) ।

स्त्री० : अ>ए : आखै की 'पलकौ (पलकै ?)' गालै सौ आई लगी (२), ठौर ठौर 'नवबतौ' बाजती है (९) ।

स्त्री० ई>इयां 'बारीया (बारीया) बेलिया' नैना दिषलावो (१३) ।

बहु० के लिए एक० का प्रयोग चालीस अरबकी 'चौकी', ए तीन 'बस्त' जिस लडिकि मै होइगी (१२) ।

संज्ञा एकवचन (विकृत)

आ> ऐ : पातिसाह 'देषणै' सौ रहा (२) ।

आ> ए : 'घोडे'का घोडा, तुम्हारे 'बेटे' का नवल नाम दीया है (११), 'खाण 'खाणे' कु आए (१५) ।

प्रत्ययहीन : 'सोना रूपा' की जजीर से औधे लटकै (४) ।

संज्ञा : बहुवचन (विकृत रूप)

पुं० · अ> आं : फेरि 'मसाला' की रौसनाई यौं····(१५) ।

स्त्री० · अ>एँ : 'आखै'की पलकौ गालै सौ आई लगी (२) ।

,, अ>ओं : तब 'पलको' सौ रेसके डोरे लगे रहे (२)।

,, ई>यौं : तब मकडी 'माख्यौ' पर छोडिए (३) ।

लिंग-निर्माण

पु० : अ । आ>स्त्री०-ई : तब 'मकडी' माख्यौपर छोडिए (३), सो ऐसी 'मकडी' की सिकार पातिसाह जी देषै (३), तब ऐसी 'मकडी'की सिकार (३) उसी पातिसाहकी 'बेटी' ब्याहीए (४), 'बेटी' कौन कै दे (५), जहा 'लड़िकी' सुरति जमाल होइगी (१२), मा 'साहिजादी' (१२) नानी 'साहिजादी' (१२), ए तीन बस्त जिस 'लडिकि' मैं होइगी (१२), पंज सौ 'बूटी' (१३, १५) पच सै सोवन 'लठी' (१३) सोनेकी 'छडी' लिये रहौ (१३)।

संज्ञा : प्रथमा विभक्ति

पु०।स्त्री० : नैं, नै : पेरोज साहि 'नै' बीबी बिवाना ब्याही (५), मागणै लायक जाति साह 'नै' बदी करी नाह (८), पातसाह 'नै' हुकम कीया (१०), तब पातसाह 'नै' भी फाल देखा (११), एता जवाब बीबी बिवाना 'नै' कीया (१२) यह जवाब पातिसाह 'नै' कीया (१२), जिस षुदाय 'नै' हमको कुतुब बेटा दीया है····(१२), महल बादसाह 'नै' सहर बाहिरे कराए (१५) ।

निर्विभक्तिक : पुं० 'पातिसाह' हुकम कीया(८), 'पातिसाह' कह्या(११), तब 'पंडिता' आपणा सास्त्र देष्या (११) ।

स्त्री० : आ >ऐ · तब बीबी 'बिवानै' बोली (१२) ।

द्वितीया विभक्ति

पु०।स्त्री० कौं, को : ज्यौ रंगरेज चूनडी 'को' बंद देता है (२), तब पातसाहि 'को' नजरि आवै (२), सदर 'कौ' आय माखी लगै (३), मकणी 'कौ' पकडै (३) ज्यौं हिरण 'कौ' चीता पकडै (३), आपणे साहिब 'कौ' यादि करै (४), पातिस्याह पेरोज साहि 'कौ' (५), पातसाह 'कौ' फेरि जवानी चढी (५), षुदाय'को' आदि करता हुवा··· (५), बीबी बिवाना 'कौ' फारसी हिंदुही दिल मही थी पैदा हुई (६), ऐसी बीबी बिवाना पातसाह 'कौ' ब्याही । (६), बीबी बिवाना 'कौ'—पेट रहै (७), बीबी बिवाना 'कौ' फरज्यंद होइ (७), बीबी बिवाना 'कौ' फेरि पेटिकी

उमेद रहै (७), बीबी बिवाना 'कौ' पेटकी उमेद रही (८), फेरि फेरि महीने 'कौ' ओरु पातसाहकी नजरि (१०), तब पातसाह 'कौ' भी····नाम नजरि आया (११), तुम कुतुबुद्दीन नवल 'को' एक ब्याहका नाव क्यौं लीया (१२), कुतुब 'को' अवलि तही ब्याहैगे (१२), सो अलाह कुतुब 'को' ऐसा ब्याही भी देगा (१२), साहिजादे 'को' को मत पूछियौ (१३), तिसकी साहिजादै 'कौ' मालूम होई (१३), पचीस पचीस मुहुर 'कौ' गज एक अपनी समसेर जमधड 'कौ' कचा सूत सौं परोई (१४), घोडै 'को' बुरी करावैगे (१४) ।

वही, कै . बिवाना 'कै' फरज्यंद हुआ (९), कोई ऐसी उमर को बेटी कौन 'कै' दे (५) ।

तृतीया विभक्ति

पु०।स्त्री० : सौं : आहु षाना पेरोज खा 'सौ' पैदा हुवा, बकरा हिरण सो लडावै (१), आँखै की पलकौ गालै 'सौ' आई लगी (२), पातिसाह देषणै 'सौ' रहा (२), पलकौ के डोरे खैचि दिस तारे 'सौ' बाँधीए (२), तब सिकार 'सौ' बहुत प्यास पातसाह का रहै (३), जगल की सिकार 'सौ' रहै (३), सोना रूपा की जजीर 'सौ' औधे लटकै (४), षुदाइकी रहम इन्याइति 'सौ' पैदा हुई (६), पातसाह उमराव 'सौ' बोले (१०), पर मुसकलि 'सौ' पैदा होंहिगे (१२), षुब जतन 'सौ' राष्या चाहिए (१२), कोई किस ही के साथ 'सौ' लेणै न पावै, कचे सूत 'सौ' नग जौ हार परोए (१४), असवारके डील 'सौ' टूटि टूटि परैगे (१४), उसके हाथ 'सौ' कोई और लेणै न पावै (१४) ।

वही, ते साब अलाह 'ते' होइगी (१२) ।

निर्विभक्तिक : बारिया बेलिया 'नैना' दिषलावो (१३) ।

चतुर्थी विभक्ति

पु०।स्त्री० कु : आप अदर षाणा षाणै 'कु' आए (१५) ।

वही, कौं . परणनै 'कौ' असवार हुवाए, एक सौ मुहुरकी हिमानी दरवाजे-की खैर 'कौ' (१३), षाणा षाणै 'कौ' बैठा कुतबदी नवल (१६) ।

पंचमी विभक्ति

पु०।स्त्री० : थी : दिल यही 'थी' पैदा हुई (६) ।

वही, सौं . हरम खानै 'सौ' दौडी ही आई (७) ।

षष्ठी विभक्ति

एकवचन पु० का . जब कीसी उमराव 'का' काम (२), हाथी 'का' हाथी (२), घोडे 'का' घोडा (२), आदमी 'का' आदमी नजरि आवै (२), तब सिकार सौ बहुत प्यास पातसाह 'का' रहै (३), ऐसी पातिसाही 'का' धणी (२) अपने उमरावै 'का' (४), हाथी घोडा'का' (४), समरकदके पात-साह 'का' नालेर आया (५), सुलतान सलेम 'का' (५), मोतियन 'का' सेहुरा से बाधि (५) फरज्यंद 'का' पेट रहै (७), एक रोज फजर 'का' बष्त है (७) हुकम खुदाइ 'का' ऐसा हुआ (७), माहीना एक 'का' लडिका (१०), साहिजादा केरि माहीने 'का' होय तब नजरि करिये (१०), ··· तैता महीना तीस 'का' नजरी अवै (१०), तुम्हारे बेटे 'का' नवल नाम दीया है (११), कुतबुदीन नवल 'का' एक ब्याह··· (१०), बहुत बहिगी 'का' फरजद है (१२), एक ब्याह 'का' नाव क्यौ लीया (१२, १८), तिस 'का' जीन करिए (१४), उसके बष्तके दूसरा घोडा उस ही रौस 'का'··· (१४), इबादति 'का' वक्त है (१५, १५) दुनिया 'का' जनावर (१६) दुनिया 'का' दरष्त···· (१६), जगल 'का' ही जनावर (१६), जंगल 'का' ही दरष्त (१६) ।

एकवचन स्त्री० : की : तिन दरियाव 'की' मछी मारी (१), तिसकी निवै बरस 'की' उमर हुई (२), आँखै 'की' पलकौ गालै सै आई लगी (२), तब सिकार काहे 'की' देषीयै (३), ऊजली चादरि सितारे 'की' बिछाय (३), सो मकडी चीते 'की' नाहायति मषी कौ पकड़ै (३) सो ऐसी मकडी 'की' सिकार पातिसाह जी देषै (३), जगल 'की' सिकार सौ रहै (३), तब ऐसी मकडी 'की' सिकार देषै (३), षुदाइ 'की' बदिगी करणै लागा (४), सोना रूपा 'की' जजीर सौ औधे लटकै (४), सरोस 'की' बदिगी करै (४), सामके वक्त 'की' (४), षुब चुस्त बदगी षुदाय 'की' की (४), नब्बै बरस 'की' उमर मो··· नालेर आया (५), समरकदके पातसाह 'की' बेटी ब्याही (५), तरीक बेद 'की' पैदा हुई (६), कुरान 'की' पैदा हुई (६), षुदाई 'की' बदगी करने लागे (३), बीबी बिवाना 'की' दाई ·· दौडी ही आई (८), बीबी बिवाना कौ पेट 'की' उमेद रही (८), उमेद 'की' षबर पर···· (९), ताज कुलह 'की' ताषी सिरपर राषी (१०), पातसाह 'की' नजरि पेस कीया (१०), पात-साह 'की' नजरि आगै राषा (१०), साहिजादा पातसाहि'की' नजरि ऐसा आया···· (१०), पातसाहि 'की' नजरि (१०), इसकै वासतै तुम कौण कौण बंदिगी षुदाय 'की' की है (१२), किसी बात 'की' कमी नाही (१२), सोने

'की' छडी लिये रहौ (१३), एक सौ मुहर 'की' हिमानी (१३), दरवाजे 'की' षैर कु (१३), पचीस पचीस मुहर कौ गज 'की' नीलक (१४), नगो 'की' दोस्ती कुतब घोडैको षुरी करावैगे (१४), बीबा बिवाना 'की' हजूरि (१५), घुट एक ठंडा आब पाणी 'की' पीजीए (१५), योगिणी पाणी 'की' घुटै (१५), फेरि मसाला 'की' रौसनाई मौ (१५), दुनिया 'की' वतास पवन लगने न पावै (१६), पवन भी लगै सु जगल 'की' ही लगै (१६)।

एकवचन पु० (विकृत) **: कैं, कै, के :** दिल्ली 'कै' तषत....बादसाही करै (१), दिली 'कै' बाजारि....(९), घोड़े 'के' गले मौ बाधिए (१४), दिल्ली 'कै' बडे बाजार आइ जमा होई (१५), कुतुब० दिल्ली 'के' घर साहिजादा पैदा हुवा (१२), साम'के' वक्तकी .. (१४), खबरिदार चिहरा मुहला 'के' होय (४), समरकद 'के' पातसाहका नालेर आया (५), समरकद 'के' पातसाहकी बेटी ब्याही (५), पातसाह 'के' दिलके दरद कढे (५) काजी मुल्ला 'कै' आगै....(६)।

एकवचन पु० (विकृत) **कौ .** मसालै 'कौ' उजियारे ...(१४)।

बहुवचन पु० : के ए सुलनान 'के' मजलिसी उमराव (१), पलकौ 'के' डोरे खैचि . (२), तब पलकोसे रेस 'के' डोरे लगे रहै (२), पातसाहके दिल 'के' दरद कढे (५), अब तौ लाषी करोडो 'के' मुहुरि .. (९), पातिसाह 'के' मनच्यते कारिज हुए (९), एक सै सौ ब्याह कुतुब 'के' हमे सौ करै (१२), कुतुबुदीन नवल 'के' हम बहुत ब्याह करैगे (१२), सोने 'के' तुके कुतुब चलावै (१४), तिस रोज मसालौ 'के' चादरणै....टूटि टूटि परैगे (१४)।

बहुवचन स्त्री० की . चालीस हरम 'की' चौकी (१)।

निर्विभक्तिक (विकृत) . किसी कौ 'पडितौ' पास रखीए (६), बीबी बिवाना कौ 'पेटि' उमीद रहै (७) 'मागणौं' लायक पातिसाह तै बदी करी नाह (८)।

सप्तमी विभक्ति

– अ > इ . सु बीबी बिवाना 'अवलि' बहुत सुरति जमाल (६), दिली कै 'बाजारि' .(९), कि 'अवलि' पातिसाहि बोल्यो (११), पै 'अवलि' ब्याह तहा करैगे (१२), कुतुब कौ 'अवलि' तही ब्याहैगे (१२), 'अवलि' पुरानवाला बोला (१५), 'बाहरि' छडीदार षडे रहैं (१५)।

– आ > एं, ऐ . पै 'घोडै' असवार हुवा न जाय (३), किसी कै काषी मुला कै 'आगै'....(६), 'डेरै डेरै' नवबता बाजती है (९), साहिजादा 'दरवाजै' बासै आइ उतरै (१४), मसालो के 'चादरौं'....(१४)।

– आ > ऐ : मसालै को 'उजिआरे'....(१४), महल सहर 'बाहिरे' कराए (१५)।

में, मै, मै . कोई ऐसी उमर मे' बेटी कौन कै दे (५), सायति 'मे' गुसल किया (१०), सिर 'मैं' पानी डालि कपडे पिहने (१०), हिंदुई 'मैं' पडित नाम राखौ (११), तुमारे फाल 'मैं' क्या नाम नजरि आया (११), हमारे फाल 'मैं' भी याही नाम है (११), साहिजादा हरमषानै 'मैं' ले गए (११), ए तीन बस्त जिस लडिकि 'मैं' होइगी....(१२), घोडे के गले 'मै' बाधा (१४)।

मही : दिल 'मही' थी पैदा हुई (६)।

मो, मौं : नवै बरस की उमर 'मो' नालेर आया (५), फेरि मसाला की रौसनाई 'मौ'....(१५)।

पर, ऊपर, उपर तब गिलम 'ऊपर'' 'चीनी सकर बषेरियै (३), तब मकडी मार्‍यो 'पर' छोडिए (३), एक दिन तख्त 'पर' क्या स करता''(४), बादशाह तष्त 'पर' आइ बैठे (७), बिवाना 'उपर' कुरबान करि खैर करो (८), उमेद की खबरि 'पर'...(९), सिर 'पर' राषी (१०)।

निर्विभक्तिक : एक-एक 'राति' आवै (१), तब पातिसाह 'तषत' आइ बैठे (२), तसबी पातिसाह चारयौ 'पहर' यादि करै (४), किसी को पडितौ 'पास' रखीए (६) एक 'रौज' फजरका वष्त है (८), तिस 'रौज' दीजीए (८), 'ठौर ठौर' अब मोती छाडीये है (९), 'ठौर ठौर' नवबतौ बाजती है (९), 'नजरि' पेस कीया (१०), 'नजरि' ऐसा आया (१०), लरिका 'नजरि' आवै (१०), तब कुतबुदीन नवल नाम 'नजरि' आया (११, ११), कुतब दिल्लीके 'घर' पातिसाहजादा पैदा हुवा (१२), ग्यारह सै आदमी कुतुब० 'पास' रखे (१३), तिन्हो कै 'हाथ' (१२), आठवै 'रोज' जुमाराति आवै (१४), तिस 'रोज' बषसीए (१४), आठवै 'रोज' (१४), दिल्ली कै बडे 'बाजार' आइ जमा होई (१४), 'हाथ' पहली बाग लागै (१४), आपणै 'महल' आए (१५)।

सम्बोधन

एकवचन – आ > ऐ साहिजादे सलामति (१५)।

बहुवचन :– आ।आ>ओ।औ : 'यारो', 'उलमावो', 'पडितो' (११), ना 'यारौ' (११), क्यौ 'यारौ' क्यौ बोलते नाही (११), क्यौं 'यारो' बोलते क्यों नाही (११)।

ए, ऐ : 'ए' पाक परवर दिगार····(५), 'ए' दाई तू ब मांग (८), 'ऐ' दाई किछू तू माग (८), 'ए' दाई साहिजादा फेरि माहीनेका होई तब नजरि करिये (१०), 'ए' बीबी (१२), 'ए' साहिजादे (१५)।

सर्वनाम : उत्तमपुरुष

एकवचन कर्त्ता (अविकृत) मै : 'मैं' क्या मागौं (८, ८)।

एकवचन सम्बन्ध (अविकृत) मेरा : 'मेरे' च्यारि बेटे (४)।

बहुवचन कर्त्ता (अविकृत) हम तब 'हम' कहैगे (११), कुतुब के 'हम' बहुत ब्याह् करैगे (१२)।

बहुवचन कर्म-सम्प्रदान (अविकृत) हमकों : जिस षुदाय ने 'हमको' बेटा दीया है (१२)।

बहुवचन सम्बन्ध (अविकृत) हमारा, (विकृत) पु० हमारे, स्त्री० हमारी : 'हमारे' फाल मौ भी याही नाम है (११), 'हमारी' एक अरज है (१२)।

सर्वनाम : मध्यमपुरुष

एकवचन (अविकृत) तू : 'तू' ब माग (८), कुछू 'तू' माग (८)।

बहुवचन कर्त्ता (अविकृत) : 'तुम' कुतुबुदीन नवल को एक ब्याह् का नाव क्यौ लीया (१२), 'तुम' कौंण कौण बदिगी पुदायकी की है (१२)।

बहुवचन सम्बन्ध (विकृत) पु० तुमारे : 'तुमारे' फाल मैं क्या नाम नजरि आया (११), 'तुमारे' बेटे का नवल नाम दीया है (११)।

सर्वनाम विशेषण : निकटवर्ती निश्चयवाचक

एकवचन (अविकृत) यह, य, याह : हमारे फाल मैं भी 'याही' नाम है (११), 'यह' जवाब पातिसाह् नै कीया (१२), 'यह' बात दरोग लगती है (१२), 'याह' बात दरोग लगती है (१२), तिन्हकौ 'य' हकीकति फुरमाई (१३), 'यह' मेलिकरि घोड़े के गले मौ बाधिए (१४)।

एकवचन (विकृत) इस : 'इसकै' वास्ते तुम कौण कौण बंदिगी खुदायकी की है (१२), अलह तौ 'इससौ' भी आले आले देगा (१२), दुनिया का जनावर 'हसकी' नजरि न आवै (१५)।

बहुवचन (अविकृत) ए : 'ए' सुलतान के मज[ल]सी उमराव····(१), 'ए' च्यारि बेटे (१), 'ए' उलमा भी आपना फाल देखौ (११), 'ए' तीन बस्त जिस लडिकि मैं होइगी (१२)।

सर्वनाम बिशेषण : दूरवर्ती निश्चयवाचक

वह-परिवार :

एकवचन (विकृत) उस 'उसका' ही घोडा (१४), कुदरत नाही 'उसके' हाथ सौ कोई और लेणै न पावै (१४), सो 'उसके' वष्तके (१४), दूसरा घोडा 'उस' ही रौस 'का'···(१४), 'उसकी' नजरि न आवै (१६)।

त-परिवार :

एकवचन (विकृत) कर्त्ता तिन : 'तिन' दरियाव की मछी मारी (१)।

एकवचन (विकृत) अन्यकारक तिम : 'तिसके' च्यारि बेटे (१), 'तिसकै' पेरोज खा सिकारी (१), 'तिस' पर चीनी सकर बषेरियै (३), 'तिस' के पेटका असलि पातसाहजादा' (४), 'तिस' की निवै बरस की उमर हुई (८), 'तिस' रोज कीजीए (८), 'तिसको' एक ब्याह का नाव क्यो लीया (१२), 'तिसकौ' लाख देहु सौ लाख दीजीयौ (१३), 'तिसपर' अभ्रातंच लीखीए (१३), जो पावै 'तिस ही का' (१३), 'तिस' रोज पज पज हार के···(१४), 'तिस' थे माह ·· दरोग लगती है (१२), तिसमै' पज सौ बूढी (१३), 'तिसकी' साहिजादै कौ मालूम होई (१३)।

बहुवचन (अविकृत) तिन्ह, (विकृत) तिन्हौ : 'तिन्हौको' पातिस्याह हुकम कीया (१३), 'तिन्हकौ' ये हकीकति फुरमाई (१३), 'तिन्हौ कै' हाथ पच सै सोवन लठी (१३)।

स-परिवार :

एकवचन (अविकृत) सो, सु : 'सु' कैसा एक पातिस्याह (१), 'सु' दीजीए (८), 'सोई' नाम षूब (११), 'सो' अलाह कुतुब को ऐसा ब्याही भी देगा (१२), 'सु' जंगल का जनावर · (१६), 'सो' मकडी मषी षौ पकडै (३), 'सु' जगल की ही लगै (१६)।

सर्वनाम विशेषण : निजवाचक

एकवचन कर्त्ता (अविकृत) : 'आप' खुसाल होय उतरै (१४), 'आप' अदर आए (१४)।

एकवचन सम्बन्ध (अविकृत) आपना, अपनी, (विकृत) अप्पणे, आपणे : हजरति भी 'आपना' फाल देषौ (११), 'आपणे' महल आए (१५), 'अप्पणे' साहिब कौ यादि करै (४), 'अपनी' समसेर जमधड कौ कच्चा सूत सौ परोईए (१४)।

बहुवचन सम्बन्ध (अविकृत) आपणा, आपना . पंडितौ 'आपणा' सास्त्र देखा (११), ए उलमा भी 'आपना' फाल देखौ (११)।

सर्वनाम विशेषण : सम्बन्धवाचक

एकवचन (अविकृत) जु, जो : 'जु' कौडी लायक आदमी आवै (१३), 'जु' इसकी नजरि पडै (१५), 'जो' पावै तिस ही का (१४)।

एकवचन (विकृत) जिस 'जिस' षुदाय नै हमका " बेटा दिया है (१२), जब 'जिसकौ' हाथ पहली बाग लागै (१४), ये ए तीन बस्त 'जिस' लडिकि मै होइगी (१२), 'जिस' रोज बीबी बिवाना ···(८)।

सर्वनाम । विशेषण : अनिश्चयवाचक

एकवचन (अविकृत) कोई : असल पातिसाहजादा 'कोई' नही (४), 'कोई' असी उमरमे बेटी कौन कै दे (५), साहिजादै कौ 'कोई' मत पूछियौ (१३), 'कोई' बडा गुनी (१३), 'कोई' विसही के हाथ सौं ···(१४), 'कोई' और लेणे न पावै (१४)।

एकवचन (विकृत) किसी, किस ही. 'किसी कै' काजी मुला कै आगै पठए, 'किसी कौ' पडितौ पास रपीए ···(६), जब 'कीसी उमराव का' काम····(२), किसी पातिसाह की' बेटी ब्याहीए (४), 'किसी बातकी' कमी नाही (१२), 'किस ही के' हाथ सौ लेणै न पावै (१४)।

सर्वनाम । विशेषण : प्रश्नवाचक

एकवचन (अविकृत) कौन : 'कौन कौन', उमराउ (१), 'कौन' कै दे (५), तुमा 'कौण कौण' बदिगी षुदायकी की है (१२), 'कौन' नाम रषै (११)।

क्या : तुमारे फाल मैं 'क्या' नाम नजरि आया (११), ऐसी 'क्या' अरज है (१२), तू 'क्या' मागती है (८), मै 'क्या' मांगौ (८)।

एकवचन (अविकृत) काहे तब सिकार 'काहे की' देषीयै (३)।

एकवचन (विकृत) किस : 'किस' वासतै बदिगी करनै लागै (७), दरोग 'किस' वासतै (१२), 'किस' वासतै (१५)।

विशेषण : गुणवाचक

एकवचन पु० अकारान्त : 'कुछ' साहिजादेका नाव 'खूब' सा राखौ (११)।

एकवचन पु० अकारान्त 'ऐसा' सुलतान (१), सु 'कैसा' एक पातिसाह (१), होइ तौ 'भला' (४), हुकम षुदाइका 'अैसा' हुवा (९), साहिजादा पातसाहिकी नजरि 'अैसा' आया (१०) 'ऐसा' ब्याही भी देगा (१२)।

पु० ईकारान्त तब पातिसाह बहुत 'षुसियाली' होय ३, 'असलि' पात-साहिजादा होइ···(४)।

स्त्री० ईकारान्त : सो 'अैसी' मकडीकी सिकार पातिसाह जी देषै (३), 'अैसी' पातिसाही का धणी (३), 'अैसी' बीबी बिवाना पातसाह कौ ब्याही (६), 'अैसी' बदिगी करता करता (७), 'अैसी' क्या अरज है (१२), 'ऊजली' चादरि सितारे की ···(३), कोई अैसी' उमर मैं बेटी कौन कै दे (५), ग्यारह सै आदमी 'असी' भाति रषै (१३), हाथ 'पहली' बाग लागै (१४)।

एकवचन (विकृत) पु०–आ>ए : 'अैसे मैं' बीबी बिवानाकी दाई···· आई (७), 'अैसे मो' सुलतान (३)।

बहुवचन पु०–आ>ए 'अैसे' पख····(१२), पीछे ब्याह और 'बहुतेरे' करैगे (१२), अलह तौ इससौ भी 'आले आले' देगा (१२), 'तूके' ढूंढनेवाले··· (१४), तारे 'से' नग टूटि टूटि परैगे (१४)।

विशेषण : परिमाण वाचक

एकवचन (अविकृत) बड़ा तू 'बडा' साहिब करीम मिहिरबान (५)।

एकवचन (अविकृत) बहुत : 'बहुत' सुरति जमाल····(६), 'बहुत' अजमति (१०), हम 'बहुत' ब्याह करेंगे (१२)।

एकवचन (अविकृत) षूब : 'षूब' फहिम अकलिदार····(६)।

एकवचन (अविकृत) कुछु : 'कुछू' तू माग (८)।

एकवचन (विकृत) – आ>ए : 'बड़े' बाजार आइ जमा होई (१४)

विशेषण : संख्यावाचक

एक : 'एक एक' रानि आवै (१), 'एक' अवल फरज्यदका पेट रहै (७), कुतुबुदीन नवलका 'एक' ब्याह'''(१२), 'एक' ब्याहका नाव''''(१२), गज 'एक' (१४), 'एक' दोइ नग (१४), 'एक' नेवाला उठाय उठायए (१५), घुट 'एक' लीजीए (१५)।

दोइ, दो : एक 'दोइ' नग (१४), 'दो' ईराकी बकसिए (१४)।

तीन ए 'तीन' बस्त जिस · (१२)।

पंज : 'पंज पज' हारके''''(१४)।

सैं । सै : एक 'सै' सौ ब्याह''''हमे सौ करै (१२), ग्यारह 'सै' आदमी असी भाति रषै (१३)।

अवल : एक 'अवल' फरज्यदका पेट रहै (७)।

पहली : 'पहली' बाग लागै (१४)।

आठवै : 'आठवै' रोज जुमाराति आवै (१४)।

क्रिया

क्रियार्थक संज्ञा – णा – ना : 'परणनै' कौ असवार हुवा (५), पातिसाह 'देषणै' सौ रहा (२)।

क्रियार्थक संज्ञा – ला : जब किसी उमरावका काम 'होला' होय (२)

प्ररणार्थक रूप – आव् घोडे कौ षुरी 'करावैगे' (१४)।

प्रेरणार्थक रूप – लाव् : बारीया बेलिया नैना 'दिखलावो' (१३)।

विधिरूप, मध्यम पुरुष : **प्रच्छन्न 'तू'के साथ प्रत्ययहीन रूप** तू ब माग (८), तू कुछू माग (६)।

वही, प्रच्छन्न 'आप'के साथ – इए । यए : तिसपर चीनी''''बषेरीयै' (३), तब मकडी माखीपर 'छोडिए' (६), सु 'दीजीए' (८), तब फेरि नजरि 'करिये' (१०), एक नेवाला 'उठायए' (१५), घुट एक ठडा आब पानीकी 'लीजिए' (१५)।

वही, प्रच्छन्न 'तुम'के साथ–ओ । औ । औं (?) । **यौ** : षैर 'करो' (८),

'जीवो' पातिसाह् सलामति (८), कुछ साहिजादैका नाव खूब सा 'राखौ'(११), हिंदूई कौ पडित नाम 'राषौ' (११), कि 'जीवो' पातसाह् सलामति (११), ए उलमा भी अपना फाल 'देषौ' (११), हजरति आपना फाल 'देषौ' (११), कि आवलि पातिसाहि 'बोल्यौ' (११), ढूढिकै पैदा 'करो' (१२, १२), छिह सैं छडीदार सोनेकी छडी लिये 'रहौ' (१३), बारीया बेलिया नैना 'दिषलावो' (१३) ।

वही, प्रच्छन्न 'तुम'के साथ, भविष्यत् कालमे : -इयौ : लाष 'दीजीयौ' (१३), कोई मत 'पूछियौ' (१३) ।

वही : अन्य पुरुष । संज्ञाके साथ – ऐ 'मैं' साहिजादा अनत जाणै न 'पावै' (१३), लेणै न 'पावै' (१४), दुनियाकी पवन लगने न 'पावै' (१५), दुनियाका जनाव इसकी नजरि न 'आवै' (१५), दुनियाका दरख उसकी नजरि न 'आवै' (१५), जु इसकी नजरि 'पडै' (१६) ।

वही, अन्यपुरुष, आशीर्वादके रूपमें – अंह : साहिजादा बरपुरदार उमर दराज 'होह' (१०) ।

कर्मवाच्य . भूतकाल, भूतकृदन्त रूप : ऐसी बीबी बिवाना पातसाह् कौ 'ब्योही' (६) ।

क्रिया . सामान्य वर्त्त०

संज्ञा अन्य पुरुष एकवचन ऐ । अय .

[इन उदाहरणोमे-से अनेक रूपमे सा० वर्त्तमान किन्तु अर्थसे सा० भूत-कालके हैं ।]

बादस्याही 'करै' (१) एक-एक राति 'आवै' (१), एक बकरा हिरण सो 'लडावै' (१), तब पातिसाह् तषत आइ 'बैठै' (२), तब पातिसाह्को नजरि 'आवै' (२), आदमीका आदमी नजरि 'आवै' (२), मुह्ला लै पातसाह 'उठै' (२), तब सिकार सौ बहुत प्यास पातसाह्का 'रहै' पै घोडै असवार हुआ न 'जाय' (३), स्कर कौ आय माषी 'लगै' (३), सो मकडी''' मक्खी कौ 'पकडै' (३), ज्यौ हिरण कौ चीता 'पकडै' (३), तब पातिसाह् बहुत षुसियाली 'होय' (३), सो ऐसी मकडीकी सिकार पातिसाह् जी 'देषै' (३), जंगलकी सिकार सौ 'रहै' (३), तब ऐसी मकडीकी सिकार 'देषै' (३),

पाव उरि 'करै' (४), सिर नीचा 'रषै' (४), सोना रूपाकी जंजीर सो औंधे 'लटकै' (४), आपणै साहिब कौ यादि 'करै (४), सरोसकी बदगी 'करै' (४), तसबी पातिसाह चारचो पहर यादि 'करै' (४), चेहरा मुहराके खबरि-दार 'होय' (४), अषत काजी यौ 'पढै' (५), फेरि पेटि उमेद 'रहै' (७), सोनेके तुके कुतब 'चलावै' (१६), जो 'पावै' लिए ही का (१४), आठवै रोज जुमाराति 'आवै' (१४), साहिजादा आह 'उतरै' (१४), उसके हाथ सौ कोई और लेणै न 'पावै' (१४), जंगलका ही 'देषै' (१६), पवन भी लगै सु जगलकी ही 'लगै' (१६)।

–ए : पै तू 'दे' (५)।

वही, ह् + ऐ = है : 'है' हंदा (४, ४), यक रोज फजरका वष्त 'है' (७) हमारे फालमे भी याही नाम 'है' (११), हमारी एक अरज 'है' (१२), ऐसी क्या अरज 'है' (१२), बहुत बदिगीका फरजंद 'है' (१२), सायतका वक्त 'है' (१५)।

वही, –ता है–ती है ज्यौ रंगरेज चूनडीको बद 'देता है' (२), तू ब क्या 'माँगती है (८), नवबतौ 'बाजती है' (९), यह बात दरोग 'लगती है' (१२, १६)।

बहुवचन –ऐ : तब पलको सौ रेसके डोरे लगे 'रहै' (२), एक दोह नग लगे 'रहै' (१४), बाहर छडीदार खड़े 'रहै' (१५)।

अपूर्ण वर्त्तमान

कोई उदाहरण नही है।

पूर्ण वर्त्तमान

एकवचन संज्ञा : तुम्हारे बेटेका नवल नाम 'दीया है' (११), जिस षुदाय नै हमको बेटा 'दीया है' (१२), कौण कौंण बादगी खुदायकी 'की है' (१२)।

सम्भाव्य वर्त्तमान

एकवचन सज्ञा, अन्य – पु० इ।ई।य।ऐ :

[कुछ क्रियाएँ रूपमे सम्भाव्य वर्तमानकी किन्तु अर्थमे सम्भाव्य भूतकी है, जैसे सा० वर्त्तमानमे।]

जबै कीसी उमरावका काम होला होय' (२), असलि पातसाहजादा 'होइ' तौ भला (४), तौ इल्म 'आवै' (६), तौ बिदा 'आवै' (६), कि पेट 'रहै' (७), बिवाना कौ फरज्यद 'होइ' (७), बादसाहकी जौष 'आवै (८), माहीना एक का लडिका 'होय' (१०), साहिजादा फेरि माहीनेका 'होई' तब नजरि करिये (१०), एक सै सौ ब्याह कुतुबके हमेसौ 'करै' तौ भी···(१२), जु कौडी लायक आदमी 'आवै' (१३), जब जिसको हाथ पहली बाग 'लागै' (१४)।

वही, –औ : कोई बडा गुनी 'आवौ' (१३)।

एकवचन उत्तम पु० –हुं।औं : तिसकौ लाष 'देहु' (१३), मै क्या 'मागौ (८)।

एकवचन मध्यम पु० : प्रच्छन्न 'आप'के साथ –इयै।इए : पलकौके डोरे षैचि दिस तारै सो 'बाधीए' (२), तब सिकार काहे की 'देषीयै' (३), किसी कै काजी मुला कै आगै 'पढीए' तौ इल्म आवै (६), किसी कौ पडितौ पास 'रखीए'···(६), तिसपर अभ्रात च 'लिखीए' (१४), दो ईराकी 'बकसिए' (१४), नीलक खरीद तिसका जीन 'करिए' (१४)। कचे सूत सौ नग जौ हार 'परोए' (१४), यह मेलि करि घोडेके गले मौ 'बाधिए' (१४), नग 'बाधीए' (१४)।

एकवचन संज्ञा। अन्य पुरुष पु० –गा।इगा।अइगा।इएगा, स्त्री०–इगी। ईगी। ईएगी साहिजादा खूब अजमति पैदा 'होइगा' (१०), जैसा पष 'होइगा' (१२), सो खुदाय ·· ऐसा ब्याही भी 'देइगा' (१२), इससे भी आले-आले 'देगा' (१२), जहा लडिकी सुरति जमाल 'होइगी' (१२), खूब फहीम 'होइगी' (१२), सूरति 'पाईगी' (१२), तौ फहीम कहा 'पाईएगी' (१२), अर फहीम 'पाईएगी तौ पख कहा 'पाईएगी' (१२), साब अलाह ते 'होइगी' (१२)।

बहुवचन वही, पु० –अहिगे। ऐंगे; स्त्री० –इगी : पर मुसकलि सौ पैदा 'होंहिगे' (१२), घोड़ैको खुरी 'करावैगे' (१४), तीन बस्त जिस लडिकि मै 'होइगी' (१२)।

एकवचन उत्तम पु०, पु० –ऊगा पीछै षाल 'काढूगा' (१३)।

बहुवचन वही, वही –ऐंगे।अहिगे तब हम 'कहैगे' (११), हम बहुत ब्याह 'करैगे' (१२), मै अवलि ब्याह तहा 'करैगे ··(१२), अवलि तही 'ब्याहैंगे' (१२), पीछै ब्याह और बहुतेरे 'करैगे' (१२), नग टूटि टूटि 'परैगे' (१४), गरीब 'लूटहिंगे' (१४)।

सामान्य भूत

एकवचन पु० –आ।या : आहु षाना पेरोज षा सौ पैदा 'हुवा' (१), पातिसाह देषणै सौ 'रहा' (२), एक दिन तषतपर कयास करता 'हुवा' ज मेरे च्यारि बेटे (४), तब साहिब मिहरबान 'हुवा' (४), समरकदके पातसाहका नालेर 'आया' (५), बहुत षुसाल 'हुवा' (५), खुदायको आदि करता 'हुवा' (५), परगनै कौ असवार 'हुवा' (५), षुदाय मिहरबान 'हुवा' (७), पातिसाहि 'पूछ्या' कि दाई क्यौ आई (७), पातिसाह हुकम 'दिया' (८), हुकम खुदाइका ऐसा 'हुवाय' एक रोज गुजरान 'हुवा' (१०), दूसरा रोज गुजरान 'हुवा' (१०) सायति मै गुसल 'किआ' (१०), दाई कपडे पिन्हाइ ले " पेस 'कीया' (१०), साहिजादा पातसाहिकी नजरि अैसा 'आया' (१०), पातसाह नै हुकम 'कीया' (१०), साहिजादा राषा 'तब' पातसाहिकी नजरि साहिजादा ऐसा 'आया' (१०), अैसा 'देषा' (१०), साहिजादा बहुत अजमति पैदा 'हुआ' (१०), तब पडिता आपणा सास्त्र 'देष्या' (११), तब साहिजादा कुतबदीन नवल नाम नजरि 'आया' (११), तब पातसाहुनै भी फाल देखा (११), तब पातसाह कौ भी नवल नाम नजरि 'आया' (११), तुमारे फाल मै क्या नाम नजरि 'आया' (११), साहिजादा कुतबदीन नवल नाम 'दीया' (११), की षूब 'कीया' (११), एक ब्याहका बांब क्यौ 'लीया' (१२, १२), कुतुबदी दिल्लीके घर पातसाहजादा पैदा 'हुआ' (१२), एता जवाब बीबी बिवाना नै 'कीया' (१२), यह जवाब पातिसाह नै 'कीया' (१२), तिन्हौको पातिस्याह हुकम 'कीया' (१३), दूध होणै 'लागा' (१४), खाना खाणै कौ 'बैठा' कुतबदीन नवल (१५), अवलि पुरान वाला 'बोला' (१५), कुतब० षाणौ षाय करि बाहरि 'आया' (१५) दूसरा घोडा उस ही रौसका फेरि करि 'आया' (१५), हाजिर 'हुवा' (१५)।

एकवचन स्त्री०-ई : तिन दरियावकी मछी 'मारी' (१), तिसकी निवै बरसकी उमर 'हुई' (२), षुब षुस्त बदगी षुदायकी 'की' (४), पातसाह कौ फेरि जवानी 'चढी' (५), जाय समरकदके पातसाहकी बेटी 'ब्याही' (५), पेरोज साह नै बीबी बिबाना 'ब्याही' (५), पैदा 'हुई' (६), दौडी ही 'आई' (७), दाई क्यो 'आई' (७), खुस खबरि 'ल्याई' (७), बीबी बिवाना कौ पेट की उमेद 'रही' (७), बदी 'करी' नाह (८), ताज कुलह की ताषी सिर पर 'राषी' (१०), तब बीबी बिवाना फेरि 'बोली' (१२), तब बीबी बिवाना 'बोली' (१२), तिन्हकौ य हकीकति 'फुरमाई' (१३)।

बहुवचनके लिए एक०का प्रयोग : आखै की पलकौ गालै सौं आई 'लगी' (२), तरीक बेद की कुरान की··· पैदा 'हुई' (६)।

बहुवचन पु०-ए।अए : मन च्यते कारिज 'हुए', कपडे 'पिहने' (१०), साहिजादे कु कपडे 'पिन्हाए' (१०), उलमा वा पंडित 'बोले' (११), तब ताई पडित व उलमा 'बोले' नाही (११), तब पंडित उलमाव 'बोले' (११), तब पातसाह 'बोले' (१२), ग्यारह सै आदमी कुतुब पास 'रखे' (१२), ग्यारह सै आदमी असी भाति 'रषै' (१३), ह्यद्दुगी तुरकी कुरान भी हाजरि 'हुए' (१५) ईस ही रौस निवाले 'गिणे' (१५) महल सहर बाहिरे 'कराए' (१५)।

वही, –अते : पडित 'कहते' नाही (११)।

आदरार्थक बहुवचन-ए।ऐ : पेरोज बादिसाह दिल्ली 'आऐ' (६), बादसाह तख्तपर आइ 'बैठे' (७), पातसाह उमराव सौ 'बोले' (१०), पातसाहि 'बोले' (११), पातसाहि 'लागे' पूछने (११), पातिसाहि कहणै 'लागे' (१२), नब पातसाह 'बोले' (१२), पातसाह 'बोले' (१२, १२), आप अदर षाणा षाणै कुं 'आए' (१५), आपणे महल 'आए' (१५)।

अपूर्ण भूत

कोई उदाहरण नही है।

पूर्ण भूत

बहुवचन पु० –अए थे · दोइ लाख रुपैये कुरबान 'हुवए थे' (९)

वर्त्तमान कृदन्त

एकवचन पु० –ता : एक दिन तख्त पर क्या स 'करता' हुवा ···(४), षुदाय को आदि 'करता' हुवा (५), ऐसी बदिगी 'करता करता ···' (७), खुश 'करावते' (१५), नग 'लुटावते' (१५)।

वही, स्त्री० –ती यह बात दरोग लगती है (१२), याह बात दरोग लगती है (१२)।

भूत कृदन्त

एकवचन पु० –या : कुतुब षुब जतन सौ 'राष्या' चाहिए (१२)।

वही, स्त्री० –ई : ऐसी बीबी विवाना पातसाह कौ 'ब्याही' (६), 'दौडी' ही आई (७)।

बहुवचन पु० ए : तब पलको सौ रेस के डोरे 'लगे' रहै (२), एक-दोइ नग 'लगे' रहै (१४), छडीदार बाहरी 'खड़े' रहै (१५)।

पूर्वकालिक कृदन्त

ई, इ : आषै की पलको गालै सौ 'आई' लगी (२), तब पातिसाह तप्त 'आइ' बैठे (२), सेहुरा सै 'बाधि' पातिसाह परणनै कौ असवार हुवा (५), दिल्ली 'आइ' फेरि पातसाह पुदाय की बदिगी करने लागे (७), कुरबान 'करि' खैर करो (६), सिर मैं पानी 'डालि' कपडे पिह्ने (१०), दाई कपडे 'पिन्हाइ' पेस किया (१०), तमलीम 'करि' बिवाना कहा (११), सो षुदाय कुतुब० को ऐसा 'ब्याही' देगा (१२), नीलक खरीद 'की' तिसका जीन करिए (१४), 'टूटि टूटि' परैगे (१४), 'जाई' षाणा षाणै कौ बैठा (१५)।

ऐ, ए : मुहला 'से' पातिसाह उठै (२), दाई कपडे पिन्हाइ 'ले'... पेस कीया (१०), साहिजादा हरम खानै मै 'ले' गए (११), आप खुसाल 'होय'.... आई उतरै (१४)।

य . तब गिलम ऊपर ऊजली चादरि 'बिछाय' ... (३), सकर कौं 'आय' माषी लगै (३), 'जाय' समरकद के पातसाह की बेटी ब्याही (५)।

बिना प्रत्ययके : पातसाह नौ नाम 'देकर'.....(११)।

वर्त्तमान कृदन्त करि, कै, कर : मकडी दौडि 'कै' मक्खी कौ पकडै (३), साहिजादे कु न्हलाइ 'कै' कपडे पिन्हाइ (१०), कुतुबुदीन नवल का एक ब्याह 'ढूढि' कै पैदा करो (१२), 'ढूढि' करि पैदा करौ (१२), येह मेलि 'करि करि' घोडे के गले मौ बाधीए (१४), कुतुब० षाणा षाय 'करि' बाहरि आया (१५), दुसरा घोडा फेरि 'करि' उस ही रौस का आया (१५)।

मिश्र क्रिया

असवार 'हुवा न जाय' (३), 'करणै लागा' (४), 'करने लागे' (७), 'करनै लागे' (७), 'करणै लागे' (७), पातसाह 'लागे पूछणै' (११), हरम पातिसाह 'कहणै लागै' (१२), 'ब्याही देगा' (१२), 'राष्या चाहिए' (१२), 'जाणै न पावै' (१३), 'करणै न पावै' (१२), 'लेणै न पावै' (१४, १४), एक दोइ नग 'लगे रहै' (१४), रास 'होणै लागा' 'लगने न पावै' (१६)।

अव्यय : अवधारण वाचक

-औ, -औं तसबी पातिसाह 'चारयौ' पहर आदि करै (४), 'च्यारौ' ही हकीकति पैदा हुई (६)।

ई : 'सोई' नाम षूब (११)।

च तिस पर अभात 'च' लीषीए (१४)।

तौ : अब 'तौ' लाषौ (९), अलह् 'तौ' इससे भी आले आले देगा (१२)।

ही · च्यारौ 'ही' हकीकति पैदा हुई (६), पहलै 'ही' पेट रहै (७), दौडी 'ही' आई (७), हमारे फाल मैं भी या'ही' नाम है (११), जो पावै तिस 'ही' का (१४), किस 'ही' के हाथ से····(१४), जंगल का 'ही' जनावर जगल का 'ही' दरष्त जगल का 'ही' देषै (१६), पवन भी लगै सु जंगल की 'ही' लगै (१६)।

भी : ए उलमा 'भी' अपना फाल देषौ (११), हजरति 'भी' अपना फाल देषौ (११), तब पातसाह नै 'भी' फाल देखा (११), तब पातसाह कौ 'भी' नजरि आया (११), हमारे फाल मै 'भी' याही नाम है (११), तौ 'भी' किसी बात की कमी नाही (१२)।

अव्यय : स्थिति वाचक

उरि : पाव 'उरि' करै (४)।

नीचा सिर 'नीचा' रखै (४)।

औधे : पातस्याह 'औधे' लटकै (४)।

पहलै, : 'पहलै' ही एक अवल फरज्यंद का पेट रहै (७)।

आगै : तब पातसाह की नजरि 'आगै' राषा (१०)।

अवलि : कि 'अवलि' पातिसाह बोल्यो (११), पै 'अवलि' ब्याह ' 'तहाँ करैगे (१२), कुतुब० को 'अवलि' तही ब्याहैगे (१२), 'अवलि' पुरानवाला बोला (१५)।

पीछै : 'पीछै' ब्याह और बहुतेरेक रैगे (१२), 'पीछै' खाल काढूगा (१३)।

उपरांति : सौ मुहुर 'उपराति' ·· (१३)।

अव्यय : स्थानवाचक

तहां : पै अवलि ब्याह 'तहा' करैगे (१२), अवलि 'तही' ब्याहैगे (१२)।

जहां : 'जहा' लडिकी सुरति जमाल होइगी (१२), 'जहा' तक षूब ब्याह ·· पैदा करौ (१२)।

कहां : तौ फहीम 'कहा (कहा) पाईएगी (१२), अर फहीम पाईएगी तौ पष 'कहा' पाईएगी (१२)।

अनंत · पै साहिजादा 'अनत' जाणै न पावै (१३)।

अव्यय : कालवाचक

यो : 'यो' गिणी पाणी की घुटै (१५)।

हमेसौं . एक सै सौ ब्याह 'हमेसौ' करै (१२)।

फेरि · पातसाह कौ 'फेरि' जवानी चढी (५), दिल्ली आइ 'फेरि' पातसाह षुदाइ की बदिगी करने लागे (७), 'फेरि' पेटि उमेद रहै (७), साहिजादा 'फेरि' माहीनेका होई (१०), 'फेरि' ··· (१२, १३, १४, १५)।

तब : 'तब' पलको सौ रेस के डोरे लगे रहै (२), 'तब' पातिसाह तषत आइ बैठे (२), 'तब' पातिसाहिको नजरि आवै (२), 'तब' सिकार सौ बहुत प्यास पातसाह का रहै (३), 'तब' सिकार काहे की देषीयै (३), 'तब' गिलम ऊपर····(३), 'तब' मकडी माष्यौ पर छोडिए (३), 'तब' पातिसाह बहुत षुसियाली होय (३), 'तब' ऐसी मकडीकी सिकार देषै (३), 'तब' साहिब मिहरबान हुवा (४), 'तब' पातिसाह की नजरि आगै राषा (१०), 'तब', नजरि करिए (१०), 'तब' पडितौ अपणा सास्त्र देष्या (११), 'तब' साहिजादा कुनब'' 'नाम नजरि आया (११), 'तब' हम कहैंगे (११), 'तब' पातसाहनै भी फाल देषा (१), 'तब' ताई पडित ब उलमा बोले नाही (११), 'तब' पडित उलमा ब बोले (११), 'तब' ·· (१२, १२, १२, १२, १२, १३, १३)।

जब : 'जब' किसी उमरावका काम होला होय····(२), 'जब' जिसकौ हाथ····(१)।

अब, ब : तू 'ब' माग (८), 'अब' तौ लाषौं (९), 'अब' मोती छाडीयै है (९)।

अव्यय : रीतिवाचक

ज्यौं, जौं : 'ज्यौ' रगरेज चूनडी कौ बंद देता है (२), 'ज्यौ' हिरण चीता कौ पकडै (३), नग 'जौ' हार पिरोए (१४)।

यौं : अषत काजी 'यौ' पढै (५)।

क्यौं . दाई 'क्यौ' आई (७), 'क्यौ' यारौ 'क्यौ' बोलते नाही (११, ११), एक ब्याह का नाव 'क्यौ' लीया (१२, १२)।

सैं . सेहुरा 'सै' बाधि परणनै को असवार हुवा (५)।

अव्यय : संयोजक

या : 'या' मुसकलि 'या' सान साब अलाह ते होइगी (१२)।

परि, पै, पै, पर : 'पर' मुसकलिसौ पैदा होहिंगे (१२), 'पै' कुतुब० षूब जतन सौ राष्या चाहिए (१२), 'पै' साहिजादा अनत जाणै न पावै (१३), 'प' घोड़ै असवार हुवा न जाय (३), 'परि' असल कोई नही (४), 'पै' तू दे (५), 'पै' अवलि ब्याह ·(१२)।

तौ : होइ 'तौ' भला (४), 'तौ' बिछा आवै (६), 'तौ'··· (१२, १२, १२, १३)।

जु, ज . 'ज' मेरे च्यारि बेटे (४), किस वासतै 'जु'. मेरे च्यारि बेटे·· (१६), दुनिया की बतास··· न लागनै पावै 'जु' दुनियाका जनावर··· नजरि न आवै (१६)।

सु, सो : 'सु' बीबी बिवाना सुरति जमाल (६), 'सो' ऐसी मकड़ी (३), 'सो' किस रौस बकसिए (१४)।

अर : 'अर' च्यारी पहर··· होय (४), 'अर' फहीम पाईएगी (१२)।

कि : 'कि' ···(६, ७, ८, १०, १०, ११, ११, ११, ११, ११, ११, ११, १२, १२, १२, १३)।

अव्यय : स्वीकार-निषेधवाचक

हां : 'हा (११)।

न, ना, नही, नांह, नाही · कोई 'नही' (४), बदी करी 'नाह' (८), 'ना' (११), पडित कहते 'नाही' (११), पडित कहते नाही (११), बोले 'नाही' (११), किसी बातकी कमी 'नाही' (१२), 'न' पावै (१४), कुदरत नाही (१४),।

मत : साहिजादै को कोई 'मत' पूछियौ (१३)।

तुलनात्मक विवेचन

विशेष : कु० = कुतबशतक; वा० = कु० की बार्त्तिक टीका (जिसकी प्रति सं० १७२२ की है) ।

संज्ञा : एकवचन पु० (अविकृत रूप)

कु० तथा वा० दोनोमे शब्द अपने प्रत्ययहीन रूपमे प्रयुक्त हुए मिलते है ।

कु० मे कहीं-कही पर अकारान्त शब्दोके साथ स्वार्थिक प्रत्ययके रूपमे -उ प्रयुक्त मिलता है, यद्यपि केवल कर्त्ता और कर्म कारकोमे । वा० मे यह नही है ।

कु० मे केवल पद्योमे – और वह भी दो-चार स्थानोपर – अकारान्त शब्दोमे -आ । आह स्वार्थिक प्रत्ययके रूपमे लगा मिलता है । वा० मे यह भी नही है । हो सकता है कि पद्य उसमे नही आते हैं, इसलिए यह प्रत्यय उसमे न मिलता हो । कु० मे यह प्रत्यय स्त्रीलिगमे भी इसी प्रकार मिलता है ।

कु० मे केवल पद्योमे कही-कही पर – इया भी स्वार्थिक प्रत्ययके रूपमे लगा हुआ मिलता है । वा० मे यह नही है । वा० मे कोई पद्य नही आता है, इसीलिए सम्भव है यह प्रत्यय भी न मिलता हो ।

संज्ञा : एकवचन स्त्री० (अविकृत रूप)

कु० तथा वा० दोनोमे शब्द अपने प्रत्ययहीन रूपमे प्रयुक्त हुए मिलते है ।

कु० मे अकारान्त शब्दोके साथ स्वार्थिक प्रत्ययके रूपमे – इया और ईकारान्त शब्दोके साथ उसी प्रकार – आ । आह जुडा हुआ मिलता है । वा० मे यह नही है ।

संज्ञा : बहुवचन पु० (अविकृत रूप)

कु० मे अकारान्त शब्दोका बहुवचन –आ । आ लगाकर बनाया गया है । दक्खिनी हिन्दीमे प्रत्यय केवल –आ मिलता है, –आ नही । इसलिए यह असम्भव नही है कि कु० मे भी प्रत्यय –आ ही हो, जिसका अनुनासिकका बिन्दु प्रतिलिपि-क्रियामे भूलसे छूट गया हो । वा० मे यह प्रत्यय नही मिलता है ।

कु० मे कभी-कभी अकारान्त शब्दोका बहुवचन – ह प्रत्यय लगाकर भी बनाया गया मिलता है।

अकारान्त फारसी शब्दोका बहुवचन कु० तथा वा० दोनोमे कभी-कभी –आन प्रत्यय लगाकर बनाया गया है।

आकारान्त शब्दोका बहुवचन दोनो कु० तथा वा० मे –आ के स्थानपर –ए रखकर बनाया गया है।

बहुवचनके लिए एकवचन रूपका प्रयोग कही-कही पर कु० तथा वा० दोनोमे मिलता है।

संज्ञा : बहुवचन स्त्री० (अविकृत रूप)

कु० मे अकारान्त शब्दोके बहुवचन –या। या लगाकर बनाये गये है। वा० मे इसके उदाहरण नही है। दक्खिनीमे –या नही मिलता है –याँ ही मिलता है, इसलिए असम्भव नही है कि कु० मे भी प्रत्यय –याँ रहा हो, जिसका बिन्दु प्रतिलिपि क्रियामे कही-कही पर छूट गया हो।

इसी प्रकार कु० मे अकारान्त शब्दोके बहु० –इया। –इया लगाकर भी बनाये गये हैं, जो वा० मे नही हैं। दक्खिनीमे –इया के उदाहरण नही मिलते है, –इयाँ के ही मिलते हैं। इसलिए असम्भव नही है कि कु० मे भी प्रत्यय –इयाँ ही रहा हो, जिसका बिन्दु प्रतिलिपि क्रियामे कही-कही पर छूट गया हो।

कु० मे कही-कही पर अकारान्त शब्दोके बहुवचन –इ लगाकर भी बनाये गये है। वा० मे इसके उदाहरण नही हैं। यही –इ बादमे –ए के रूपमे विकसित हुआ है।

वा० मे अकारान्त शब्दके बहु० –औ। औं लगाकर बनाये गये है, जो कि कु० मे नही है। यह परवर्ती –ओं से तुलनीय है।

कु० तथा वा० दोनोमे इकारान्त। ईकारान्त शब्दोके बहुवचन –या जोडकर बनाये गये है।

कु० मे पद्योमे ही कभी-कभी –इ। ईकारान्त शब्दोके बहुवचन –यां के बाद स्वार्थिक –ह और जोड़कर बनाये गये है। वा० मे इसके उदाहरण भी नही है।

कु० तथा वा० दोनोमे कभी-कभी बहुवचनके स्थानपर एकवचनका ही प्रयोग हुआ है।

संज्ञा : एकवचन (विकृत रूप)

कु० तथा वा० दोनोमे आकारान्त पु० शब्दोका –आ कहीं-कही पर –अइ। ऐ मे परिवर्तित हुआ है, अथवा कु० तथा वा दोनोमे यह –आ । –ए मे परिवर्तित हुआ है। इन दोनोमे से –अइ । ऐ प्रयोग प्राचीनतर लगता है, जो घिसकर पीछे –ए हो गया। फारसी-अरबी लिपिमे तीनो ध्वनियोके एक प्रकारसे लिखे जानेके कारण पुरानी दक्खिनीसे इस समस्यापर कोई प्रकाश नही पडता है, क्योकि पुरानी दक्खिनीकी समस्त रचनाएँ फारसी-अरबी लिपिमे मिलती है।

कभी-कभी दोनोमे आकारान्त शब्द प्रत्ययहीन रूपमे ही प्रयुक्त हुए हैं।

विकृत रूप-निर्माणको यह प्रवृत्ति दोनोमे आकारान्त शब्दो तक ही सीमित है।

संज्ञा : बहुवचन (विकृतरूप)

कु० मे अकारान्त पु० शब्दोका बहुवचन –आ । आं लगाकर बना है। वा० मे –आ ही प्रयुक्त हुआ है। दक्खिनीमे भी –आ का ही प्रयोग मिलता है। इसलिए यह ज्ञात होता है कि कु० मे भी –आं का ही प्रयोग हुआ होगा, जिसका अनुनासिकका बिन्दु प्रतिलिपि-क्रियामे छूटकर निकल गया होगा।

कु० मे अकारान्त पु० शब्दोका बहुवचन कही-कही पर –ह । हु जोडकर बनाया गया है। कु० की यह प्रवृत्ति बहुवचनके अविकृत रूप-निर्माणमे भी ऊपर देखी जा चुकी है।

कु० मे अकारान्त स्त्री० शब्दोके बहुवचनके उदाहरण नही हैं। वा० मे स्त्री० अकारान्त शब्दोमे ए । औ जोडकर विकृत रूप बनाये गये हैं।

कु० मे इ । ईकारान्त शब्दोमे –न । नु लगाकर विकृत रूप बनाये गये हैं, जबकि वा० मे –यौं लगाकर बनाये गये हैं। दक्खिनीमे वे –न तथा –यो दोनो लगाकर बने हैं।

संज्ञा : लिंग निर्माण

पु० अकारान्त । आकारान्त शब्दोके स्त्री० कु० तथा वा० दोनोमे –अ । आ के स्थानपर –ई लगाकर बनाये गये है।

कु० मे इकारान्त । ईकारान्त शब्दोके स्त्री कभी इकार । ईकारको अकार-मे परिवर्तित कर और कभी उन्हे बिना परिवर्तित किये नि । नी । न जोडकर बनाये गये हैं। वा० मे इसके कोई उदाहरण नही है। दक्खिनीमे भी दोनो प्रकारसे स्त्रीलिंग-निर्माण हुआ है।

संज्ञा : प्रथमा विभक्ति

कु० मे एकवचन तथा बहुवचन अकारान्त । आकारान्त शब्दोकी प्रथमाकी विभक्ति –इ । इ है, ईकारान्त शब्दोमे भी यही विभक्ति लगी है, केवल कही-कहीपर आकारान्त शब्दोमे इसके स्थानपर –ए । ए की विभक्ति लगी मिलती है । वा० मे ये विभक्तियाँ नही मिलती है । केवल एक स्थानपर उसमे अकर्मक क्रियाके साथ अकारान्त स्त्री० शब्दके आकारको –ऐ मे परिवर्तित कर विभक्ति युक्त रूप बनाया गया है, अन्यथा वा० मे सर्वत्र इस कार्यके लिए विकृत रूपके साथ नै । नै परसर्गका प्रयोग हुआ है । दक्खिनीमे 'ने' का ही प्रयोग मिलता है, जो नै । नै का घिसा हुआ रूप ज्ञात होता है । अनेक विद्वानोकी धारणा है कि खडी बोलीमे नै । ने का प्रयोग बादमे प्रचलित हुआ, पहले नही था । कु० से इस धारणाका समर्थन होता है । –इ । इ, –ऐ । ऐ, ए । ए मे-से अधिक प्रामाणिक कदाचित् सानुनासिक बिन्दु युक्त रूप है, जिसका बिन्दु प्रतिलिपि-क्रियामे छूट गया है । इनमे-से अपेक्षाकृत अधिक प्राचीन –इ । इ रूप लगता है जो कि क्रमशः ए । ऐ ए । ए मे बदल गया है ।

कु० तथा वा० दोनोमे एकवचन तथा बहुवचनमे विभक्ति युक्त अर्थोमे निर्विभक्तिक रूप प्रयुक्त हुआ है । दक्खिनीमे भी यह प्रवृत्ति मिलती है ।

द्वितीया विभक्ति

कु० मे द्वितीयाकी दो प्रकारकी विभक्तियाँ मिलती है . एक० । बहु० मे –कुं, और एक वचनमे –नु तथा बहुवचनमे –नइ । वा० मे –कौ । को मिलती है । केवल एक स्थानपर उसमे –कै विभक्ति भी मिलती है । दक्खिनीमे भी –कु । कूं विभक्ति ही मिलती है । अत –कौ । को –कु । कूं का ही परवर्ती रूप ज्ञात होती है । –न और –नइके प्रयोग अब केवल पजाबी तथा राजस्थानीमे रह गये है । ऊपर हमने देखा है कि कु० मे –नै । नै परसर्गोका प्रयोग प्रथमामे नही मिलता है । इसलिए यह असम्भव नही है कि पुरानी खडी बोलीमे द्वितीयामे एक० –नु और बहुवचन –नइ का ही प्रयोग रहा हो, जिसका स्थान क्रमश ब्रज० –कु । कू, और –कौ । कौ ने ले लिया हो जब उसमे –नै । नै का प्रयोग प्रथमामे होने लगा हो ।

तृतीया विभक्ति

कु० मे दो कुलोकी विभक्तियाँ मिलती है : –स कुलकी –सुं । सूं । सौ तथा –थ । त कुलकी –थी । ती तथा –तइं । तइ । वा० मे –स कुलकी –सौ

विभक्ति ही सामान्यत प्रयुक्त हुई है, केवल एक स्थानपर –त कुलकी –ते प्रयुक्त हुई है। दक्खिनीमे भी दोनो कुलोकी –सू। से तथा –थे। थे और –ते। ते प्रयुक्त मिलती हैं।

कु० मे कही-कही अकारान्त शब्दोका अकार –ए मे बदलकर ही तृतीयाका काम लिया गया है। वा० मे यह नही है।

विभक्ति युक्त अर्थमे निर्विभक्तिक प्रयोग कु० तथा वा० दोनोमे मिलते है।

चतुर्थी विभक्ति

कु० मे चतुर्थीकी विभक्तियाँ –कु और –कु ताई हैं जो शब्दोके अविकृत रूपके साथ लगी है, वा० मे वे –कु तथा –कौ है। दक्खिनीमे –कू। को तथा –तइ। ताईं विभक्तियाँ मिलती है। –कौ और –को। –कु के परवर्ती विकास ज्ञात होते है।

कु० मे क्रियार्थक सज्ञाओंको –आ > –अइ युक्त विकृत रूप मात्रमे प्रयुक्त किया गया है। आधुनिक –ए रूप इसीका विकास है।

पंचमी विभक्ति

कु० मे पचमीके लिए –हनइ। हतइ परसर्गका प्रयोग हुआ है, जो वा० और दक्खिनीमे नही है। 'त' परिवारकी –तइ तथा –थी भी कु० मे पायी जाती है, जो कि तृतीयाकी –तइ और –थी से अभिन्न लगती है। वा० मे इनमे-से –थी ही मिलनी है। दक्खिनीमे भी –थी की समानान्तर थे। थे है, यद्यपि यह असम्भव नही है कि पुरानी दक्खिनीमे वह –थी ही रही हो, और क्योकि फारसी लिपिमे –थी तथा –थे एक ही प्रकारसे लिखे जाते थे, इसलिए –थी को भी –थे पढ लिया गया हो। –तइ और –थी –हतइ। हतइ से विकसित ज्ञात होते है।

वा० मे 'स' परिवारकी –सौं भी प्रयुक्त हुई है, जो कि तृतीयाके –सौं से तुलनीय है। कु० मे यह नही है। दक्खिनीमे यह –सू के रूपमे जिस प्रकार तृतीयामे पायी जाती है, उसी प्रकार पचमीमे भी।

कु० मे एक स्थानपर विभक्तियुक्त अर्थमे निर्विभक्तिक प्रयोग भी मिलता है।

षष्ठी विभक्ति

कु० तथा वा० मे षष्ठीकी विभक्तियाँ 'का' परिवारकी हैं। केवल कु० के पद्योमें –हंदा परिवारकी विभक्तियाँ भी प्रयुक्त हुई हैं, जो न वा० मे मिलती है

और न दक्खिनीमे। यह 'हंदा' उस प्राचीनतर भाषा रूपका अवशेष प्रतीत होता है जिससे पजाबी और खडी बोलीके समान तत्त्व विकसित हुए होगे। पजाबीमे यह –दा के रूपमे अभीतक सुरक्षित है। इस –हंदा का प्रयोग उस खडी बोली कवितामे भी बहुतायतसे मिलता है जो राजस्थानमे बहुत पीछे तक रची गयी है।

कु० मे –का का विकृत रूप –कइ। के है, वा० मे –कै। कै। के है, दक्खिनीमे –के मात्र है। ऐसा ज्ञात होता है कि विकासका क्रम कइ—>कै। कै—>के है।

कु० मे स्त्री० बहु० मे –कीया। क्या विभक्ति है, दक्खिनीमे भी –किया के रूपमे मिलती है। वा० मे –की का ही प्रयोग स्त्री० बहु० मे भी हुआ है, जैसा आधुनिक खडी बोलीमे मिलता है। वा० की यह प्रवृत्ति कु० की तुलनामे परवर्ती ज्ञात होती है।

कु० मे एक स्थानपर –हिं विभक्तिका भी प्रयोग मिलता है, जो न वा० मे है और न दक्खिनी मे। यह –हिं अवधारण वाची अव्यय भी हो सकता है, उक्त उदाहरणमे ऐसा ज्ञात होता है, इसलिए यह विभक्तिके रूपमे सन्दिग्ध है।

कु० तथा वा० दोनोमे विभक्तियुक्त अर्थोमे निर्विभक्तिक प्रयोग भी मिलते है। दक्खिनीमे इनकी स्थिति ज्ञात नही है।

सप्तमी विभक्ति

कु० मे अकारान्त शब्दोका सप्तमीयुक्त रूप अकारको –इ। अइ मे परिवर्तित करके बनाया गया है। वा० मे यह विभक्ति –इ। –ऐ। –ऐं के रूपमे मिलती है। दक्खिनीमे सर्वत्र –ए का प्रयोग हुआ है। विकास क्रम कदाचित् है –अइ—>-ऐ। -ऐं—>ए। पुरानी दक्खिनीमे भी यदि –अइ रहा हो और उसे फारसी लिपिमे लिखे जानेके कारण –ए पढा गया हो, तो आश्चर्य न होगा।

कु० मे आकारान्तका एक ही उदाहरण मिलता है और वह पद्यमे है। उसमे -आ –ए मे परिवर्तित हो गया है और उसके अनन्तर –ह स्वार्थिक लगा दिया गया है। वा० मे आकारान्त शब्दोके उदाहरण नही है।

कु० मे कभी कभी अकारान्त। आकारान्त शब्दोको हकारान्त करके उनमे –आ का स्वार्थिक प्रत्यय भी लगाया गया है। वा० मे इसके उदाहरण नही हैं।

इनके अतिरिक्त कु० और वा० दोनोमे 'मे' और 'पर' परिवारके परसर्ग पाये जाते है। कु० मे –मे परिवारके परसर्ग हैं –मइ। मि। मै तथा महि। महिं। माहि, वा० मे इस परिवारके परसर्ग है –मै। मै। मे तथा मही। इनके अतिरिक्त वा० मे –मो। मौ। भी मिलते है। दक्खिनीमे उपर्युक्त परसर्गोमे-से –मे तथा मह। माही हैं। प्रथमके विकासका क्रम ज्ञात होता है –मइ—>मै। मै—>मे। मो। मौ का आगमन ब्रजभाषाके प्रभावसे हुआ ज्ञात होता है।

कु० मे 'पर' परिवारके परसर्ग है –परि। पइ तथा उप्परइ। उप्परि। उप्पर। वा० मे है –पर तथा –ऊपर मात्र। दक्खिनीमे भी –पर तथा –ऊपर ही मिलते है। विकासका क्रम कदाचित् है –परि—>पर तथा उप्परइ। उप्परि—>उप्पर—>ऊपर।

विभक्ति-युक्त अर्थोमे निर्विभक्तिक प्रयोग कु० तथा वा० मे समान रूपसे पाये जाते हैं। दक्खिनीमे भी ये मिलते है।

संबोधन विभक्ति

आकारान्त एक० शब्दोके विभक्ति-युक्त उदाहरण नही है। वा० मे अकारान्त बहु० शब्द ओकारान्त हो गये हैं। कु० मे उनमे – आन जुड गया है, जो फारसीसे आया हुआ लगता है। आकारान्त शब्द कु० तथा वा० दोनोमे एकारान्त हो गये हैं।

स्वतन्त्र संबोधनात्मक अव्ययोके रूपमे कु० मे प्रयुक्त है पु०। स्त्री० मे 'अबे'। 'बे' तथा स्त्री० मे 'रि'। वा० मे प्रयुक्त है 'ए'। दक्खिनीमे 'रि' का पु० 'रे' है और 'ऐ' के रूपमे 'ए' है। 'अबे'। 'बे' फारसीसे आये है। 'ए' तथा 'ऐ' मे प्राचीनतर 'ए' लगता है जो आकारान्त शब्दोके –आपके स्थानपर आता है। पुरानी दक्खिनीमे भी यदि 'ए' ही रहा हो, जिसे फ़ारसी-अरबी लिपिके कारण 'ऐ' पढा गया हो, तो आश्चर्य न होगा।

शब्दोके निर्विभक्तिक रूप भी कु० तथा वा० दोनोमे प्रयुक्त हुए हैं।

मिश्र विभक्तियाँ

कु० मे कही-कहीपर मिश्र विभक्तियोके भी उदाहरण मिलते हैं; वा० मे ऐसे उदाहरण नही है।

सर्वनाम : उत्तमपुरुष

कु० मे कर्ता एक० मे कर्तृवाच्यका 'हू' तथा कर्मवाच्यका 'मइ। मइ' दोनो मिलते है, वा० मे केवल 'मै' का प्रयोग मिलता है। दक्खिनीमे भी 'मइं। मैं' ही मिलता है। 'हू' की परम्परा प्राकृत और अपभ्रशकी है और प्राचीनतर है। कर्मवाच्यके रूपोमे विकास-क्रम कदाचित् होगा 'मइ'—>'मइ'—> 'मैं'। पुरानी दक्खिनीमे यदि 'मइ' ही रहा हो, 'मै' न रहा हो, तो आश्चर्य न होगा, क्योकि फारसी-अरबी लिपिमे दोनो एक ही प्रकारसे लिखे जाते है।

कु० मे एक० के कर्म—सम्प्रदानके रूप है 'मुझइ' तथा 'मेरे कु'। वा० मे इसके उदाहरण नही है। दक्खिनीमे ये 'मुझे' तथा 'मेरे कू' रूपमे मिलते है। पुरानी दक्खिनीमे भी ये यदि 'मुझइ' और 'मेरे कु' रहे हो तो आश्चर्य नही होगा क्योकि ये भी फारसी-अरबी लिपिमे उसी प्रकार लिखे जाते है जैसे 'मुझे' और 'मेरे कू'। विकास-क्रम कदाचित् है 'मुझइ'—>'मुझे'।

कु० मे एक० सम्बन्धका रूप एक० विशेष्यके साथ है 'मेरइ' तथा बहु० विशेष्यके साथ है 'मेरे'। वा० मे केवल बहु० विशेष्यके साथका 'मेरे' रूप मिलता है। दक्खिनीमे भी 'मेरे' रूप ही मिलता है। या तो यह है कि एक० और बहु० विशेष्यका यह अन्तर पहले प्रचलित था, बादमे उठ गया और या तो यह है कि दोनोका कार्य एक ही है, उनमे केवल रूप-भेद है। यदि पिछला अनुमान सही हो तो विकास-क्रम कदाचित् होगा 'मेरइ'—>'मेरे'। दक्खिनीमे जो 'मेरे' है, असम्भव नही कि वह 'मेरइ' रहा हो और फारसी-अरबीमे दोनो-के एक प्रकारसे लिखे जानेके कारण 'मेरे' पढा गया हो।

कु० मे एक० सम्बन्धमे 'मैं' के विकृत रूप 'मुज्झ' तथा 'मो' बिना किसी विभक्तिके भी मिलते है, जो वा० मे नही है। दक्खिनीमे 'मुझ'। 'मुज' मिलता है 'मो' नही। 'मो' का यह प्रयोग ब्रजभाषा साहित्यमे ही अब मिलता है। कु० मे ये दोनो प्रयोग केवल पद्यो तक सीमित हैं और हो सकता है कि प्राचीनतर भाषा – परम्पराके अवशेष-मात्र हों।

बहु० मे कु० तथा वा० दोनोमे 'हम' के रूप मिलते हैं। अविकृत रूप 'हम' दोनोमे कर्त्ता० और कर्म० के लिए मिलता है। कर्त्ता० के विकृत रूपके लिए कु० मे 'हमइ' मिलता है, जो सज्ञाके समानान्तर रूपसे तुलनीय है। वा० तथा दक्खिनीमें –'इ' युक्त यह रूप नही मिलता है। कर्म० का विकृत रूप कु० मे नही मिलता है, वा० मे वह है 'हमको', जो दक्खिनीके 'हमन कू'

से तुलनीय है। सम्बन्धका एक० रूप कु० तथा वा० दोनोमें पुं० 'हमारा' स्त्री० 'हमारी' है, जिसमे विशेष्य एकवचन रहता है, और 'हमारा' का बहुवचन रूप कु० मे 'हमारे' है, जिसमे विशेष्य बहु० रहता है। वा० मे इसका उदाहरण नही है। इसी प्रकार वा० मे 'हमारा' का विकृत रूप 'हमारे' है, जिसका उदाहरण कु० मे नही है। दक्खिनीमे भी ये सभी रूप मिलते हैं, और इनके सम्बन्धमे कोई अन्तर उसमे भी नही है। विकासका क्रम होगा 'हमइ'—>'हमे'।

सर्वनाम : मध्यम पुरुष

कु० मे एक० अविकृत कर्त्ताका रूप 'तु। तू। तूं' है, वा० मे केवल 'तूं' है, दक्खिनीमे 'तूं। तू' है। 'तुं' तथा 'तूं' फारसी-अरबी लिपिमे एक ही प्रकारसे लिखे जाते है, इसलिए यदि पुरानी दक्खिनीमे भी 'तुं' और 'तूं' दोनो रूप प्रचलित रहे हो तो आश्चर्य न होगा। विकासका क्रम कदाचित् होगा 'तु'—>'तुं'—>'तूं'।

एक० विकृत कर्त्ता० का रूप कु० मे 'तइ। तइं' है। वा० मे इसका उदाहरण नही है। दक्खिनीमे इसके स्थानपर 'तूने' प्रयुक्त होता है। 'तइं' तुलनीय है ऊपर आये हुए 'हमइं' तथा संज्ञाके समानान्तर रूपसे। असम्भव नही कि 'तइ' रूप कु० मे 'तइं' के बिन्दुके प्रतिलिपि-क्रियामे छूट जानेके कारण मिलता हो। यही 'तइं' बादमे 'तैं' के रूपमे विकसित हुआ है।

एक० सम्बन्धके रूप कु० मे 'तेरा' और 'तुझ' हैं, जो इसी प्रकार दक्खिनीमे भी हैं। वा० मे इनके उदाहरण नही है।

बहु० अविकृत कर्त्ताका रूप कु० मे 'तुमहं' है। वा० मे इसका उदाहरण नही है। दक्खिनीका 'तुम्हं' इसीसे विकसित प्रतीत होता है।

बहु० विकृत कर्त्ताका कोई उदाहरण कु० मे नही है। वा० मे इसके लिए 'तुम' का प्रयोग हुआ है। दक्खिनीमे इसके लिए 'तुमने' मिलता है।

बहु० सम्बन्धका कोई उदाहरण कु० मे नही है। वा० मे इसका विकृत रूप 'तुमारे। तुम्हारे' मिलता है। दक्खिनीमे भी 'तुमारा। तुम्हारा' अविकृत बहु० सम्बन्धका रूप है।

सर्वनाम। विशेषण : निकटवर्त्ती निश्चयवाचक

कु० मे पु० एक० अविकृतका रूप 'इह' तथा स्त्री० एक० अविकृतका रूप 'अइ' है। वा० मे पु०। स्त्री० एक० अविकृतका रूप 'यह। याह। य'

है। दक्खिनीमे 'ई' तथा 'यै' क्रमश 'इह' तथा 'यह' से तुलनीय है, यद्यपि दक्खिनीके इन रूपोका आधार लिग-भेद नही है। ऐसा ज्ञात होता है कि लिग-भेद पहले था, जो धीरे-धीरे इस सर्व० मे घिसकर निकल गया।

कु० मे पु० एक० विकृतका रूप 'इहि' है, वा० मे पु० । स्त्री० का 'इस'। दक्खिनीमे भी वह 'इस' है।

कु० मे पु० बहु० अविकृतका रूप 'ए' है। वा० मे पु० । स्त्री० का 'ए' है, और दक्खिनीमे भी वह 'ए' है।

कु० मे पु० बहु० विकृतका रूप 'एण' है। वा० मे इसका उदाहरण नही है। दक्खिनीमे 'इन' है जो 'एण' से तुलनीय है। विकासका क्रम 'एण'—>'इन' प्रतीत होता है।

सर्वनाम । विशेषण : दूरवर्त्ती निश्चयवाचक

कु० मे अविकृत एक० 'ओह' है। वा० मे इसका उदाहरण नही है। दक्खिनीमे 'ओ । वो । वह' है जो 'ओह' से तुलनीय है। विकास क्रम कदाचित् है 'ओह'—>'ओ । वह ।

विकृत एक० कर्म० के लिए कु० मे 'वइ' प्रयुक्त है, जो न वा० मे है और न दक्खिनीमे। किन्तु यह केवल पद्यमे प्रयुक्त है, इसलिए असम्भव नही कि कु० मे पूर्ववर्ती भाषा-परम्परासे आया हो।

वैसे, कु० मे सामान्य विकृत एक० 'उस' है, जो इसी प्रकार वा० तथा दक्खिनीमे भी मिलता है।

कु० मे उपर्युक्तके अतिरिक्त त-परिवारके भी रूप मिलते है। एक० कर्त्ता (विकृत) उसमे है 'तिणि', कर्म० है 'ताहि', करण० है 'तिस –सु''। बहु० कर्म० विकृतका रूप 'ते' और सम्बन्धका स्त्री० 'तिन्ही' है। वा० मे एक० कर्त्ता० (विकृत) 'तिन' है। जो कु० के 'तिणि' से विकसित है। शेष समस्त कारकोके लिए एक० विकृत रूप 'तिस' है। बहु० विकृत रूप 'तिन्ह । तिन्हौ' है, जो विभक्तियोके साथ विभिन्न कारकोमे प्रयुक्त हुआ है।

कु० तथा वा० मे स-परिवारके भी रूप मिलते है, किन्तु वे सबके सब एक० अविकृतके है। कु० मे ये 'सा । स । सो । सु' हैं। वा० मे ये 'सो । सु' हैं। दक्खिनीमे केवल 'सो' मिलता है।

सर्वनाम : निजवाचक

कु० तथा वा० दोनोमे निजवाचक सर्वनामके रूपमे 'अप्प । आप' आता है। कु० मे एक० कर्त्ता० । कर्म० है 'आप । अप्प', सम्बन्ध (अविकृत) पु०

है, 'अप्पाण', और सम्बन्ध (विकृत) पु० है 'अप्पणइ । अपनइ' । वा० में कर्त्ता० है 'आप', सम्बन्ध० (अविकृत) है 'अपना' और सम्बन्ध (विकृत) है पु० 'अप्पणे । आपणे' [तथा स्त्री० 'अपनी'] । कु० मे बहु० कर्त्ता है 'अप्पा', बहु० सम्बन्ध (अविकृत) है पु० 'अप्पणा', स्त्री० 'आपणी', तथा सम्बन्ध (विकृत) है पु० 'आपणइ' । वा० मे बहु० सम्बन्ध (अविकृत) है पु० 'आपणा । आपना' दक्खिनीमे कर्त्ता०-कर्म० 'अपस । अपन । अपना' है । सम्बन्ध० 'अपस । अपस-का-की-के' है । विकास-क्रम कदाचित् है 'अप्प'—> 'आप'—>'अपस'; 'अप्पाण' । 'अपन' । 'अपना'—>'आपना'—>'अपस-का-की-के', 'अप्पणइ' । 'अपनइ'—>'अप्पणे' । 'आपणे' ।

सर्वनाम । विशेषण : सम्बन्धवाचक

कु० मे विशेषणके रूपमे एक० 'जो । जु । जा' तथा बहु० 'जे' प्रयुक्त हैं । वा० मे एक० 'जु' है, बहु० का उदाहरण नही है । दक्खिनीमे एक० जो । जु । ज' तथा बहु० 'जे' (?) है । कु० मे सर्व० के रूपमे एक० अविकृत रूप है 'जो' और बहु० अविकृत रूप है 'जे' । वा० मे भी एक० अविकृत रूप 'जो' है, बहु० का उसमे कोई उदाहरण नही है । दक्खिनीमे सर्व० एक० अविकृतके रूपमे 'जो' तथा बहु० अविकृतके रूपमे 'जे' (?) हैं । कु० मे सर्व० विकृत एक० कर्त्ता-कर्म० 'जिण' । 'जिणि , सम्बन्ध० पु० 'जिसका' । स्त्री० 'जिसकी' है और विकृत बहु० कर्त्ता० 'जिणइ', कर्म० 'जिणि' है । अन्य कारकोके उदाहरण नही है । वा० मे बहु० के उदाहरण नही हैं । दक्खिनीमे बहु० कर्त्ता० । कर्म० अविकृत 'जिन' है, शेष कारकोमे 'जिन' मे विभक्तियाँ जोडकर रूप बनाये गये हैं । कहनेकी आवश्यकता नही है कि सम्बन्धवाचक वि० । सर्व० के विषयमे कु०, वा० तथा दक्खिनीमे साम्य बहुत है ।

सर्व० । वि० : अनिश्चयवाचक

कु० मे इसके एक० अविकृत रूप 'कउ । को । के' हैं, एक० विकृत कर्त्ता रूप 'किन' तथा अन्य कारकोमे एक० 'किसऊ- । केहु-' तथा उस कारककी विभक्ति है । वा० मे इसका एक० अविकृत रूप 'कोई' तथा विकृत रूप विभिन्न कारकोमे 'किसी-' तथा उस कारककी विभक्ति है । दक्खिनीमे इसके अविकृत रूप 'को । कोई । कोय' है, और विकृत रूप विभिन्न कारकोमे 'किसी-' तथा उस कारककी विभक्ति है । विकास-क्रम कदाचित् 'कउ —> 'को'—> 'कोय । कोई' तथा 'किन'—> 'किसी ने' बहु० के रूप कु० तथा वा० मे नही है ।

सर्व० । वि० : प्रश्नवाचक

कु० तथा वा० मे जीववाची प्रश्नवाचक 'कउण' तथा अजीववाची 'क्या' परिवारके है। कु० मे 'कउण' का एक अविकृत रूप 'कउण । कुण' है, एक० कर्त्ता० विकृत रूप 'किणि' है, अन्य कारकोके विकृत रूप नही मिलते है। वा० मे एक० अविकृत रूप 'कौन । कौन' और विकृत रूप 'कौन– । किस–' तथा उस कारककी विभक्ति का है। कु० मे 'क्या' का अविकृत रूप 'क्या । कह्या । काइ' हैं। कु० मे विकृत रूप इस सर्व० का नही है। वा० मे विभिन्न कारकोमे इसके रूप किस– तथा काहे– के साथ उस कारककी उस विभक्ति के है। दक्खिनीमे ये 'कौन' और 'क्या । का' है। 'कौन' का विकृत रूप 'किस–' है जिसमे कारकोके अनुसार विभक्तियाँ लगती है, कर्त्ता अविकृतका एक० रूप 'किन' भी है, जो आदरार्थक प्रतीत होता है। विकास-क्रम कदाचित् है 'कउण'—> 'कुण' । 'कौन' । 'कौन' ।

विशेषण : गुणवाचक

कु० तथा वा० मे विशेषण एक० मे अपने सामान्य रूपमे प्रयुक्त हैं। आकारान्त विशेषण स्त्री० मे इकारान्त हो जाते है। बहु० मे आकारान्त पु० वि० एकारान्त हो जाते है और ईकारान्त स्त्री० वि० 'ईकार' को 'इकार' मे बदलकर 'या' जोड लेते है। दक्खिनीमे भी ऐसा ही है। किन्तु कु० मे आकारान्त पु० वि० अकारको –आ । आ मे बदलकर तथा ईकारान्त स्त्री० वि० ईकार को इकार मे बदलकर और फिर –या जोडकर बहु० रूप बनाते है। वा० मे यह नही है। दक्खिनीमे यह है। कु० मे पद्योमे कही-कही पर बहु० रूपके साथ –ह स्वार्थिक भी जुडा मिलता है, जो न वा० मे मिलता है और न दक्खिनीमे। बहु० के लिए कभी-कभी एक० का प्रयोग कु०, वा० तथा दक्खिनीमे समान रूपसे मिल जाता है। ऐसा ज्ञात होता है कि –आ अन्त्य पु० बहु० तथा –यां अन्त्य स्त्री० बहु० के रूप खडी बोली और पजाबीमे साथ-साथ अवतरित हुए थे, जो पीछे खडी बोलीमे-से निकल गये, यद्यपि पजाबीमे बने रह गये।

विशेषण : परिमाणवाचक

कु० मे दो प्रकारके परिमाणवाचक वि० है : कुछ तो सर्वनामात्मक हैं और कुछ-एक अन्य प्रकारके हैं। सर्वनामात्मक वि० 'इता', 'इती' । 'इतनी', 'उती', 'कित' और 'एक' हैं, अन्य प्रकारका एक ही है : 'कुछ'। वा० मे

प्रथम प्रकारके वि० नही हैं। दूसरे प्रकारके वि० हैं : 'कुछ', 'बहुत', 'बडा'। दक्खिनीमे दोनो प्रकारोके पाये जाते हैं।

विशेषण : संख्यावाचक

संख्याएँ अनेक मिलती हैं, जिनमे-से दो विशेष रूपसे उल्लेखनीय है : एक तो 'एक' की, और दूसरी 'दो' की। कु० मे एक 'एक' के अतिरिक्त 'हेक' तथा पु० 'एक-स' और स्त्री० 'एक-सि' रूपोमे मिलता है। वा० मे वह केवल 'एक' के रूपमे मिलता है। कु० मे 'दो' इसी प्रकार 'दो। दुइ। दोइ। बे' रूपोमे मिलता है। वा० मे 'दो। दोई' मात्रके रूपोमे। दक्खिनीमे भी 'एक' के लिए 'एक' के अतिरिक्त 'एक-स' मिलता है, और 'दो' के लिए 'दो' के अतिरिक्त 'दोइ' मिलता है। 'बे' पूर्ववर्ती अपभ्रशसे उत्तराधिकारमे प्राप्त हुआ होगा। शेष सख्याओमे कु०, वा० और दक्खिनी प्राय समान हैं।

क्रिया

क्रियार्थक सज्ञाएँ कु० तथा वा० दोनोमे धातु*मे –णा। ना लगाकर बनी हैं। वा० मे इसके अतिरिक्त वे –ला लगाकर भी बनी है। दक्खिनीमे वे –ना लगाकर ही बनी है किन्तु पुरानी दक्खिनीमे वे यदि –णा लगाकर बनती रही हो तो आश्चर्य न होगा, क्योकि फारसी-अरबी लिपियोमे, जिनमें पुरानी दक्खिनीकी समस्त रचनाएँ उपलब्ध है, –णा तथा –ना एक ही प्रकारसे लिखे जाते हैं।

क्रियाओके प्रेरणार्थक रूप कु० तथा वा० दोनोमे धातु –आव्। लाव् लगाकर बने हैं। –आव्से जो प्रेरणार्थक रूप बनते है, उनका सामान्यभूत रूप –व निकालकर बनता है, इसलिए उनमे –आ मात्र लगे होनेका भ्रम हो सकता है। दक्खिनीमे भी दोनो प्रकारके रूप मिलते हैं।

क्रियाओके विधिके रूप कु० मे प्रच्छन्न 'तू' कर्त्ताके साथ धातुमे –इ। अइ। ए लगाकर अथवा बिना कुछ लगाये हुए, प्रच्छन्न 'आप' के साथ –ई (<इय)। ईइं लगाकर और प्रच्छन्न 'तुम' के साथ –उ। अउ। [हु]। अहु। ओ लगा-कर बने है। वा० मे वे प्रच्छन्न 'तू' के साथ बिना कुछ लगाये हुए, प्रच्छन्न

* हिन्दुईकी धातुएँ दो प्रकारकी है : स्वरान्त तथा व्यजनान्त। स्वरान्त यथा खा, पी, हो तथा व्यजनान्त यथा कर्, चल्, रह्। उदाहरणोंमें कभी-कभी एक ही प्रकारकी धातुएँ मिली है। उनमें प्रयुक्त प्रत्ययको देते हुए, विवेचनमें वह प्रत्यय भी दिया गया है जो दूसरे प्रकारकी धातुओंमें लगेगा।

'आप' के साथ –इए। यए लगाकर तथा प्रच्छन्न 'तुम' के साथ –ओ। औ। औं (?)। यौ लगाकर बने हैं। वा० मे भविष्यत्‌की विधिका रूप भी मिलता है। उसमे प्रच्छन्न 'तुम' के साथ धातुमे –इयौ लगा हुआ है। अन्य पुरुष विधिका रूप कु० मे नही है। वा० मे वह एक० मे धातुमे –ऐ लगाकर बनाया गया है। इसी प्रकार उसमे आदरार्थक बहु० के साथ धातुमे –अंह लगाकर बनाया गया आशीर्वादात्मक रूप भी मिलता है। दक्खिनीमे प्रच्छन्न 'तू एक० के साथ धातुमे बिना कुछ लगाये हुए बने विधिका रूप तो मिलता है, अन्य रूपोके सम्बन्धमें पर्याप्त जानकारी नही है।

इन रूपोमे विकास-क्रम कदाचित् है –इ–> प्रत्ययहीन रूप; –अइ–> –ए; –उ–> –ओ, –अउ–> –औं; –उ–> –हु; –अउ–> –अहु; –ई (<इय)–> – इए। यए, –ईइं–> वर्त्तमान –एं।

कर्मवाच्यके रूप इन रचनाओमे बहुत विरल हैं। कु० मे वे धातुमे – इयइ। ईइ अथवा –इबा लगाकर बनाये गये है। वा० मे केवल एक उदाहरण है जो स्त्री० का सामान्य भूतकालका है और धातुमे –ई लगाकर बनाया हुआ है। दक्खिनीमें इनकी स्थितिकी जानकारी यथेष्ट नही है।

क्रिया : सामान्य वर्त्तमान काल

कु० मे सामान्य वर्त्त० का रूप धातुमें –इ। अइ। ए जोडकर बनाया गया है, और अनेक स्थलोपर यह रूप सामान्य भूतके अर्थमे भी प्रयुक्त हुआ है। वा० मे धातुमे –ऐ। ए। य जोडकर यह रूप बनाया गया है, और उसमे भी यह रूप सामान्यभूतके अर्थमे भी प्रयुक्त हुआ है। दक्खिनीकी स्थिति इस विषयमे यथेष्ट रूपसे ज्ञात नही है, किन्तु वर्त्तमान साहित्यिक खडी बोलीमे यह रूप समाप्त हो गया है, और इसका स्थान वर्त्तमान कृदन्त 'है' ने ले लिया है। यह रूा प्राचीनतर भाषासे उत्तराधिकारमे मिला हुआ था, और व्रजमे अब भी बना हुआ है। विकास-क्रम कदाचित् है –इ। अइ–> –ऐ। –ए। –य।

स्थिति-वाची एक० ह् + अइ = हइ का प्रयोग कु० में तीन प्रकारसे हुआ है : (१) जिसमे किसी वस्तुके होने मात्रका भाव है, (२) जिसमे किसी कार्यके होते होनेका भाव है, तथा (३) जिसमे किसी कार्यके आगे होनेका भाव है। प्रथम प्रकारके प्रयोगमे केवल 'हइ' आता है, द्वितीय प्रकारके प्रयोगमे क्रियाका वर्त्तमान कृदन्तका रूप और 'हइ' आता है, तथा तीसरे प्रकारके प्रयोगमे

क्रियाका क्रियार्थक संज्ञा रूप और 'हइ' आता है। वा० मे यह स्थितिवाची क्रिया 'है' के रूपमे आती है। इसमे उपर्युक्त प्रथम दो प्रकारके ही प्रयोग मिलते है, तीसरे प्रकारके नही। दक्खिनीमें तीनो प्रकारके प्रयोग मिलते हैं और क्रियाका रूप 'है' है, किन्तु पुरानी दक्खिनीमे वह यदि 'हइ' रहा हो तो आश्चर्य न होगा क्योकि फारसी-अरबी लिपिमें दोनो एक ही प्रकारसे लिखे जाते है। विकास क्रम होगा 'हइ'—> 'है'।

कु० मे एक स्थानपर धातुके प्रत्ययहीन रूपसे ही सामान्य वर्त्तमानका काम लिया गया है। वा० में इसका उदाहरण नही मिलता है। दक्खिनीमें इसकी स्थिति ज्ञात नही है। यह प्रवृत्ति पुरानी अवधी तकमे मिलती है और हो सकता है कि प्राचीनतर भाषा रूपसे पुरानी खडी बोलीको भी प्राप्त हुई हो।

कु० मे 'हइ' के स्थानपर एक बार 'अछ्+अए'='अछए' का भी प्रयोग हुआ है और पद्यमे एक बार 'अत्थि', 'नत्थि' का। वा० मे इनके उदाहरण नही हैं। दक्खिनीमे 'अछ्' क्रियाका प्रयोग प्रचुर परिमाणमे मिलता है।

कभी-कभी बहु० के लिए एक० [-इ]। अइ तथा ह्+अइ=हइ रूपोसे कु० तथा वा० दोनोमे काम लिया गया है। इसके अतिरिक्त धातुके प्रत्ययहीन रूपका प्रयोग कु० मे बहु० के लिए भी उसी प्रकार हुआ है जिस प्रकार एक० के लिए। वा० और दक्खिनीमे इनमे-से प्रथम प्रवृत्ति तो मिलती है, दूसरी नही।

उत्तमपुरुषके रूप कु० मे तो हैं, वा० मे नही हैं। कु० मे एक० के रूप धातुके साथ – उं। अउ लगाकर बनाये गये हैं। वे स्थितिवाची 'ह्' धातुकी सहायतासे वर्त्तमान कृदन्त रूपके साथ 'हूं' लगाकर भी बनाये गये है। बहु० के रूप धातुमे [–इ]। अइं जोडकर बनाये गये है। दक्खिनीमे –उ। अउं। तथा 'हूँ' युक्त रूप एक० मे तथा एं युक्त रूप बहु० मे मिलते हैं। विकास-क्रम कदाचित् है –उ (स्वरान्त धातुमे)। अउ—>उं (स्वरान्त तथा व्यंजनान्त दोनोमे) ऊं—>हू; इं। अइं—>एं। मध्यम पु० के रूप न कु० मे हैं और न वा० मे।

क्रिया : अपूर्ण वर्त्तमान काल

कु० मे ही अपूर्ण वर्त्त० के रूप पाये जाते है, वा० मे नही। कु० मे इसका एक० पु० प्रत्यय –अदा। हंदा। एक० स्त्री० –अदी। [हदी], तथा बहु० पु० –अंदे। [हदे] है। संस्कृतके—अंति प्रत्ययका प्रयोग भी उसमे अपूर्ण

वर्त्त० के लिए हुआ है, और उस प्रयोगमे लिंग-वचनका भेद नही है। ये प्रत्यय दक्खिनीमे नही मिलते हैं। कु० मे भी ये पद्यो तक ही सीमित है। किन्तु गद्यमे अपूर्ण वर्त्त० का कोई अन्य रूप भी नही है, इसलिए इन्हे कु० की सामान्य भाषाका अग माना जा सकता है। अदा। [हुदा] प्राचीनतर भाषा रूपसे प्राप्त प्रतीत होते हैं और अब भी पजाबी, गढवाली तथा नेपाली-मे थोडे-बहुत अन्तरके साथ मिलते हैं।

क्रिया : पूर्ण वर्त्तमान काल

कु० तथा वा० दोनोमे पूर्ण वर्त्तमानके रूप भूत कृदन्तके साथ 'होना' क्रियाके वर्त्तमानके रूपको लगाकर बनाये गये है। कु० में क्रियाका यह रूप ह् + अह् = 'हइ' है और वा० मे ह् + ऐ = 'है' है। दक्खिनीमे भी यह 'है' है। कु० मे बहु० मे भी 'हइ' ही है, जिस प्रकार वह उसमे सामान्य वर्त्त० बहु० में है। वा० मे बहु० का उदाहरण नही है। दक्खिनीमे बहु० 'है' है। विकास-क्रम होगा हइ—>है।

क्रिया : सम्भाव्य वर्त्तमान काल

कु० मे सज्ञा तथा अन्य पु० के सम्भाव्य वर्त्त० के रूप धातुमे –इ। अइ लगाकर बनाये गये है, केवल एक स्थानपर –ए लगाया गया है। पुन कु० मे उत्तम पु० एक० के रूप धातुमे –अउ तथा बहु० के रूप धातुमे –अइ लगाकर बने है। वा० मे अन्य पु० के रूप धातुमे –इ। ई। ऐ। य लगाकर बने है, केवल एक स्थानपर –औ लगाकर इसका रूप बना है। इसके अतिरिक्त वा० मे प्रच्छन्न 'आप' के साथ धातुमे –इय। इए। ए लगाकर बने हैं। दक्खिनीमे इनकी स्थिति यथेष्ट रूपसे ज्ञात नही है। विकास-क्रम कदाचित् है : –इ। अइ—>ऐ—>ए—>य।

उत्तम पु० के रूप कु० मे ही मिलते हैं और वे एक० मे धातु मे –उं। अउं लगाकर तथा बहु० मे –इ। अइ लगाकर बनाये गये है। सामान्य वर्त्त० मे भी हम ऊपर देख चुके हैं कि इ–। अइ लगाकर ही बहु० के रूप बने है। दक्खिनीमे एक० के रूप –ऊं लगाकर तथा बहु० के –एं लगाकर बने हैं। विकास-क्रम कदाचित् है –उ (स्वरान्त धातुओके लिए)। –अउं—>–उं (स्वरान्त तथा व्यंजनान्त दोनोके लिए)—>–ऊ, –इ। अइ—>-ए।

मध्यम पु० एक० का रूप कु० मे नही है। बहु० का रूप कु० में प्रच्छन्न 'तुम' के साथ धातुमे –उ। [अउ] लगाकर बना है। वा० मे एक० का रूप

प्रच्छन्न 'आप'के साथ धातुमे –इयै । इए लगाकर बना है, बहु० का उसमे नही है । दक्खिनीमे प्रच्छन्न 'तुम'के साथ –ओ युक्त रूप है, और प्रच्छन्न 'आप'के साथ –इए युक्त रूप। विकास-क्रम कदाचित् है –अउ—>ओ; –इयै—>–इए ।

क्रिया : सामान्य भविष्यत् काल

कु० मे सज्ञा तथा अन्य पु० एक० पु० रूप धातुमे –इगा । अइगा अथवा – हिगा । अहिगा लगाकर बने है, और बहु० पु० [–इगे] । अइगे लगाकर । एक स्थानपर उसमे एक० मे –इहइ प्रत्यय भी मिलता है, किन्तु वह पद्यमे है । वा० मे एक पु० मे –गा । इगा । अइगा । इएगा, एक० स्त्री० मे –इगी । ईगी । इएगी लगे हैं । बहु० पु० मे –हिंगे । [अहिगे] । ऐंगे है, और बहु० स्त्री० का रूप एक० स्त्री० से अभिन्न है। दक्खिनीमे ये समस्त रूप मिलते है : अन्य पु० एक० पु० का प्रत्यय है –एगा, तथा बहु० पु० का –एगे । एइगे । आगे । कु० का –इहइ प्राचीनतर भाषा-रूपका अवशेष है और वह पद्य तक ही सीमित है । ब्रज० मे वह अभीतक सुरक्षित है । विकास-क्रम कदाचित् है : –इगा । अइगा—>–हिगा । अहिगा—>–इएगा । एगा, –इंगे । अइगे—>–ऐंगे —>–एगे ।

कु० मे उत्तम पु० एक० पु० का प्रत्यय [–उगा], स्त्री० का उगी है, बहु० का उदाहरण उसमे नही है । वा० मे एक० पु० का है –ऊंगा, बहु० पु० का है –हिंगे । अहिंगे । ऐंगे । दक्खिनीमे एक० पु० का प्रत्यय है –उंगा और बहु० पु० का है –एंगे । अइगे । विकास-क्रम कदाचित् है : –उंगा—>ऊगा, –इगे । अइंगे—>–हिंगे । अहिंगे तथा –ऐंगे—>-एंगे ।

कु० मे द्वितीय पु० बहु० पु० का प्रत्यय है –हुगे एक० का उदाहरण नही है । वा० मे द्वितीय पु० का कोई उदाहरण नही है। दक्खिनीमे एक० पु० का प्रत्यय है –एगा । इंगा । आगा और बहु० पु० का है –इगे । एगे । आगे । दक्खिनीके रूप कुछ अव्यवस्थित-से प्रतीत होते है । विकास-क्रम कदाचित् है : –हुगे—>वर्तमान –ओगे ।

क्रिया : सामान्य भूत काल

कु० मे एक० पु० के रूप धातुमे –आ । या । इया जोडकर बनाये गये हैं कही-कहीपर –अउ । ओ लगाकर भी उनकी रचना हुई है । वा० मे केवल –आ । या लगाकर यह रूप बने हैं । दक्खिनीमे प्रत्यय है –आ । या । इया ।

–अउ । ओ पूर्ववर्ती पश्चिमी अपभ्रंशके भूत कृदन्त प्रत्यय –अउ । इउ का अवशेष है, जो अब भी राजस्थानी, पश्चिमी पहाडी और व्रज० मे –ओ के रूपमे विद्यमान है।

कु० तथा वा० मे एक० स्त्री० का प्रत्यय –ई है। दक्खिनीमे भी यही है।

कु० मे कुछ स्थलोपर एक० पु० रूप –आना । ईन । ईना । ईन्हा प्रत्ययसे भी बने हैं, जो एक० स्त्री० में –ईनी हो गया है। वा० मे यह प्रत्यय नही मिलता है, और न कदाचित् दक्खिनीमे। यह पूर्ववर्ती पश्चिमी अपभ्रशके –इण्ण । ईण का अवशेष है।

कु० तथा वा० मे बहु० पु० रूप धातुमे –ए । अए लगाकर बने हैं। दक्खिनीमे भी यह प्रत्यय मिलता है। कु० मे कही-कहीपर –या । इया । ईया लगाकर भी बहु० रूप बनाये गये है। –ईन । ईना वाले रूपका बहु० –ईनइ लगाकर बना है। वा० मे इनका अभाव है। दक्खिनीमे इनकी स्थिति ज्ञात नही है।

कु० मे बहु० स्त्री० रूप धातुमे –या । इया । ईया लगाकर बनाये गये है। वा० मे ये नही मिलते हैं। दक्खिनीमे इनकी स्थिति ज्ञात नही है।

कु० मे कही-कहीपर –आ । या । इया युक्त रूप एक० मे भी प्रयुक्त हुए हैं। वा० मे ऐसा नही है। दक्खिनीमे इस प्रवृत्तिकी स्थिति ज्ञात नही है। कु० मे यह अनुनासिकता अकारण आयी हुई प्रतीत होती है।

कु० मे कभी-कभी एक० रूपोसे ही बहु० का भी काम निकाला गया है। बहु० बनानेके लिए एक० प्रत्ययोमे केवल अनुनासिकता और लायी गयी है। बिन्दु प्रतिलिपि-क्रियामे प्रायः छूट जाया करता है, इसलिए असम्भव नही है कि अनुनासिकताका अभाव कही-कहीपर इस कारण भी हो गया हो, किन्तु यह भी असम्भव नही है कि बहु० के लिए एक० क्रियाका प्रयोग सदोष न माना जाता रहा हो और किया जाता रहा हो।

कृदन्त युक्त सामान्य भूतका एक ही उदाहरण है: वह वा० मे है और बहु० पु० का है, जिसमे धातुमे –अते ही लगाकर उसे रहने दिया गया है। दक्खिनीमे इसकी स्थिति यथेष्ट रूपसे ज्ञात नही है।

क्रिया : अपूर्ण भूत काल

इसके कोई उदाहरण न कु० मे हैं और न वा० मे।

क्रिया : पूर्ण भूत काल

कु० तथा वा० दोनोमे पूर्ण भूतके रूप भूत कृदन्तके साथ पु० मे 'था', स्त्री० मे 'थी' तथा बहु० पु० मे 'थे' जोडकर बनाये गये है। दक्खिनीमे भी ऐसा ही हुआ है।

वर्त्तमान कृदन्त

कु०मे वर्त्तमान कृदन्तके रूप धातुमे पु०मे –ता। ता, स्त्री०मे –ती तथा विकृतियुक्त रूपमे-तइ। तइं। ते लगाकर बने हैं। कही-कहीपर केवल–त लगाकर भी वर्त्त० कृदन्तका रूप बनाया गया है इनके अतिरिक्त, कु० मे एक पु० –अदा, [स्त्री० –अदी], विकृतियुक्त –अदइ। अदे, बहु० इंदीइ। अंदिए रूप भी पाये जाते हैं, जो पृच्चो तक ही सीमित है। वा० मे एक० पु०-ता तथा स्त्री०-ती वाले रूप ही मिलते हैं। दक्खिनीमे पु०–ता, स्त्री०-ती और विकृति युक्त –ते वाले रूप ही मिलते हैं। पश्चिमी अपभ्रशमे वर्त्तमान कृदन्त –अंत लगाकर बनता था, उसीसे –अंदा वाले रूप विकसित हुए हैं, और अब भी पजाबी, गढवाली और नेपालीमे थोड़े-बहुत अन्तरके साथ सुरक्षित हैं। –त वाले रूपका विकास भी –अन्तवाले अपभ्रंशके रूपसे हुआ प्रतीत होता है, जिसका अनुस्वार सम्भवत घिसकर धीरे-धीरे निकल गया है। पु० तथा स्त्री० के रूप उसी –त युक्त रूपमे –आ तथा –इ लगाकर विकसित हुए हैं। विकास क्रम अतः होगा— त—>पु० –ता तथा स्त्री० –ती विकृति युक्त –ते।

भूत कृदन्त

कु० मे भूत कृदन्त एक० के रूप धातुमे –इया लगाकर बनाये गये हैं। किन्तु पु० तथा स्त्री० रूप क्रमश. –आ तथा –ई लगाकर भी बने हैं। इसी प्रकार बहु० का सामान्य रूप –इया। या। आ लगाकर बना है, और पु० रूप –ए लगाकर। बहु० स्त्री० का कोई उदाहरण नही है। वा०में पु०मे –या, स्त्री० मे –ई और बहु० पु० मे –ए युक्त रूप ही मिलते हैं। दक्खिनीकी स्थिति यथेष्ट रूपसे ज्ञात नही है। –इया वाले रूप पश्चिमी अपभ्रंशके –इय वाले रूपोके विकास हैं। विकास-क्रम कदाचित् है –इया—>पु० –या। –आ तथा स्त्री० –ई, बहु० पु० –ए।

कु० मे कही-कहीपर एक० रूपसे ही बहु० का भी काम लिया गया है। और कही-कहीपर एक० रूपमे भी अकारण अनुंनासिकताका आगम हुआ है। वा० मे प्रथम प्रवृत्ति तो मिलती है, दूसरी नही।

पूर्वकालिक कृदन्त

कु० मे ये धातुमे –इ लगाकर अथवा बिना कुछ लगाये बनाये गये हैं। वा०मे ये –ई। इ। ऐ। ए। य लगाकर अथवा बिना कुछ लगाये बनाये गये हैं। वा०मे कभी-कभी इसके अतिरिक्त की। कै। कर भी लगाया गया है। दक्खिनीमे इनकी स्थिति यथेष्ट रूपसे ज्ञात नही है। विकास-क्रम कदाचित् है –इ—>ऐ—>ए—>य—>प्रत्ययहीनता।

अव्यय

एक अवधारण वाचक अव्यय कु० मे 'इ। इं। ई' है, जो वा०में 'ई' मात्र-के रूपमे मिलता है। दूसरा 'ही' है जो वा०मे 'ही'के रूपमे मिलता है, तीसरा हु। हु। हू है जो वा०मे औ। औ के रूपमे पाया जाता है। कु०मे पु० 'चा', स्त्री० 'ची' है, वा० मे 'च' मात्र है। वा० मे 'भी' तथा 'तो' भी हैं, जो कु० में नही हैं। दक्खिनी में 'च', 'भी', 'तऊ' है, शेषकी स्थिति यथेष्ट रूपसे ज्ञात नही है।

स्थितिवाचक अव्यय कु० मे 'सामटा', 'तर। तल', 'पास', 'साथ', 'आगइ', 'अग्गम', 'पाछी। पछइ। पाछइ' है और वा०मे 'उरि', 'नीचा', 'औधा', 'पहलै', 'आगै', 'अवलि', 'पीछै', 'उपराति' हैं। दक्खिनीमे इनमे-से 'तल', 'पास', 'पछे'। पिछे, तो हैं, शेषके विषयमे यथेष्ट रूपसे ज्ञात नहीं है। विकास-क्रम कदाचित् है आगइ—>आगै, पछइ। पाछइ—>पीछै।

स्थानवाचक अव्यय दोनोमे 'जहाँ', 'कहाँ', 'तहाँ' हैं, जो दक्खिनीमे भी हैं। वा०मे 'अनत' (अन्यत्र) और मिलता है।

कालवाचक अव्यय दोनोमे 'अब', 'तब', 'जब' हैं। कु०मे इस वर्गके अन्य अव्यय 'कद', 'अज्ज', 'कल्हि', 'तन', 'एताल', 'ज्यु', 'त्यु', 'ताइ', और 'तो' हैं, वा० मे 'यो', 'हमेसा' और 'फेरि' हैं। दक्खिनीमे भी 'अब', 'जब', 'तब', 'तो', 'आज', 'अताल', 'अद', 'कद', 'जद', 'तद' मिलते हैं।

रीतिवाचक अव्यय कु०में 'जिम। जिउं। ज्यु', 'किउं, कुं करि', 'त्यु' तथा 'यो' है। वा०मे वे हैं 'ज्यौं। जौ', 'क्यौ', 'यौं', 'सै'। दक्खिनीमे हैं: 'ज्यू। जू' 'यू', 'त्यू', 'क्यूंकर'। विकासक्रम कदाचित् है जिम। जिउं ज्यु—>ज्यौ–जौ, किउं—>कु—>क्यौं।

सयोजक अव्यय कु०मे हैं: 'जउ', 'तउ', 'तरह', 'जं', 'सु', 'जइ', 'नत। नातर' 'वल', 'परि' 'कई। की। के', 'जाणि। जाणे। जाणु', 'मानु', वा०मे

हैं 'जु । ज', 'तो', 'या', 'परि। पै । पर', 'अर', 'सो । सु', 'कि' । दक्खिनी, मे हैं 'तऊ' 'के', 'पर । पन', 'और', शेषके बारेमे यथेष्ट रूपसे ज्ञात नही है। विकास-क्रम कदाचित् है जउ—>जु—>ज, तउ—>तो, सु—>सो, कई—>के, की—>कि ।

स्वीकार तथा निषेध वाचक 'हा', तथा 'न । ना । नही, कु० तथा वा० दोनोमे हैं । वा०मे 'मत' भी है जो कु०मे नही है । दक्खिनीमे मिलते है 'हो', 'न । नही' ।

विस्मयादि बोधक अव्यय कु०मे है 'इओही' और 'ओहि ओहि', वा० मे कोई नही है। दक्खिनीमे 'इओही' 'ऐ यो' के रूपमे पाया जाता है और 'ओह' कदाचित् 'वुइ'के रूपमे ।

कुतब शतक

पाठ और अर्थ

[१]

*'ढढ्ढिनि दानसवंद की'[1] अढ्ढी 'देवर' नाम।
'साहिब सुं सूरत्तियां'[3] बर बोलिया 'वडाम'[4]॥[5]

पाठान्तर—१. अ ढढिनि दाणस वद री, ध. ढढणि दानसवंद की, का. ढढणी दानसमंद री। २ ध. देवल। ३ ध. साहिब सा सुं रत्तीया, का साहिब से

---

* का० में इसके पूर्व और.आता है [का० में प्रथम पत्र नही है, उद्धृत अश उसके बादका है]:

ला ४। कामसेना ५। कामवती ६। चम्पावती ७। रम्भावती ८। ए आठ अपछरा बडी जाण छै। एकदा प्रस्तावै। इन्द्र छभा माहि मृत्यु लोक की बात चली। ताहरां साहिबां री सूरति देवता वषाणण लागा। ताहरां अपछरा बोली। मानवीयां माहे देवता की घणो सुषछै। दीठा वणि आवै। ताहरा देवता बोलीय किसही देवागना मै एक कबाब रूप है। किस ही में दोइ कबाब रूप है। किस ही मै तीन कबाब रूप है। किस ही मै दस कबाब रूप है। साहिबा मै सोलह कबाब रूप है। सहर दिली मै सेज दावल दानसमद की बेटी है। असा रूप नीन लोक मै किस ही का नांही। तब जयती अपछरा उहा थी स्वर्गलोक थी, मनुष्य लोक मै आई। तब उजेणी मै आई। उहा ष्याल देखती थी सहर दिली मै आई। तब देष्या जु मुगला कै अदर कु जाव ण पाईयें। तब अपछरा नै ढाढिणी का रूप कीया। ढोलक गल वीच वाह दावल कै दरबार गई। उहा जाई सुर कीया। ढोलक वाई। तब साहिबां कै ढोलक का सबद सुणि ढाढणी कु इदर लोक बोलाइ लई। हजूर तेडो। हुकम कीया जु गावौ। तब ढाढणी गावणें वावणे लागी। साहिबा बहुत रीझी। ऐसे वीचि साहिबा कै षांणा तयार हूया। तब साहिबां कह्यौ। इहाई ल्यावो। तब तबा का षांणै क्या आया। तब साहिबा ढाढणी सुं बहुत पुसीयाल थी कह्या ढाढणी षांणा षाह। तब षांणा ढाढणी कु दीया। तब षांणा ढाढणी षाणा षाइ करी बहुत राजी हूई। देवता आषर पुसी हूया वर देवे। ढाढणी बोली साहिबा मांगि तूठी। तब साहिबा हसी। अरीसाहिबा क्या हसती है। मांगि मागि तूठी। तुझ कु पसाव कीया। तब साहिबा बोली। क्या जी तू म पसाव कीया। कह्यौ जी हमारै बडै बूढै को ईसाफ कहोगे। उंर का पसाव देयोगे। कह्यो जी देवर कै दिल मै दिल तौ तुझ कु साहिजादा वरूगी। कहां साहिजादा कहा हम। हम तौ दोइ लाष टकां के चाकर। दरबार जावण पावां तौ भी बहुत। मामुस कै रहौ। ढाढणी बोली अरी साहिबा जो देवर कौ दिल मै दिल तौ तुझ कु साहिजादा कुतबदीन वरा मामुस कै रहौ।

(शेषांश आगेके पृष्ठपर देखिए)

संरत्तीय, अ. साहिब सो सूरत्तिया। ४. ध. बोलीये बडाम, का. बोलिया विडाम। ५. अ. मे इस अंशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, जो '१' है।

अर्थ—[दावर–न्यायकर्त्ता] दानिशमंद की [एक] गुण-संपन्ना ढाढिनी थी, [जिसका] नाम देवर [देवल] था। [दानिशमंद की कन्या] साहिबा से अत्यधिक प्रसन्न होनेके कारण [उसने] एक बड़ा कर [वचन] बोल (दे) दिया।

टिप्पणी—ढढिनि : ढाढी जातिकी स्त्री जो गाने-बजानेका काम करती है। यह नाम 'ढड्ढ' [दे०]=भेरी से पडा ज्ञात होता है। राजस्थानमे फाग के समय बजाये जानेवाले चंगको भी कही-कही 'ढड्ढा' कहते है। दानसवंद < दानिशमन्द [फा०]=बुद्धिमान्। अड्ढ < आढ्य=सम्पन्न, यहाँपर आशय कदाचित् है 'गुण-सम्पन्न'से। सूरत्ति < सु + रक्त=अत्यधिक प्रसन्न। वर= देवताका प्रसाद, वचन। वड्ड [दे]=बड़ा, महान्।

[२]

दिल्ली 'सहर'[1] 'सुरतांण पेरोज साहि थाना'[2]।
साहिजादा 'कुतबदी'[3] 'जुआंणा'[4]॥
बरस नव तीनि तेगह 'पवाणा'[5]।
बीबीयां लाजलो 'भइ'[6] बंधाना॥[7]

पाठान्तर—१. ध. नयर। २ का सुरताण पेरो साह थाणा। ३. का. कुतदीन। ४ ध. का. जुवाना। ५. ध. का. प्रमाणा। ६ का. भे, अ. जइ (<भइ)। ७ अ मे इस अंशकी क्रम सख्या भी दी हुई है, जो है '२'।

ध० में इसी प्रकार प्रथम दोहेके बाद आता है :

एक दिवसि साहिबां ढढणी कु षाणा षुलावती थी। ढढणी प्रसाद कीया। साहिबां तुम्ह कु क्या उपगार करूं। हम कुं क्या उपगार करहुगे। हमारे बडा बूढा के उवसाफ करउ। ते हउ। अवर क्या उपगार करहुगे। देउल के दिल मइ दिल तउ तुम्ह कु साहिजादा कुतबदीन बरूगी। नन दुरोग क्या बोलहु। हम लाख टका के चाकर। दरबार जाणइ पावइ तउ भी बहुत। कहा साहिजादा कहा हम।

[प्रकट है कि दोनों प्रतियोंकी ये सूचनाएँ प्रथम दोहेकी टीकाओंके रूपमें हैं। सम्भवतः ध. का रूप पूर्ववर्ती है, जिसमें और विस्तार करके का. का रूप बनाया गया है : ध. का 'एक लाख टका' का. में 'दो लाख टका' हो गया है, यह भी इसी अनुमानका समर्थन करता है।]

अर्थ—दिल्ली नगर सुल्तान फीरोज़शाहका स्थानक (शासन-केन्द्र) था। [उसका] शाहज़ादा कुतुबुद्दीन युवा [हो चला] था । नव + तीन [= बारह] वर्षों [की अवस्था] में वह तेग़ (तलवार) [चलाने] में प्रमाण हो गया [था], [जिस समय] लज्जालु बीबी (बिवाना) [उसके लिए] बन्धन हो गयी।

टिप्पणी—थाना < स्थाणय < स्थानक = चौकी, सैनिक केन्द्र, कदाचित् यहाँपर तात्पर्य शासन-केन्द्रसे है। जुआण < युवन् = तरुण, जवान। लाजली < लज्जालुआ < लज्जालु = लज्जावाली स्त्री। बीबी [फा०] = कुल-वधू, भले घरकी स्त्री, बीबीया का-आ युक्त रूप बहुवचनका नही, आदर अथवा प्यारका है। बंधाणा < बंधणया < बन्धन।

[३]

डोसी 'अग्गा'[1] 'आगइ'[2] 'बीबी बिवानां'[3] 'बइट्ठी'[4]।
'नवे'[5] 'पंच सइ' 'हत्थ सोवन्न लट्ठी' ॥
'वाडीयां'[8] 'वेलियां'[9] नयणे 'दिषावइ'[10]।
'साहिजादा आगइ'[11] 'सरकणइ'[12] न 'पावइ' [13]–[14] ॥*

पाठान्तर—१ अ अगा (=अग्गा) का. आगा, ध. आगां। २. का. आगै। ३. ध. दरबारि। ४. का बैठी। ५. ध जथे। ६ ध. पाच सइ, का पांच सै। ७. ध. हाथि सोवन्न लाठी। ८. ध. का. बारीयां। ९. ध बोलीया। १०. का. दिषावै। ११. का. पिण साहिजादा आगै। १२. ध. सरकणे, का. सिरकणै। १३. का. पावै। १४ अ. मे इस अंशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, जो है '३'।

अर्थ—वृद्धा आग़ा और बीबी बिवानां [जो उस शाहज़ादेकी माता थी] उन सबके आगे बैठी [होती थीं]। [ऐसी स्त्रियाँ] पाँच सै नवे [होतीं] थीं, और उनके हाथोंमें स्वर्ण-यष्टि [होती थी]। वे [शाहज़ादेको उसके]

---

* का. में यहाँ निम्नलिखित पक्तियाँ और है :

वचनिका—बीबीयां का नाम। बीबी अगा १, बीबी बीवांनां २, बीबी अगीया ३, बीबी पेम प्यारी ४, बीबी गुलाब ५, बीबी महबूब ६, असी बीबी पाच से गुलांम पासे-बांण सु साहिजादै के पासे रहै। हाथूं बीचि सोना का आसा सोने के गुरुज लीय बैंठी रहै कोऊ आवण पावै नहीं। दरवाजे पांच सै प्यादा खडा रहै। इस भांति रहै। पातिसाह का हुकम एक पूंगरी पातिसाह कै है सो जतन सु साहिजादा कु राषत है। कोइ हरामजादा छल छिद्र साइण माइंण बुरा आवण न पावै। असी जावता साहिजादे की है।

नेत्रोंसे वाटिका और [उसकी] लताओंको दिखाती [रहती] थीं। [उनके द्वारा परिवेष्टित] शाहजादा आगे सरकने (जाने) नहीं पाता था।

टिप्पणी—डोसी = बुड्ढी (द० 'दक्खिनी-हिन्दी' बाबूराम सक्सेना, पृ० ७९ पर 'डोसा')। अग्गा ∠ आगा [तु०] = एक उपाधि जो प्रायः मुगलोंकी होती थी। सोवन < सोवण्ण < सौवर्ण = स्वर्ण निर्मित। छट्ठि < यष्टि = लाठी, छडी। वाडीया < वाटिका = उद्यान। वेळी [दे०] = लता। सरक् < सर् < सृ = खिसकना, जाना।

[४]

'एक सि द्यउस देवर ढढिनीं मालनी का'[१] भेष कर्‌यां'[२]।
'पक्कीयां नारिंग्यां जंभीरयां भरयां'[३]।
बेलीयां 'बंकीयां करयां'[४]।
हेलीयां 'साहिजादे कइ अग्गइ'[५] धरयां।*
दोइ साहिजादें अप्पणइ हत्थइ कीयां'[६]।
[७]'आगा' [८]'मालनी षुब (षूब) 'हइ'[९]।
हां 'साहिजादे'[१०] 'जोवणा'[११] षूब हइ।
'षूब कु षूब'[१२] होइगा।
टुक एक 'धीरे'[१३]।
सुलतांण फुरमाण 'देता ई हइ'[१४]।
'नारिंगी दो दो च्यारि बंटे दीयां'[१५]।
'पांच सोवन्न के टके देवरइ* धरे'[१६]।
'बे मालनी'[१७] 'आईयां'[१८] करे'[१९]॥

पाठान्तर—१ ध० एक दिवस देवर ढढणी मालणीका, का० एक दिन ढिढणी मालणीका। २ का० करचा। ३ ध० पक्की नारगी जंभीरीया उदिला भरचा,

---

* का० में यहाँ और है :
उहाँ दरबार आगै पुकारी। तब साहिजादै सुण्या। सुणत ही इंदर बोलाई। हां मालिणी हाजर। एते बीच हजूरी दोडे। पकर बांइ इंदर ल्याए। फल साहिजादा कै आगै धरया।
[इस अंशका अन्तिम शब्द प्रायः वही है, जो इसके पूर्वका है, इसलिए ज्ञात होता है कि पहले यह अंश हाशिएमें बढाया गया था," जिसको मूलमें सम्मिलित करते समय उक्त वाक्य दुहरा उठा]

का० पकीया नारजीया जभीरीया दोना भरया, अ० पक्की नारिंग्या जभोरया भरया। ४. ध० वाकी करया, का० वंकीया कीया। ५. ध० साहिजादा आगे, का० साहिजादा आगै। ६ ध० दुइ साहिजादाइ आपणइ हाथि कीया, का० दोइ साहिजादे आपनै हाथ करया। ७ का० मे यहाँ 'ए' और है। ८. अ० अगा (अग्गा), ध० आगा, का० आगा। ९. का० है। १० का० साहिजादा। ११. ध० जोवन। १२ का० तौ खूब खूब खूब खूबका खूब। १३ ध० धीरी, का० धीरज धरणा। १४. ध० दई हुइ, का० देता है। १५ का० नारंगी दोइ च्यार बाटि बाटि दीनी, ध० नारंगी दोइ दोइ च्यारि च्यारि बाटि दीयां, अ० नारीगी दो दो च्यारि बटे दीया। १६ का० पाच सोनोके टके देवरे छाव मे धरे, ध० पाच सोवनके टके दोइ धरे, अ० पाच सोवनके टका दोवरइ भरे। १७ का० बे मालिनीया, ध० अबे मालिनी। १८ का० आया, ध० आई। १९ अ० मे इस अंशकी क्रम-संख्या भी दी है, जो है '४'।

अर्थ—एक दिन देवर ढाढिनीने मालिनका वेष किया। [उसने] पक्की नारंगियाँ और जंभीरियाँ [छाबड़ेमें] भरीं। बाँकी केश [—सज्जा] की। [तदनन्तर] उन्हें उसने हेलापूर्वक शाहजादेके आगे (सामने) [लाकर] रखा। [उनमें-से] दो शाहजादेने अपने हाथोंमे कर लीं, [और बीबी बिवानांसे कहा,] "आग़ा, यह मालिन अच्छी है।" [आग़ा ने कहा,] "हाँ राजकुमार, इसका यौवन अच्छा है। अच्छेको अच्छा ही [प्राप्त] होगा, [किन्तु] एक क्षण (थोड़े समय तक) धीरज [रखने] से। [अब] सुलतान फ़रमान देता ही है।" शाहज़ादेने दो-दो चार-चार नारंगियाँ बाँट दीं, [और] सोनेके पाँच टके देवर ढाढिनीने रख लिये। [तदनन्तर शाहज़ादेने उससे कहा,] "रे मालिन, तू आया करे।"

टिप्पणी—एकसि = एक (दे० 'दक्खिनी हिन्दी' बाबूराम सक्सेना, पृ० ५२)। वंक < वंक < वङ्क = बाँका, सुन्दर। वेली < वेल्ल + इका [दे०] केश, बाल। हेला = आयास-हीनता, सरलता। हथ < हत्थ < हस्त = हाथ। खूब < खूब [फा] = भला, अच्छा, सुन्दर। फुरमाण < फरमान [फा०] = अनुशासन-पत्र, राजकीय अनुशासन-पत्र।

[५]

'टुक एक गया मालनी फिरि'[१] आई।[२]
'साहिजादे आपणी जंभीरियां'[३] 'सुहंगीयां न बेचुंगी'[४]।
[५]'आगइ' [६]दावल 'दानसवंद'[७] की 'पूंगरी'[८] हइ।

'सु'[९] मुहर मुहर 'जंभीरियां मांगती हइ'[१०] ।[११]
'जउ'[१२] न देहुगे 'तउ'[१३] सुलतांण सुं कहुंगी ।
एकस एकस कुं 'गहुंगी'[१४] ।
'एताल ल्यावहु'[१५] ।
'खाइयां'[१६] क्या कहावइ ।
'जिनि खाइयां ते दिषावहु'[१७] ।
'नांतर मुहर मुहर जंभीरियां नकी पाछी'[१८] 'ल्यावहु'[१९] ॥[२०]

पाठान्तर—१. का० मालिनी बाहिर जाइ टुक एकै फिर। २. का० मे यहाँ और है : क्या बात बनाई। ३. का० साहिजादा अपने सोनइये लेहु, हमारीया नारंगीया जे भीरीया फेर देहु। ४. ध० सुहुंगी न बेचउंगी। ५. का० मे यहाँ और है : साहिजादा बोल्या मुहगी कोण न लेहुगा तेरी। ६ का० मे यहाँ 'इहा' और है। ७ का० दानसमंद, अ० दानसबंध। ८. का० मे यहाँ और है : हर रोज लेती। ९ का० मे नही है। १० का० जंभीरी देती है। ११ का० मे यहाँ और है : हु तो साहिजादा जानि आई, मोकु दोइ मुहरकी टाप धाई, जभीरीया तो खाई, टुक एक मोरी आई। १२. का० साहिजादा। १३ का० तो मै। १४ ध० गहि, का० ग्रहुंगी। १५. का० मे नही है। १६. का० षाई। १७ ध० जिणि षाइयाते दिषाई, का० जिण षाई सो दिषावो, अ० गिनि षाई हुइ ते दिषावहु। १८ ध० नही तर महुर महुर जंबीरिया की पाछी, का० नही तो मुहुर मुहुर जभीरी नकी पाछी। १९. ध० मगावो, का ल्यावो। २०. अ०मे इस अशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, जो है '५'।

अर्थ—एक क्षण, (थोड़ा ही समय) गया और मालिन लौट आयी। [उसने कहा,] "शाहज़ादे मै अपनी जंभीरियाँ सस्ती न बेचूँगी। आगे दावर दानिशमन्दकी [एक] बालिका (कन्या) है; वह [मेरी] जंभीरियाँ [प्रत्येक] एक-एक मुहरकी माँग रही है। यदि तुम [मेरी जंभीरियाँ वापस] न दोगे, तो मैं सुलतानसे कहूँगी और एक-एकको [तुमसे वापस] ले लूँगी। [तुम] इसी समय [उन्हें] लाओ। 'खायी हुई' क्या कहलाती हैं? जो खायी हुई हैं, उन्हें दिखाओ, नहीं तो [उन] ख़ालिस (अछूती) जंभीरियोंके पीछे एक-एक मुहर लाओ।"

टिप्पणी—मुहंग = सस्ता, कम दाममे प्राप्य। दावल < दावर [फा०] = न्यायकर्त्ता। पूंगरी < पुद्गल + इका = बालिका, अथवा < पौगण्ड + इका = किशोरी। एकस = एक (दे० 'दक्खिनी हिन्दी', बाबूराम सक्सेना, ६-७९)।

एनाक्ष [तुल० इत्ताहे <इदानीम्] = इसी समय। नकी <नकी [अ०] विशुद्ध, खालिस।

[६]

'अग्गा आगम'[1] नट्ठियां, बीबी' बीहन'[2] दम्म।
साहिब 'सारी'[3] वत्तडो, साहिजादे सुं कम्म ॥[4]

पाठान्तर—१. ध आगा आगमि। २ का. वीहण, ध. वीहम। ३. का. सारै, ध सारइ। ४ अ. मे इस अंशकी क्रमसंख्या भी दी हुई है, जो है '६'।

अर्थ—[ढाढिणी ने कहा,] "आगा तो पहले ही भाग चुकी है, बीबी बिवानां चुप है। साहिबाने बात चलायी [है], और [मुझे] काम शाहज़ादे-से है।"

टिप्पणी—आगम = आगे, पहले। नट्ठ <नष्ट = भागा हुआ। दम्म < दम् <दमय् = निग्रह करना। सार् <सारय् = प्रेरणा करना, ले जाना, चलाना। वत्तडी <वत्ता <वार्त्ता = बात। कम्म <कर्म = काम, प्रयोजन।

[७]

पेरो साहि 'दुहाइयां'[1], 'झुट्ठी मालनि रुन्न'[2]।
'कुण स केही पुंगरी',[3] 'जिण मुहर जंभीरथां लिन्न'[4] ॥[5]

पाठान्तर—१. का दुहाई। २. का. झूठी मालण रन्न। ३. ध. कोण स केसी, का. कोण स केरी। ४. का मुहर जभीरी लन, ध. जिण महुर जंबीरी लिन्न, अ जिहि मुहर जभीरचा लिन्न। ५ अ. मे इस अशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है जो है '७'।

अर्थ—[राजकुमार ने कहा,] "फीरोज़ शाह की दुहाइयाँ, ऐ मालिन, तू झूठी है जो रो रहा है। वह कौन है और कैसी वह पूँगरी (बालिका) है जिसने [एक-एक] मुहर की जंभीरियाँ ली है!"

टिप्पणी—रुन्न <रुण्ण <रुदित = रो रही। पूंगरी <पुद्गल + इका = बालिका, अथवा <पौगण्ड + इका = किशोरी।

[८]

'पकी जांणि जंभीरियां, 'उसका'[2] 'वरण सुहंदा झग्ग'[3]।
'जिसकी'[4] सूरति 'लोवतइं',[5] 'मेरे'[6] दीदे दूषण लग्ग ॥[7]

पाठान्तर—१. का० मे यहाँपर और है . दावल दानसमदकी साहिबा तिसका नाम : तास पटंतर का नही मै दिट्ठै सब ठाम । [यह दोहा भरतीका ज्ञात होता है] । २. ध० का० मे यह शब्द नही है । ३. ध० वरण सोहंदा जग्ग, का० वर सोहंदै जग्ग । ४. का० उसकी । ५. ध० जोवता, का० लोग्रता । ६. ध० मे यह शब्द नहीं है । ७ अ० में इस अशकी क्रम-संख्या भी दीउ है, जो है '८' ।

अर्थ—[ढाढिणी ने कहा,] "मानो पकी जंभोरियाँ हो, [ऐसा] झक (निर्मल) और सुहाता हुआ उसका वर्ण है, जिसकी सूरत को देखते-देखते मेरे नेत्र दूखने लगे (दूखने पर आ गये)।"

टिप्पणी—लोव् <लोअ् <लोकय् = देखना ।

[९]

'अरे'[1] 'मालिनीयाँ'[2] तूं 'इहि काम'[3] 'आई'।[4]
हां 'साहिजादे हूँ इहि'[5] काम आई ।[6]
साहिब 'सौ*'[7] सूरत्तियां, 'हूं मालन'[8] 'इहि कम्म'।[9]
'जिउं किउं दक्खा वल्लियां'[10] 'जउ र विलगाइ'[11] अंब ॥[12]

पाठान्तर—१ का० वे । २. ध० का० मालनी । ३. का० इस काम, ध० इहां कामि । ४. का० मे और है 'है' । ५. का० साहिजादा मैं इस । ६. का० मे और है : तै कैसी है। ७. अ० सी (<सौ), का० सौ । ८. अ० हू मलनी, का० मै मालन । ९. धा० इह कम्म, का० इस कंम, अ० इहि काम । १०. ध० जिउं किउं देषा बेलीया, का० वेली दाषा सदीया, अ० जउ क्यु दखा (दक्खा) वल्लीया । ११. ध० जिउ रि विलग्गा, का० जाणि विलग्गे । १२. अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है, जो है '९' ।

अर्थ—[राजकुमारने पूछा], "[क्यों] हे मालिन, क्या तू इसी काम-से आयी [है] ?" [ढाढिणीने कहा,] "हाँ शाहज़ादे, मैं इसी कामसे आयी [हूँ]।

[उस] साहबासे अत्यधिक प्रसन्न होकर मैं मालिन इसी कामसे [आयी] हूँ कि वह द्राक्षा-लता जिस किसी प्रकारसे [तुम] आमसे लग जाये।"

टिप्पणी—सु रत्ती <सु + रक्ता = अत्यधिक प्रसन्न। जइ <जइ <यदि। दक्खा <द्राक्षा। अंब <आम्र = आम।

[१०]

साहिजादे 'केहो कहूं'[1], 'साहिब सूरति सुब्भ*'[2]।
'जाने'[3] की करतारियां, लोयन 'हंदा'[4] लब्भ ॥[5]

पाठान्तर—१ का० केही कहा, ध० कैसी कहूं। २ का० साहिबा सूरति सब्भ, ध० साहिब सूरति सब्भ, अ० साहिब सूरति शुभ। ३. ध० का० जाणे। ४ ध० हंदे, का० हदै। ५ अ० मे इस अंशकी छद-संख्या भी दी हुई है, जो है '१०'।

अर्थ—[ढाढिणीने पुनः कहा,] "मैं, ऐ शाहजादे, साहिबाकी उस शुभ्र सूरतको कैसे कहूँ ? उन लोचनोंके लाभको कर्ता भले हो जानता होगा !"

टिप्पणी—(१) केह <कीदृश् = किस प्रकारका। सुब्भ <शुभ्र। (२) लब्भ <लाभ।

[११]

'केसा के कसि बंधियां'[1], के छुट्टियां 'रुलंति'[2]।
जाणे 'सर्पनि अप्पणा'[3], चर चिंडुआ 'भषंति'[4,5] ॥

पाठान्तर—१. क० के केस कस बंधीया। २. का० रुलंदि। ३. ध० सापणि आपणो, का० सप्पण अप्पणा। ४. ध० करि चिंटला भषति, का० चुणि चीटुला भषंदि। ५. अ०मे इस अशकी क्रम-संख्या भी दी है, जो है '११'।

अर्थ—"[उसके] केश या तो कसकर बँधे हुए हैं, और या तो खुले हुए लोट रहे हैं, [वे वेणीके साथ ऐसे लगते हैं] मानो साँपिन अपने चलते-फिरते (विचरण करते) हुए बच्चोंको खा रही हो।"

टिप्पणी—रुळ् <लुठ् = लोटना। सप्पण <सर्पिणी। चिंडुअ = शिशु।

[१२]

'अंगन'[1] चंद 'निलाटियां'[2], भु 'तर'[3] नच्चइ नयण।
जाणे 'आण वधाइयां'[4], 'आगम'[5] 'हंदा'[6] मयण ॥[7]

पाठान्तर—१. ध० आंगण। २. ध० ललाटिया, का० नलाटीया। ३ ध०

का० तरि। ४ का० आणी बधीया। ५. अ० आगम। ६ ध० हुदे। ७. अ० मे इस अशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, जो है '१२'।

अर्थ—"उस अंगना (स्त्री) का ललाट चन्द्रमा [जैसा] है और उसकी भौंहोंके नीचे उसके नेत्र [इस प्रकार] नाचते रहते हैं, मानो वे मदनके आगमनकी बधाइयाँ ला रहे हो।"

टिप्पणी—अंगन <अङ्गना = स्त्री। बधाई <बद्धावण <वर्द्धापन = अभ्युदय-निवेदन और उसके प्रतीक स्वरूप दी जानेवाली भेंट, जो नारी-समाजमे प्रायः नृत्य गीतादिके साथ दी जाती रही है। मयण <मदन = कामदेव।

[१३]

'वइंणी बंधि बिलंबिया,'[१] 'मुत्ती हेक रुलंति'[२]।
'जाने सीपि सुमुष्षीयां'[३] 'कंठइ *कीर चुणंति'[४] ॥[५]

पाठान्तर—१ का० बेनी बद्ध बिलबीयो, ध० बेणी बधि बिलंबीया, अ० वइंणी विधि बिलबीया। २. का० मोती एक रुलदि, ध० मोती एक रुलति, अ० मुत्ती हेक रुलंत। ३. का० जाणे सीप समषीया, ध० जाणे सीप सुमुखोया। ४. का० काठै कीर चुगदि, ध० कठै कीर चुणति, अ० कठइ कीर चुणति। ५. अ० मे इस अशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है जो, है '१३'।

अर्थ—"[जो] उसकी वेणीसे बँधा हुआ और विलम्बित है, [ऐसा] एक मोती [उसकी नासिकापर इस प्रकार] लोट रहा है मानो वह सीपियों (नेत्रों) के समक्ष ही हो और पासका कीर (नासिका) [उसे] चुन (चुननेका यत्न कर) रहा हो।"

टिप्पणी—वइंणी <वेणी। मुत्ती <मौक्तिक = मोती। हेक <एक। रुल् <लुठ् = लोटना। कंठ <कण्ठ = समीप।

[१४]

'ही उट्ठा दिट्ठाइयां, दोहा पंचइ च्यारि'[२]।
जाणें 'नी नारिंगियां,'[३] बे अंगीया मझारि ॥[४]

पाठान्तर—१. का० मे इस दोहेके पूर्व निम्नलिखित और है :

अधर सुढका ढंकीया, झसड सोहंदे रूप।
जांणे रक दुराईया, नग पनीया अनूप ॥

२. का० हीये ऊठा दिठाइयां दीहा पच चयारि, अ० ही उठा दिठाइया दीहा पंचइ च्यारि। ३. का० नीसू नारंगीया। ४ अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है, जो है १४'।

अर्थ—"चार-पाँच दिनोंसे [ही] उसके हृदय (वक्ष) उठे हुए दिखाई पड़े [हैं], [और उसके कुच ऐसे लगने लगे हैं] मानो उसकी अँगियामें हूबहू दो नारंगियाँ हों।"

टिप्पणी—ही < हिअ < हृदय। दीह < दिवस। नी < निज = वास्तविक। वे < द्वि = दो।

[१५]

लंक 'धन कइ'[1] मुट्ठियां, 'बिध रसु रंगी'[2] बांम।
हत्था कांम 'सपीय भउ',[3] 'पिय हत्था भउ'[4] कांम ॥[5]

पाठान्तर—१ का० धनषी, ध० धणुषइ। २ का० बिधरस अगा, ध० बिध र सु रंगे। ३ का० त प्रीय भे, ध० कपियो भयो। ४. का० प्रिय हत्था भै। ५ अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है, जो है '१५'।

अर्थ—"उस स्त्रीकी कटिको मुट्ठीमें [पकड़] करके ही [जैसे] उस वामाको विद्ध (?) रस (प्रेम ?) में रँगा हो, [इसीलिए] कामके हाथ पीले हुए और उस प्रियाके हाथों (वश) में [वह] काम हो रहा।"

टिप्पणी—धन < धन्या = स्त्री। पीय < पीत = पीला। पीय < प्रिया।

[१६]

[1]'पाइ स रत्तां पंकजां'[2], अढ्ढी 'अंगुलियांह'[3]।
'जाणे राई बेलियां'[4] 'फूल्ली नीकलियांह'[5] ॥[6]

पाठान्तर—१. ध० मे यहाँ और है :

जंघा रंभ नितबीया, केलि कहंदे षभ।
काम कलिंदी सीचिया, जोवन हंदी अंभ॥
अधर सुरंगा ढकीया, डसण सुहदा रूप।
जाणे रक दुराइया, नग पन्नीया अनूप॥

(इनमे-से दूसरा का० मे स्वीकृत [१४] के पूर्व आ चुका है—देखिए

ऊपर।) २. का० पाव सरत्ता पकजा, ध० पाय सरत्ता पगजा। ३ का० अगुलीया। ४ का० जाणे राई अबिया, ध० जाणे राई बेलिया, अ० जाणि राय वल्लीया। ५. का० फूले नीकलीया। ६ अ० मे इस अशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, जो है '१६'।

अर्थ—"[उसके] चरण लाल पंकज है, और उनकी उँगलियाँ [ऐसी] सुन्दर है मानो राईकी बेलमे फलियाँ निकली हुई हो।"

टिप्पणी—रत्त < रक्त = लाल। अड्ढ < आढ्य = सम्पन्न; कदाचित् यहाँ-पर तात्पर्य है सौन्दर्य-सम्पन्नमे। राई < राइआ < राजिका। फूली = फली।

[१७]

[1]"बे मालनियां दिट्ठाइयां'[2], के 'सोनी'[3] गल्हरियांह।
[4]साहिब 'संचो दिट्ठियां,'[5] 'लइ'[6] चलि संगरियांह॥[7]

पाठान्तर—१. का० मे यहाँ और है :

साहिजादा सचा जनम, साहिब लते लभ।
जिम गै रगी लदीया, तिहि मिलदे सभ॥

२. का० मालणीया तै दिट्ठिया। ३ ध० सोहणि, का० सूनी। ४ का० मे यहाँपर और है : हा। ५. का० सचे दिषीया। ६ का० ले। ७. अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है, जो है '१७'।

अर्थ—[शाहज़ादेने पूछा,] "रे मालिन, वह [तुझे] दिखी भी है, अथवा [तेरे-द्वारा] बातोंमें [ही] सुनी गयी है? यदि तूने साहिबाको सचमुच देखा है, तो मुझे साथ ले चल [और अपने वर्णनोंकी सत्यता प्रमाणित कर]।"

टिप्पणी—सोन् < श्रु = सुनना। गल्हरी = बात। संगरी = साथ।

[१८]

'साहिजादे'[1] 'षथां न होउ'[2], धरि 'खल्लरी षवेह'[3]।
डीबो 'डांग सुसिंगरी',[4] 'कमरि करंदा लेहि*'[5]॥[6]

पाठान्तर—१. का० साहिजादा। २ का० षथा न हो, ध० सत्ती न हु, अ० षथा न होउ। ३ ध० पल्लरी षवेह, का० षल्हडी षवेह, अ० षल्लरी खवेहि। ४. ध० डंग सु सिंगरी, का० डाग मुंगरी, अ० डांस स सागरा। ५. ध० कमर

कसिदा लेह, का० कमरि करंदा लेहु, अ० धरि षल्लरी षवेहि (प्रथम चरणकी शब्दावली भूलसे दुहरा उठी है)। ६ अ० मे इस अशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, जो है '१८'।

अर्थ—[ढाढिनीने कहा,] "ऐ शाहज़ादे, तू उदीस न हो; तू [फ़कीरोंका वेष धारण कर और] खल्लरी (थैला) कन्धेपर रख तथा डीवी (हाँडी = भिक्षा-पात्र), डाँग (यष्टि), सिंगरी (शृंग) और कमरमें करन्दा (करण्डक = पेटिका) ले (धारण कर)।

टिप्पणी—षथा < खित्तय [दे०] = दीप्त, प्रज्ज्वलित। खल्लरी < खल्लय < खल्लग [दे०] = थैला। खवा < खवय [दे०] = स्कन्ध, कन्धा। डीवी < दीपिका (?) = लघु प्रदीप (?)। डाँग < डंगा [दे०] = लाठी, यष्टि। सीगरी < शृङ्ग = विषाण। करंदा < करंडक = पेटिका।

[१९]

[1]मालणीयां कहि 'नट्ठियां',[2] '[3]जाहि'[3] जमा की राति।
दावल दानसमंद कै '[4]मांगि स' 'तत्ता भात॥

पाठान्तर—१. यह दोहा अ० मे नहीं है किन्तु कथामे आगे ही यह आता है कि शाहज़ादा जुमरातकी प्रतीक्षा करने लगा, और फिर जुमरातको ही वह साहिबाको उस ढाढिनीके साथ देख सका, इसलिए यह दोहा प्रसगमे अनिवार्य है और क० मे भूलसे छूटा हुआ लगता है। २. ध० नीकल्या। ३ ध० जाहु। ४. ध० मगिसु।

अर्थ—"[और] तू जुमेरातको जा", यह कहकर [वह] मालिन भाग गयी, "तथा तू दावर दानिशमन्दके यहाँ [उस दिन] गरम भात माँग [तब तुझे साहिबाके दर्शन होंगे]।"

टिप्पणी—नट्ठ < नश् = भागना। जमाकी राति < जुमेरात [अ०] = बृहस्पतिवार। तत्ता < तप्त = गरम। भात < भत्त < भक्त = उबाला हुआ चावल।

[२०]

वचनिका : *'बीबियां आई ।'[१]
मालनी 'संच जाण्या'[२] ।
'साहिजादा सइतान र जाण्या ।'[३]
'जो आवे इता ही पूछता सदि हइ ।'[४]
'अबे जमाराति 'कदि हइ'[५] ॥
'पूछतइ पूछतइ जमाराति आई ।'[६]
बीबियां 'हरम द्वार'[७] धाई ।[८]
सुलाताण 'बाराम बारी आया'[९]
'एतइ बीच'[१०] साहिजादा 'जमा मसीति आया'[११] ॥[१२]

पाठान्तर—१ का मे नही है । २ का० साच जाण्या, अ० सच जाण्या । ३. का० मे यहाँ और है ' मालणी गयी । बीबीया आयी । [दूसरा वाक्य ऊपर इसके पूर्व आ चुका है और पूर्ववर्ती दोहेमे 'मालनियां कहि नट्ठियां'में प्रथम वाक्यका आशय भी आ चुका है । इसलिए ये वाक्य प्रक्षिप्त लगते है ।] ४ ध० का० जोइ आवै तिसकूं (तिसही—अ०) पूछै । ५. का० कब है । ६ ध० पूछता पूछता जुमाराति आई अ० अबे पूछतइ पूछतइ जमाराति आई । ७ ध० हरम दुवार, का० सब द्वार कु, अ० हरम बार । ८ का० मे और है बीबीया हरम द्वार जाती चीन्ही । बेगम बिवानां कुं ताजीम कीनी । [अनावश्यक विस्तार लगता है।] ९ का० अंदरतै बाहिर आये । १०. का० सलाम कै मिसि करि । ११ का० जमा मसीत कु धाए। १२. अ० मे इस अंशकी दो क्रम-सख्याएँ भी दी हुई है, पाँचवें वाक्यपर क्रम-सख्या '१९' है, अन्तिमपर '२०' ।

अर्थ—[इतनेमें] बीबी (बिवानां) आ गयी । मालिनने [शाहज़ादेको] सच्चा जाना । [किन्तु] शाहजादेने उसे शैतान [ही] समझा । जो आता, उससे वह पूछता ही रहता, "[क्यों] रे, जुमारात कब है ?" पूछते-पूछते जुमारात आ गयी । बीबी (बिबानां) हरमके द्वारको दौड़ी । सुल्तान परमेश्वरके बार-ए-आम (आम दरबार) में उपस्थित हुआ । इतने ही (इसी) बीच राजकुमार जुमा मसजिद आया ।

---

* का० में यहाँ और है : तुमहो दुनीयांदार साहजादे । उहाँ दावल कै आगै बहुत दिवादे । साहिबां हाथ ठुकरा एक पावै । हमारे कहै बुरां मत भावै । फकीर होवै आसका लेषे । तो दावलके दरबार साहिबां देषै । [यह अश अन्य प्रतियोंमें नहीं है और पूर्ववर्ती दोहेके कथनका विस्तार-मात्र है, इसलिए प्रामाणिक नही प्रतीत होता है ।]

टिप्पणी—सइतान < शैतान [अ०] = धर्मसे भ्रष्ट करनेवाली एक प्रकार-की शक्ति। सदि = ही। कदि < कदा = कब। बाराम < बार–ए–आम [फा०] = दरबार-ए-आम, सार्वजनिक राजसभा। बारी [फा०] ईश्वर। जमा < जुमा [अ०] = शुक्रवार, शुक्रवारकी नमाज। मसीति < मसजिद।

[२१]

[१]'दरेस सइ पंच'[२] 'आसाउरी'[३] करते हइ।
'दरेस सइ पंच'[४] 'भांग के नूते'[५] दीदे 'घूरते'[६] हइ।
'दरेस सइ पंच'[७] षुदाइ की बंदिगी करते हइ।
'दानसवंद कइ घर हतइ सहन केहु की वाटइ चाहते हइ' [८]॥[९]

पाठान्तर—१ का० मे यहाँ और है: तहा षलकका तमासा देष्या। [यह वाक्य प्रासंगिक है किन्तु अन्य दो प्रतियोमे नही है, इसलिए सन्दिग्ध लगता है। २, ४, ७ ध० दरवेस सइ पाच, का० दरवेस मु पंच। ३. ध० का० राग आसाउरी। ५ का० मूठी भागकी षाई है, ध० भागिके भूते। ६. ध० घोरते। ८ ध० दानसवंदके घर हनइ सहनको की बाट चाहते हइ, का० दरवेस सै पाच जिकर करते हैं, ध० दानसबधन कइ घर हतइ सहन केहु की वाटइ चाहते हइ। ९ अ० मे इस अंशकी क्रम-संख्या दी हुई है और वह है '२१'।

अर्थ—[वहाँ उसने देखा,] पाँच सौ दरवेश (फकीर) [राग] आसावरी कर रहे है, पाँच सौ दरवेश भाँग (भग) के द्वारा प्रेरित (नशेमे आये हुए) आँखें घूर रहे हैं, और पाँच सौ दरवेश (फकीर) परमेश्वरकी सेवा (प्रणति) कर रहे हैं। और वे दानिशमन्दके घरसे सहन तक किसीकी बाटमें देख रहे हैं।

टिप्पणी—दरेस < दरवेश [फा०] = फकीर। नूत < णुत्त = प्रेरित, क्षिप्त। बदगी [फा०] = सेवा, प्रणति।

[२२]

साहिजादे चादरि सिर उपरि (उप्परि) लीनी।
दोस्तान दोस्तान 'करि'[१] हस्तक्यां दीनी।[२]
साषका 'सोरंभ'[३] आया।

अगर 'जाती'[४] जनाया ।
'गुलाबीयां जागी'[५] ।
टुक एक जमा 'मसीति'[६] 'भिस्तक्यां भोरइ लागी'[७] ।।[८]

पाठान्तर—१ ध० करतइ । २ का० मे इस वचनिकाके प्रथम दो वाक्यो-के स्थानपर है : तहा तरकस बध हदक कुं चोटा करते है । तहा षलक तमासा देषनै कु आवते है । षान षानजादे । मलक मलकजादे । मीया मीया-जादे । बगसीस पावते है । सादाने वागे । निवाज करनै सुलतान लागे ['हृदफ' निशाना लगाने (लक्ष्य-वेध) को कहते हैं । मसजिदके प्रसगमे 'हृदफ' का यह समा सर्वथा अप्रासंगिक लगता है । ऐसा प्रतीत होता है कि का० के किसी पूर्वजमे ये दो वाक्य छूट गये थे अथवा अपाठ्य हो गये थे, इन्हीकी पूर्ति उसमे किसीने 'हृदफ' की कल्पना करके की है ।] ३ ध० सुवास । ४ ध० जती का । ५ का० गुलाब गई । ६ का० मस्जीति । ७. ध० भिस्तकी घोर भागी, का० [भि] स्ति कै भोले भई । ८ अ० के इस अशकी क्रम-सख्या दी हुई है, और वह है '२२' ।

अर्थ—राजकुमारने चादर सिरके ऊपर कर ली और 'दोस्तो' 'दोस्तो' कहकर उपस्थित लोगोंको उसने हस्तकियाँ दी । शाख़ (पक्वान्न-विशेष) की सुरभि आयी जब उसमें अगर और जातीफल ज्ञात पड़े । गुलाबी [सुगन्ध] जाग पड़ी और जुमा मसजिद एक क्षण [के लिए] बिहिश्त (स्वर्ग) की भूलमे (जैसी) लगी ।

टिप्पणी—हस्तकी = हाथ, मिलनेका हाथ । साख < शाख़ [फा०] = सुहाल, पक्वान्न विशेष । सोरंभ < सौरभ = सुरभि । ज < यदा = जब । भिस्त < बिहिश्त [फा०] = स्वर्ग ।

[२३]

'जो द्रेस ज्युं था त्युं ही धाया'[१] ।
'अबे षुदाइ की फिरस्तइ *आया'[२] ।
'इते बीच साहिजादइं'[३] 'किसहू की डीवी
किसहू की डांगी'[४] 'किसहू की षालरी चोरी'[५] ।
'दीनु'[६] लीया 'दुनया बिछोडी'[७] ।।[८]

पाठान्तर—१ का० ठौर ठौर ते दरवेस धाए। २ ध० अबे षुदाइके फिरस्ते आए, का० दौरो बे षुदाइके फिरस्ते आए, ब० अबे षुदाइकी फिरस्बइ (फिरस्तइ) आया। ३ का० इतनै ही बीचि साहिजादै। ४ ध० में यह वाक्याश नही है, का० किसही की सहन क डीबी किसही की डागरी, अ० किसऊ (<किसहू) की डी किसऊ (<किसहू) की डागी। ५ का० किसही की षलरी चुराइ लीनी। ६ का० दीन। ७ ध० दुनियारी, का० दुनिया तरक दीनी। दोसतान दोसतान करि दोस्तपोसी कीनी। ८ अ० मे इस अश की क्रमसख्या भी दी हुई है और वह है '२३'।

अर्थ—जो दरवेश (फ़क़ीर) जैसा था, वह वैसा ही दौड़ पडा [और कहने लगा] "रे, ख़ुदाका फ़रिश्ता (दूत) आया।" इसी बीच शाहज़ादेने किसी [दरवेश] की डीवी (हॉडी = भिक्षा-पात्र), किसी [दरवेश] की डाँगी (यष्टि) और किसी [दरवेश] की खल्लरी (थैली) चुरा ली। उसने [अब] दीन (धर्म) [का वेष] लिया और दुनिया छोड़ी (दुनियादारीका वेष छोडा)।

टिप्पणी—फिरस्ता<फिरिश्त [फा०] = देवदूत। डागी<डगा [दे०] लाठी, यष्टि। खल्लरी<खल्लय [दे०] = थैला।

[२४]

दीवे 'लग्गे'[१] ।
'सादा नइं वग्गे'[२] ।[३]
'निवाज करणइ सुलतांण लग्गे'[४] ।
इतई बीच साहिजादा दावल कइ दरवारि जाइ 'वग्गे'[५] ।।[६,७]

पाठान्तर—१ ध० लागे, का० जागे। २ का० सादीना वागे, ध० सादाना बगे। ३. ध० मे और है : तारा तगे। ४ का० सब कोऊ निवाज करने लागे। ५ ध० रगे। ६ का० मे यह वाक्य नही है। ७ अ० मे इस अंशकी क्रम सख्या भी दी हुई है, और वह है '२४'।

अर्थ—दीपक लग (जल) गये और शब्दो (वर्णों) को बजाया गया। सुलतान नमाज़ [अदा] करने लगा। इसी बीच राजकुमार दावर [दानिशमन्द] के द्वारपर जा पहुँचा।

टिप्पणी—दीवा<दीअअ<दीपक । साद<सद्द<शब्द = वाद्य दावल<दावर [फा०] = न्यायकर्त्ता । वग्<वल्ग् = जाना, गति करना । दर [फा०] दरवाजा । वार<द्वार = दरवाजा ।

[२५]

'अप्पाण पर डर ।
गया जे आण मर ।'[१]
बे दावल 'दानसवंद'[२] का घर ।
दोस्तान दोस्तान 'भत्तु लाओ'[३] ।
'कुछु षाहु'[४] 'कुछ'[५] षुलावहु ।।[६], [७]

पाठान्तर—१ ध० आपनपर उरु गया जुवानु मेर, का० आपन डर पर डर, जोगन गए मर । २ का० दानसमंद, अ० दानसबध । ३ का० तत्ता भत्तु ल्याव । ४. का० कछु षावहु । ५ का० कछु । ६ का० मे और है ल्याव न तत्ते भात । ७ अ० मे इस अशकी क्रम संख्या भी दी हुई है और वह है '२५' ।

अर्थ—अपना और पराया (अपने और परायेका) डर गया, और जो आन (अभिमान) था, वह मर गया । [शाहजादेने कहा,] "रे, यही दावर (न्यायकर्ता) दानिशमन्दका घर है ' दोस्तो, दोस्तो, भात लाओ, कुछ खाओ और कुछ खिलाओ ।"

टिप्पणी—अप्प<आत्म । आण<आज्ञा, किन्तु यहाँपर आशय 'अभिमान' से है । भत्त<भक्त = भात, उबाला हुआ चावल ।

[२६]

'साहिबां सहिन क्यां'[१] भरी हइ ।[२]
देवर ढढ़िढनी 'अग्गइ'[३] षरी हइ ।
'दरेस दोस्तांन भत्त लइ आवनइ हइ' [४]।[५]
दीदे भूषे 'दुहूं के'[६] मुझइ 'धावनइ*'[७] हइ ।।[८]

पाठान्तर—१. का० आगे साहिबा सहनका, ध० साहिब्या सहिन क्या । २. ध० मे पिछली वचनिका [२५] के दावल' शब्दसे आगे यहाँतकका अश नही है—जो भूलसे छूटा हुआ है । ३ का० आपै, अ० अगइ (= आग्गइ) ।

४ ध० दरवेस दोस्त भात लेहइ कि न लेहइ आवणइ ही, का० दरवेस दोस्तान तत्ता भात लेते है। ५ का० मे यहाँ और है एते मै साहिजादा आवै है। ६. ध० हइ। ७ ध० ध्यावणइ आए, का० सोचना, अ० धावन। ८ अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या दी हुई है, और वह है '२६'।

अर्थ—[शाहजादेने देखा] साहिबा सखियोकी (से) भरी है और देवर ढाढिनी [उसके] आगे खडी है। [ढाढिनीने कहा,] "दरवेशो और दोस्तो, [तुम्हारे लिए] भात ले आना है। दोनोंके नेत्र भूखे है, [जिससे] मुझे [उनके लिए] दौड़ना है।"

टिप्पणी—सही<सखिन् = सहेली। भत्त<भक्त = भात, उबाला हुआ चावल।

[२७]

[1]पेरो साहि साहिजादा 'कुतबदी'[2]
दावल 'दानसवंद'[3] 'साहिजादी साहिवां'[4]
ढढ्ढिनी गाइबां 'ही'[5] 'गुमांन'[6] बोली
[7]साहिवां 'दीदे'[8] 'उनइ'[9]।
'वुन्नइ*'[10] साहिजादा षरा हइ।[11]

पाठान्तर—१ ध० का० मे 'सुलतान' और है। २ का० कुतबदीन। ३. का० दानसमद। ४ ध० साहिजादी साहिबा कूं, का० साहजादा दोनूं की नजर एक हुई। ५ का० मे नही है। ६ ध० गुमानि। ७ का० मे 'अए' और है। ८ ध० दीदो, का० मे यह शब्द नही है। ९ ध० नइ, का० उनए। १० ध० विनइ, का० विनए, अ० दुन्नइ (<वुन्नइ)। ११ अ० मे इस अश-की क्रम सख्या दी हुई है और वह है '२७'।

अर्थ—"फ़ीरोजशाहके शाहजादे कुतुबुद्दीन" [ढाढिनीने कहा,] "[यह है] दावर दानिशमन्दकी शाहजादी साहिबा", ढाढिनीने गैबों (परोक्ष) में ही अभिमानपूर्वक कहा। "साहिबा, नेत्रोको ऊँचाकर, शाहज़ादा उद्विग्न ही खड़ा है।"

टिप्पणी—गाइब<गैब [अ०] = परोक्ष। गुमान [फा०] = घमण्ड, अहंकार, गर्व। उनव्<उण्णाम्<उद् + नमय् = ऊँचा करना। वुन्न<उण्ण [दे०] = उद्विग्न।

[२८]

दूहा : दीदे 'दिग्घ उचाइयां',[१] 'साहिब'[२] साहिब 'अंगि*'[३] ।
जाणे 'अग्गि अणंगियां, पडी'[४] 'पुराणइ दंगि'[५] ॥[६]

पाठान्तर—१ ध० दिघ उचाहिया, का० दिग्ग उचाईए, अ० दिघ उचाइया । २ का० साहिबा । ३ का० मे नही है, अ० अंगा (<अगी< अंगि) । ४ ध० आगि अनंगिया परे, का० अगनि अगीया परे, अ० अगि (=अग्गि) अणगिया पडी । ५ ध० पुराणे दग, का० पुराणे द्रग । ६ अ० में इस अंशकी क्रम-संख्या दी हुई है, और वह है '२८' ।

अर्थ—साहिबाने साहब (शाहजादे) के शरीरपर जब [अपने] बड़े नेत्र उठाये, तो [शाहज़ादेको ऐसा प्रतीत हुआ] मानो [किसी] पुराने द्रंगमें [आक्रमणकारी] अनंग [के जलते हुए अग्निपिण्डों] की आग पड गयी हो [जिससे उसमें हलचल मच गयी हो] ।

टिप्पणी—पुराण = पुरातन, पुराना । दंग < द्रङ्ग = महानगर ।

[२९]

[१]'साहिजादे' [२]साहिबीयां, ढढ्ढनि ढुंढे 'मंझि'[३] ।
जाणे जीवण इक्करा, 'बे पुड कीन्हा भंजि'[४] ॥[५]

पाठान्तर—१. का० मे यहां 'ढढणी वायक' और है। २. का० साहिजादा । ३. का० मुझ । ४ ध० बे पुर कीन्हे भंजि, का० दोइ पुड काना मंभ । ५. अ० मे इस अंशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, और वह है '२९' ।

अर्थ—ढाढिनीने [इस समय जब] शाहज़ादे और साहिबामें मध्य (अन्तर) [के तत्त्व] ढूँढ़े, तो [उसे ऐसा लगा] मानो एक ही जीवनको तोड़कर दो पुटों (शरीरों) में कर दिया गया हो ।

टिप्पणी—मंझ < मध्य = अन्तर । इक्करा < इक्क + डा < एक = अकेला । बे < द्वि = दो । पुड < पुट = पात्र, शरीर ।

[३०]

[1]वचनिका : साहिजादे के षवे 'फुरकणइ'[2] लागे ।
मालिनी के 'उंसान (औसान)'[3] भागे ।[4]
साहि साहिबां 'उंचाई*'[5] ।
तउ कइइंगे ढढ्ढिनी 'तइ'[6] हुई बुराई[7]।।[8]

पाठान्तर—१. का० मे यह पूरी वचनिका परवर्ती दोहेके बाद आयी है। पुनः का० मे इसे 'बात' कहा गया है और इसमे प्रारम्भमे ही निम्नलिखित वाक्य और आता है ढढणी साहिजादा कै दिलकी बात पाई। साहिजादा साहिबा कु ले जाण करता है। आसकीके दीदे भरता है। २ का० फरकणं। ३ का० औसान।४ का० मे यहाँ और है साहबा कै रग राता है। जोवण कै मद माता है। ५ ध० ऊचाई, का० उठाई, अ० उपारी। ६ ध० थी। ७ का० मे यहाँ और है ढढणी न होत तौ साहिबा कु ले जाता। तब ढढणी कह्या। अैसीन बागा। सुलतान सुनैगा। तो तु न लाजैगा। तेरा उपजस परहन वाजैगा। साहिजादा वायक। मेरा जीवन साहिबा। सुलतान दुहाई। ८ अ० मे इस अशकी क्रम संख्या भी दी हुई है, और वह है '३०'।

अर्थ—शाहजादेके खवे (कन्धे) फड़कने लगे, [तो] मालिन (ढाढिनी) के होश-हवास भाग गये (उड़ गये)। [उसने सोचा,] '[यदि] शाहज़ादेने साहिबाको उँचाया (उठाया—भगाया), तो [लोग] कहेगे, यह बुराई ढाढिनीसे हुई है।

टिप्पणी—खवा <खवय [दे०] = स्कन्ध, कन्धा। उंसान <औसान [फा०] = होश-हवास।

[३१]

[1-2]'साहिब सारंगी'[3] नयण, 'सारंगा रिपु साहि'[4] ।
अंषी 'अंषिनु वट्टडी'[5], 'जाणि गिलंदा ताहि'[6]।।[7]

पाठान्तर—१ ध० ढढणी वाक्य, का० ढढणी वायकं। २ का० मे और है 'साहिजादा'। ३ का० साहिबा सारंग अगीया। ४ का सारग सा रिपु साइ। ५ का० अंषन वटला। ६ का० जाणि गलदी ताहि। ७ अ० मे इस अशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है, और वह है '३१'।

अर्थ—[उसने देखा,] साहिबा शार्ङ्गी (मृगी)के नेत्रोंवाली है, और शाहजादा शार्ङ्ग (मृग)-रिपु (सिंह) है, [और, राजकुमार उसे इस प्रकार घूर रहा है] मानो वह आँखों ही आँखोंके मार्गसे उसे निगल रहा है।

टिप्पणी—सारंगी <शार्ङ्गी = मृगी। वट्ट <वर्त्म = मार्ग। गिल <गॄ = निगलना।

[३२]

'तू रस कामंधा'[१] भूषिया, 'साहित बीचु अजांणु'[२]।
'सांई'[३] 'हाथ'[४] पकावना, षांहि न कच्चा षांन ॥[५]

पाठान्तर—१ ध० तू रस कामदा, का० तू है रस का मंदा। २. ध० साहिब बीचीया जाण, का० साहि तबीब अजाण। ३ अ० साइ (साई)। ४ ध० हाथि, का० हथ। ५ अ० मे इस अशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है, और वह है '३२'।

अर्थ—[अतः ढाढिनीने कहा,] "[ऐ शाहजादे,] "तू रस (प्रेम) और काममें अन्धा और [साहिबाके लिए] भूखा हो रहा है, [अतः] इस बीच (समय) वशीकृत और अज्ञान [हो रहा] है। [इस तथ्यपर ध्यान दे कि] अपने हाथका [बनाया] पक्वान्न अधिक उत्कृष्ट होता है, इसलिए कच्चा खाना न खा (बिना प्रयासके मिलनेवाले फल-भोगकी इच्छा न कर)।"

टिप्पणी—साहित <साधित = वशीकृत। सांई <स + अति = अतिशय-युक्त, उत्कृष्ट।

[३३]

[१]आसा 'अंधी'[२] ढड्ढिनी, भोग करंदे 'गोर'[३]।
गज्जइ गयण 'न नच्चिया'[४], पावस हंदे मोर ॥[५]

पाठान्तर—१ यहाँपर ध० तथा का० मे है 'साहिजादा वाक्य (वायकं-का०)। २ ध० का० हदी। ३ का० रोग। ४. का० न नच्चही, अ० न नचीया (= नच्चिया)। ५ अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है, और वह है '३३'।

अर्थ—[शाहज़ादेने उत्तर दिया] "ऐ ढाढिनी, आशा अन्धी होती है, और उसका भोग करते-करते [मनुष्य] ग़ोर (क़ब्र) में चला जाता है, [जैसे देखो,] गगन नहीं गर्जन करता है तो भी प्रावृट्के मयूर नाच उठे (उठते) ही हैं।"

टिप्पणी—गोर <गोर [अ०] = कब्र। गयण <गगन। पावस <प्रावृट् = वर्षा।

[३४]

'साहिजादे साहिबियां, साहि 'करंदा लल्लि'[२]।
लज्जा 'लोयिन नच्चणां, लोइ हसंदे कल्हि'॥[४]

पाठान्तर—१ ध० का० मे यहाँ और है ढढणी वाक्य (वायकं-का०)। २. का० करदा लल, अ० करदे लल्लि। ३ ध० लोयन वचणा लोक हसंदे कल्ल, का० लोयन नच्चणा लोक सुणदा कल्ह। ४ अ० मे इस अशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है और वह है '३४'।

अर्थ—[ढाढिनीने कहा,] "ऐ शाहजादे और साहिबा, शाह [यदि] इसे अधूरा रखता है, तो लज्जा [में] लोचनोंके [इस] नृत्यको लोक कल (दूसरे दिन) हँसता है (हँसेगा)।

टिप्पणी—लल्लि [दे०] = अधूरापन [दे० लल्ल = न्यून, अधूरा]। लोयन <लोचन = नेत्र।

[३५]

'ढढ्ढिनियां सोना भला, 'लउ (लउं) नि साहिब संग'[२]।
दुनियां दुक्ख 'लगाइया',[३] अति जागणा अरंग॥[४]

पाठान्तर—१. का० मे यहाँ और है साहिजादा वाक्य, ध० मे है: साहिबा वाक्य [साहिबा वक्ता नही हो सकती है, क्योकि पूर्ववर्ती कथन ढढिणी-के द्वारा शाहजादेको सम्बोधित है]। २ ध० लीनी साहिब सग, का० लुणै साहिब अग। ३ का० वीचाटणा। ४ अ० मे इस अशकी क्रम-सख्या भी दी है और वह है '३५'।

अर्थ—[शाहज़ादेने उत्तर दिया,] "ऐ ढाढिनी, साहिबाका संग ठीक-ठीक भले सोनेके सदृश है। दुनिया (समाज) ने [भले ही] उस [संग] दोष—(दु ख) लगा रखा है, और [इस हेतु] उसमें अति जागरण तथा रंग (प्रीतिहीनता) है।"

टिप्पणी—नि < णिअ < निज = वास्तविक, ठीक ही-ठीक। दुक्ख < दोष। :ख। अरग < अ + राग = रागहीनता, द्वेष।

[३६]

'ढढ्ढिनियां 'हीय हत्थ लइ, आरतियां करि हेरि'।[२]
'साहिजादे'[३] सिर उप्परइ, 'मो साहिबियां तन फेरि'[४]॥[५]

पाठान्तर—१ का० मे और है साहिबा वाक्य। २ ध० हिय हाथ दे आरतीया कर हेर, का० हीय अत्थि ले आरतिया कर हेर, अ० हीय हत्थलइ आरतिया करि हेरु। ३ का० साहिजादा। ४ ध० साहिबिया सिर फेर, का० मे साहिबा तन फेर। ५ अ० मे इस अशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, और वह है '३६'।

अर्थ—[साहिबाने कहा,] "ऐ ढाढिनी, हृदयको अपने हाथमें लेकर [शाहज़ादेकी] आरतियाँ कर और उसे देख। राजकुमारके सिरपर तू मुझ साहिबाके तनको फेर (वार) दे।"

टिप्पणी—फेर् < फेड् < स्फेटय् = परित्याग करना, अथवा < फेल् [दे०] = फेकना, दूर करना।

[३७]

[१]'जउ' [२]जोरां तउ तुज्झ 'ही'[३], 'जउ'[४] गोरा तउ तुज्झ।
एह करंदा मुज्झ 'हइ'[५], 'ईर' (और ?)[६] करंदा 'बुज्झ'[७]॥[८]

पाठान्तर—१ का० मे यहाँ और है 'ढढिणी वाक्यं' [किन्तु यह वाक्य स्पष्ट ही शाहज़ादेका है, जिससे ज्ञात होता है कि यह शब्दावली बादमे किसी व्यक्तिके द्वारा अनुमानसे जोड़ी गयी है। ऊपर [३५] मे हमने देखा है कि ध० और का० भिन्न-भिन्न वक्ताओका उल्लेख करती हैं; वहाँपर ध० का

उल्लेख अशुद्ध है। इसलिए ध० तथा का० दोनोमे मिलनेवाले ऐसे सकेत जो अ० मे नही मिलते हैं, सन्दिग्ध है।] २. का० जे। ३, का० सु। ४. का० जो। ५ का० सु। ६ का० होर। ७ ध० का० तुझ। ८ अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है, और वह है '३७'।

अर्थ—[शाहज़ादेने कहा] "[अब] यदि (संयोग होता है) तो मै तेरा हूँ और यदि ग़ोरमें [जाता हूँ] तो भी तेरा ही हूँ। यह तो मेरा कर्तृत्व है, और (शेष) कर्तृत्व तू जाने।"

टिप्पणी—जोरा < जोअ + डा < योग = सयोग। गोर < गोर [अ०] = कब्र। करंदा < कर्तृत्व।

•

[३८]

[1]इतनी वात 'करतइ सुलताण निवाज्या'[2] कीनी।
'दानसवंदइ' '[3]अपनइ अपनइ घरह की' [4]वाटयां लीनी'[5]।
'पुहर'[6] एक 'चा'[7] राति वीती।
'साहिजादइ आपणइ कपरे कीए'[8]डीवी 'डांग'[9]पल्लरी 'अतीती'।[10]
सुलतांण केलि की 'षडकी खडे हइ'[11]।[12]
'किताबइं रही किताबा त्यां लीनी'।[13]
देस देस 'मुलक मुलक'[14] 'कुं फुरमांण दीनइ'[15]।
'इतइ बीच साहिजादा पछइ सहं था'।[16]
'सुलतांण सुरति' [17]कीनी। वे 'कुतबदी' तुं[18] कहां 'थां'[19]॥[20]

पाठान्तर—१ का० मे यहाँ और है 'बात'। २. का० करता सुलताण निवाज। ३ का० दानसमंद, ध० दानसबंधइ। ४ का० आपणै आपणै घर की। ५ ध० वाद नीन्ही, का० वाट लीनी। ६ का० पहर। ७. ध० का० मे यह शब्द नही है। ८ ध० साहिजादे अपणे कपरे लिए, का० साहिजादे कपरे फेरे। ९ ध० दडी। १०. का० उतारी, ध० तारि अतीता कहुं दीधे। ११. ध० का० षिरकी षरे है। १२ का० मे और है. साहिजादा अपनै मन मै डरे है। १३ ध० किताब तइ किताब तइ लीनी, का० किताब ही किताब दीनी। १४ अ० मुलकहु। १५. ध० कहु फुरमाण दीने, का० का परवान कीना। १६ ध० इतई बीचि पीछइ, का० एतै बीच साहिजादा पीछै ही था। १७.

का० सुलतान कै नजर। १८ का० साहिजादा। १९ का० था। २०. अ० मे इस अशकी क्रम-संख्या दी हुई है और वह है '३८'।

अर्थ—इतनी बातें करते ही सुलतानने नमाज़ें कीं, और दानिशमन्दोंने अपने-अपने घरोंकी राहें लीं। एक ही पहर रात्रि बीती [थी], शाहज़ादेने अपने कपड़े पहने तथा डीवी हाँडी = भिक्षा पात्र डाँग (यष्टि) और खलुरी (थैले) को उसने दूर किया।

सुलतान केढि (?) की खिड़कीपर खड़े हैं। किताबें रही (थीं); उन किताबोंको [सुलतानने] लिया, और सुलतानने देश-देश और मुल्क-मुल्कको फ़रमान दिये। इतने बीच शाहज़ादा पीछे उसके साथ था। सुलतानने उसको याद किया [और उससे पूछा,] "क्यो रे कुतुबुद्दीन, तू कहाँ था ?"

टिप्पणी—चा = ही (दे० दक्खिनी हिन्दी, डॉ० बाबूराम सक्सेना, पृ० ५३)। अतीत् < अती = हटना, जाना दूर होना। किताबी = लेखक। सुरति < स्मृति = याद।

[३६]

चमांऊ 'हाथ'[1] वाह्या।
'हस्तइं हीं वात्यां कीयां'[2]।[3]
बंदा जमा मसीति 'बंदियहु' की 'बंदिगी'[4] देषणइ 'हु'[6] गया था।
'फिरस्ता फिरस्ता करते दरेस वलइ वलइ'[8] 'धाया'[9]।
हमारे हस्तइं हस्तइं दीदे 'दूषणह'[10] 'आया'[11]।[12], [13]

पाठान्तर—१ का० हस्त। २ ध० हसतौ ही बात कीनी, का० हसतै बात कीनी। ३. ध० मे और है : अबे कुतबदी हसतइ किउ दीदे दुषाणे। ४ का० बंदीयन। ५. अ० बदिकी। ६ का० मे नही है। ७ का० मे और है. साषका सोस्त आया। ८. का० दरवेस फते करता फरेसता फरेसता करता, अ० फिरस्ती फिरस्ती करते दरेस बलइ बलइ। ९. ध० धाये। १०. का० दूषणा। ११. ध० आये। १२ अ० मे इस अशकी क्रम-सख्या नही दी है, जो कि '३९' होनी चाहिए—यह छूट गयी है।

अर्थ—नमस्कारका (?) उसने हाथ वाहा (उठाया-चलाया) और हसते हुए ही [उसने] बातें कीं। [शाहज़ादेने कहा] "सेवक जुमा मसजिदको

[परमेश्वरके] सेवकोंकी बन्दगी (प्रणति - निवेदन) देखने ही गया था, कि 'फिरिश्ता' 'फ़िरिश्ता' करते हुए दरवेश (फ़क़ीर) मेरी ओर घूम-घूमकर दौड़ पड़े और हँसते-हँसते मेरे नेत्र दुखनेपर आ गये।"

टिप्पणी—चमाऊं = नमस्कारका (?)। वाह् <वाह्य् = चलाना। फिरस्ता <फ़िरिश्त : [फा०] = देवदूत। दरेस <दरवेश = फकीर। वल = मुड़ना, वापिस आना।

[४०]

हरमद्वार जाता सुलतांन टुक एक 'मुसक्यानइ'[१]।[२]
'एतइ बीच साहिजादा'[३] 'बीबीय नु'[४] पकरि कइ 'उसही'[५]
महल 'मइ'[६] आन्या।[७]
'पलंग पर लेटया'[८]।[९]
दीदे 'दुराए'[१०]।
कपूर 'पानइ न भावइ'[११]।
'षानइ की क्या'[१२] 'चलावइ'[१३]।
बीबी दूष 'लइनइ कहइ'[१४] परि दूषना'[१५] न जाणइ।[१६]
'साहिजादे जागतइं वेल्हतइ जगो किरण सुविहाणइ'[१७]॥[१८]

पाठान्तर—१ का० मुसकाए। २ का० मे और है : साहजादै कुं जुवानी जोर जनाया। आगिना मेटि बाहिर आया। ३ का० इतनी बीचि साहिजादै कुं। ४ ध० का० बीबीया। ५ ध० मे नही है। ६. का० अदर। ७ का० में और है पर मनका मरम किस ही न जांण्या। ८ ध० लोटाया। ९ का० मे और है : लेटते ही। १० अ० दुरार (<दुराए)। ११ का० पान न भावइ, ध० पानइ न षाइ। १२ का० तो षावणेकी कोण। १३. ध० चलाईये। १४ ध० लहइ। १५ ध० पर दुष। १६ का० मे यह पूरा वाक्य नही है। १७ का० साहजादै कुं विलपत रैन विहावे, अ० साहिजादे जागतइ बेल्हतइ जगा (<जगो) किरण सुविहाणइ। १८ अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या दी हुई है, और वह है '४०'।

अर्थ—हरमके द्वारपर जाते हुए सुल्तान एक क्षण मुसकाये। इतने ही बीच शाहजादा बीबी (बिवानां) को पकड़कर उसी [के] महलमें ले आया। वह पलंगपर लेट गया और उसने नेत्र छिपा लिये। [यदि] कपूर और पान ही न अच्छे लगें, तो खानेकी क्या चलाइए ? बीबी (बिवानां) [उसका]

दुःख लेनेको कहती थी पर [उस] पीडाको नही जानती थी। शाहज़ादेके जागते और कलझते [रात्रि बीत गयी और] प्रभातमें किरणें जाग पड़ीं।

टिप्पणी—वेल्<वेल्ल [दे०]=कांपना, कलभना, छटपटाना।

[४१]

'इतनी वात्या करतइ साहिजादइ जहमत्यां कीन्ही'[१]।
दुनी साहिजादइ की[२] 'अइ मत्यां'[३] लीनी[४] ॥

पाठान्तर—१. का० इतनै बात करता साहजादै जहमतीया कीनी। २ अ० मे 'की' नही है। ३ का० इया मतीया, ध० की मतीया। ४. अ० में इस अशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, और वह है '४१'।

अर्थ—इतनी बाते करते हुए शाहजादेने ज़हमत कर दी, [क्योंकि] दुनिया (सांसारिकता—ऐन्द्रियता) ने शाहज़ादेकी यह मति (बुद्धि) ले ली।

टिप्पणी—जहमति<जहमत [फा०] = आपत्ति, बखेडा।

[४२]

[१]'फजरि हूई'[२] 'तबीबइ तबीब लाग्या'[३]।
'ओषदइ ओषद माग्या'[४]।
'बीबियां'[५] सहित सुलतांण 'जाग्या'[६]।
महल 'मइ'[७] आवनइ 'इंद्र का गर्ब भाग्या'[८]॥[९]

पाठान्तर—१. का० मे यहाँ और है . बीबीया जागी। कहनै लागी। बीबीया सहत अगा जागी। अफताबका किरन फूटत नही। सब बीबीया फरपनै लागे। २ ध० का० मे नही है। ३ ध० तबीबा तबीब लाग्या, का० तबबा तबीब (<तबीब) लागे। ४ का० मे नही है। ५ का० हरमा। ६. का० जागे। ७ का० तै। ८ का० इयु इंद्रका गर्ब भागे। ९ अ० मे इस अशकी क्रम संख्या भी दी हुई है और वह है '४२'।

अर्थ—प्रभात हुआ। वैद्य ही-वैद्य [उसके उपचारमें] लग गये और उन्होंने ओषधें ही-ओषधें माँगी। बीबी (बिवानां) के साथ सुलतान [भी] जागा। महलमें उसके आते (पधारते) ही इन्द्रका [भी] गर्व जाता रहा।

टिप्पणी—तबीब [फा०]=वैद्य

[४३]

षांन षांनजादे ।[1]
मलिक मलिकजादे ।
'मीयां मीयांजादे'[2] ।
'दरबार देषतइ दरिया का गर्ब वादे'[3] ॥[४,५]

पाठान्तर—१ का० मैं यहाँ 'मीर मीरजादे' और है। २ का० मे यह वाक्य-खण्ड नही है। ३ का० दरबार जुरे षरे है। ४ ध० मे इस वचनिकाका कोई वाक्य नही है। [उसमे यह छूटा हुआ लगता है, क्योकि उसी शाखाकी दूसरी प्रति का० मे यह है।] ५ अ० मे इस अशकी क्रम-सख्या भी दी हुई है, और वह है '४३'।

अर्थ—[उसके साथमें] खान और खानजादे, मलिक और मलिकज़ादे मियां और मियांजादे [इतने थे कि] उस दरबारको देखते ही समुद्रका गर्व चला जाता।

टिप्पणी—वाद् <वा = गमन करना।

[४४]

'तबीब तमांम सब सुलताण कोके'[2] ।[1]
'दानसवंद'[3] पानी अंजरणइ लागे' ।[४]
'मंत्रहु परजनइ लागे'[५] ॥[६]

पाठान्तर—१ का० मे यहाँ और है : तिस समय आवते पातिसाह इद्रका गर्व घटचा। उस राउ कै उभार घर दरबार उपड्या। ३ अ० दानसबंध। ४ यह वाक्य का० मे नही है। ५ ध० मित्रहुं परजरणे लागे। ६ अ० मे इस अशकी क्रम-सख्या दी हुई है, और वह है '४४'।

अर्थ—समस्त वैद्योंको सुलताननने बुलाया। दानिशमन्द [आ-आकर] अंजलियोंमें पानी लेने लगे और मन्त्रोंको [पढ़-पढ़कर उसे] पिलाने लगे।

टिप्पणी—कोक् <कोक्क् [दे०] = बुलाना, आह्वान करना। अंजरण = अंजलीमे लेना। परजण <पायन = पिलाना, पान कराना।

[४५]

जोइ 'दानसवंद'[१] आवइ पानी 'अंजरइ'[२] ।
'तिसही सुं'[३] पुकारइ ।
'अबे साहिबां'[४] 'नजरि' [५]साहिबां नजरि ।
ना जाणुं 'नमासा'[६] न जाणुं फजरि ॥[७]

पाठान्तर—१ का० दानसमंद, अ० दानसबंध । २. ध० अजरणे पिलावइ, का० अजरी भरै । ३ ध० किसही हुई हुई । ४ ध० का० मे नहीं है । ५. का० नजरि वे । ६ ध० का० निमासाम । ७ अ० में इस अंशकी क्रम-संख्या भी दी हुई है, और वह है '४५' ।

अर्थ—जो ही दानिशमन्द आता और अजलीमें पानी लेता, [शाहज़ादा] उसीसे पुकारता, "अरे, साहिबांकी नजर । साहिबांकी नज़र ! न मैं रात्रि जानता हूँ और न प्रभात ।"

टिप्पणी—नमासा<निवास = रात्रि । फजर<फज्र [अ०] = प्रभात ।

[४६]

'बार दुइ च्यारि यों ही पुकारयां ।[१]
'तब सुलतांण* रिसाणा' ।[२]
एक 'पुंगरा'[३] मेरइं 'हो पुराणा'[४] ।
'जमामसीति'[५] देषणइ गया था ।[६]
दरेस हु 'नजरि की दीया'[७] ।[८] [९]

पाठान्तर—१ का० मे नही है और अधिक है : सुलतान मुझ सूं कही मैं जमामसीत गया था वर । वेसैं किस ही नजर कीनी । २. ध० तब सुलतान रिसाया, का० सुलतान दरवेस ऊपरि रिसाने, अ० तब सुरताण रिसाणा । ३. का० पूगरी । ४. का० सो भी पुरानै । ५ ध० जमा मसीति बदिगीयोकी बदिगी । ६. का० मे यह वाक्य नही है । ७ ध० वरका दीया । ८. का० मे यह वाक्य नही है । ९. अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या नही दी हुई है—जो कि '४६' होनी चाहिए ।

अर्थ—दो चार बार [जब शाहजादेने] इसी प्रकार पुकारा, तब सुल्तान रुष्ट हुआ । [और उसने कहा,] "मेरा एक [ही] पुराना (प्रौढ़ सयाना)

बालक था। वह जुमा मसजिदको देखने गया था, तो दरवेशोने [उसपर] नज़र कर दी।"

टिप्पणी—पुंगरा (१) <पुद्गल + क = बालक, अथवा (२) <पौगण्ड = किशोर।

[४७]

'हाला कइ[१] मारणा न 'थी'[२]।
डीवो डांग षल्लरी 'न जाणुं कहां थी लीन्ही'[३]।
'दिल्ली सहर मइ ए ज घेरे'[४]।
'अबे फिरस्तइ फेरे'[५]॥[६]

पाठान्तर—१ का० हाल वै, ध० हलकै कउ। २ ध० था। ३ का० किसही की थी तो क्या हूवा, ध० न जाणा कही थी लीन्ही, अ० न जाणु कहा थी। ४-५ का० मे ये वाक्य नही हैं, ध० मे इनके स्थानपर है 'डिली सहर माहि फिरस्ते फिरस्ते फिरे। ६ अ० मे इस अंशकी क्रम-सख्या दी हुई है, और वह है '४७'। इसके बाद अ० मे सम्मिलित क्रम-सख्या नही दी हुई है, बीच-बीचमे आनेवाले दोहोकी स्वतन्त्र क्रम-सख्याएँ हैं।

अर्थ—[इस प्रकार] घेर करके उन्हे [मरे शाहजादेको] मारना नहीं [चाहिए] था। पता नही, डीवी (हाडी) डॉगी (यष्टि) और षल्लरी (थैली) उसने कहाँसे ले ली थी। दिल्ली शहरमे जब इन्होने [उसे] घेरा, [ये कहने लगे] "रे, यह तो फिरिश्तेने फेरा लगाया है।"

टिप्पणी—हाला <हाल [अ०] = कुण्डल, मण्डल, घेरा।

[४८]

[१]इतनइ 'करत'[२] बीबी बिवानां 'आई'[३]।
सुलतांण 'क्या रिसाई'[४]।
फकीर 'मारणा'[५] हइ कि जियावणा हइ'[६]।
[७]माल वारणा'[८] हइ।
साहिजादे के सिर उपर अवारणा[९] हइ।[१०]
'फेरणा हइ'[११]।

'फेरतइ फेरतइ षुदाइ रहम करइगा'[12] ।
षूब थी षूब होइगा'[13] ।
तबीब तमांम दूरि 'करउ'[14] ।
मेरे कुं 'सहम'[15] होइगा ।

पाठान्तर—१ का० मे यहाँ और है इतनी बात करतै बीच द्रवेस पकरि मगावै । २. ध० बात करतैं, का० बीच, अ० करत । ३. का० आए । ४. ध० तुम्ह क्या रिसाणा । ५ का० मारने । ६. ध० घोना ही, का० जीवावने है । ७. ध० मे यहाँ 'इहु' और है । ८ ध० षारणा, का० उवारना । ९. धका० उवारणा । १०. का० मे यहाँ और है . फकीरा मानु माल उवारना है । फकीरा नु माल बाटना है । ११-१२. का० मे नही हैं । १३. ध० सुलतान देना षूब हइ, का० षुदाइ षुदाइ षूबका षूब करैगा । १४. ध० रहो । १५. का० साहम ।

अर्थ—इतना ही करते (कहते) बीबी बिबानां आयी । [उसने कहा] "सुलतान, क्यों रुष्ट हुए [हैं] ? फकीरोंको मारना है या जिलाना है ? हमें [शाहज़ादेके ऊपर] द्रव्य वारना है, और शाहज़ादेके सिरपर वारना है, फेरना है [और वार-फेरकर उन्हें देना है] । [द्रव्य] फेरते-फेरते परमेश्वर कृपा करेगा । भले [कार्य] से भला होगा । सारे वैद्योको दूर करो । मुझे उनसे भय होगा ।"

टिप्पणी—माल [फा०] = धन, दौलत । सहम [फा०] = भय ।

[४६]

'अमा आणि आगइ षरी हुई'[1] ।
[2]साहिजा मुझइ जाणता हइ ।[3]
हां 'मां'[4] 'जांणता हूं' ।[5]
'फेरिवे दस लाष टके सिर उप्परइं' ।[6]
सुलताण 'दइंणा'[7] षूब हइ ।[8]
'षूब तइ षूब होइ ।'[9]
'साहिजा साहि कहां ।'[10]
पलिंग तइं उतरि 'करि'[11] 'सलांम कुं ताई हूआ' ।[12]
'तहां' ।[13]

'फेरिबे दस लाख टके उर (ऊँर) सिर उपरइं' ।[14]
'सुलतांण दइणां षूब हइ' ।[15]

पाठान्तर—१ का मे नही है। २ का मे और है : बीबी बिवाना बोली । ३. का० मे यहाँ और है : पहचानता है। ४ का० अमा । ५. ध० का० मे नही है। ६. का० मे नही है। ७. ध० दीया । ८–१०. का० मे ये वाक्य नही है। ११. का० भुइ आगुली घरी। १२. का० सलाम करणैकी त्यारी करी, ध० सलाम कू ताइ हूवा हइ, अ० सलाम कुं तई हूआ । १३. का० दिठ मूठी, ध० आवत ही। १४ का० भूत प्रेत डाकिनी शाकिनी कै धकै फरै । १५ का० मे नही है।

अर्थ—[तदुनन्तर शाहजादेकी] माता (बिवानां) आकर उसके आगे (सामने) खड़ी हुई । [उसने पूछा,] "राजकुमार, मुझे जानता (पहचानता) है ?" [शाहज़ादेने कहा,] "हाँ माँ, जानता (पहचानता) हूँ ।" [बिवानांने कहा,] दस लाख टके इसके सिरके ऊपर फेरने है। सुलतान, दान करना भला है । भले कार्यसे भला होता है ।" [फिर उसने शाहजादेसे पूछा,] "शाहजादा, शाह (सुलतान) कहाँ है ?" [इस प्रश्नको सुनकर] शाहजादा पलँगसे उतरकर सुलतानको सलाम करनेको उद्यत हुआ [और बोला,] "वहाँ" । [बिवानाने कहा,] "दस लाख टके और [इसके] सिरके ऊपर फेरने हैं । सुलतान, दान करना भला है ।"

टिप्पणी—खूब<खूब [फा०] = अच्छा, भला ।

[५०]

यों करतइं दिण 'गरथा'[1] राति पाई ।[2]
'जाणु'[3] 'साहिजादे की'[4] दूसरी वइरणि आई ।
'ओही हालु' ।[5]
जोई दानसवंद अवइ पांणी 'अंजरइ' ।[7]
तिस ही सुं 'यों कहइ'[8] ।[9]
'साहिबां नजरि साहिबां नजरि ।'[10]
न जाणु 'नमासा'[11] न जाणु फजरि ।[12]

पाठान्तर—१. ध० गिरथा । २. का० मे यह वाक्य नही है। ३. का० फिर । ४. का० साहिजादा कै । ५. ध० उही हाली, का० राति दिन तलफतै

विहाई। ६ ध० अजरै पिलावै। ७. का० मे यह वाक्य नही है। ८ ध० इंउ ही ज पुकारचा। ९. का० मे यह वाक्य नही है। १० का० मे यह वाक्य भी नही है। ११ ध० निवासाम। १२ का० मे यह वाक्य भी नही है।

अर्थ—इस प्रकार करते-करते दिन गला (गया) और [शाहज़ादेने] रात प्राप्त की, मानो शाहजादेकी दूसरी बैरिन आ गयी हो, जो ही दानिशमन्द आता [और] अजलीमें पानी लेता, उससे ही [शाहजादा] यों कहता, "साहिबांकी नजर ! साहिबांकी नजर ! न मैं रात जानता हूँ और न प्रभात !"

टिप्पणी—नमासा < निवास = रात्रि। फजर < फज्र [अ०] = प्रभात।

[५१]

यों करतइ रोज दुइ च्यारि 'गले'[1] ।[2]
'तबीबह'[3] हाथ 'धरे'[4] ।[5]
'सुलतांण'[6] षांन छंड्या।
'बीबी हुं'[7] 'रोवणां'[8] मांड्या।
'दीली मांहि सोर परचा'।[9]
'साहिजादे सुं सइतांण लरचा'[10] ।[11]
तबीब 'होते ते'[12] सुलतांण कोके।
'आणि दरबार रोके'[13] ।
'साहिजादे कुं'[14] 'जीयावणा'[15] ।
'कइ साहिजादे कइ साथि 'गोर मइ वाहणा'।[16]

पाठान्तर—१. ध० गिरे। २ का० मे यह वाक्य नही है। ३ का० तबीब थे तिसनै, अ० तबीबह। ४ ध० झारे, का० डारे। ५. का० मे और है : सजनके उर जारे। ६ अ० सुरताण। ७ का० बीबीया। ८ ध० रोज। ९ का० दीली बीच सोर जागे। १० का० साहिजादे कै सिर कु तान लागे, ध० साहिजादा कुं सइतान लरचा। ११ यहाँ अ० मे और है एक कहत बे सइताण मारणा। एक कहत बाबा आदम बिगोया। 'सइतान' वाली उक्ति तो पूर्ववर्ती वाक्यमे आ ही गयी है, केवल 'एक'के स्थानपर 'सइतान' की सख्या 'बे' = दो हो गयी है। १२ ध० तमाम सबका सब। १३. का० मे नही है। १४. ध० साहिजादा। १५. का० जीलावना। १६ ध० कइ साहिजादा स्यु सब घोरि वाहणा, का० नही तो तबीबा कुं साथि घोरमे वाहिना।

अर्थ—इस प्रकार करते-करते दो-चार दिन गले (व्यतीत हुए) और वैद्योंने हाथ रख दिया। सुलतानने खाना छोड़ दिया और बीबी (बिचारी)ने रोना प्रारम्भ किया। दिल्लीमें शोर पड गया कि शाहजादेसे शैतान लड पड़ा है। जो भी वैद्य थे, सुलतानने उन्हे बुलाया और दरबारमें उन्हें रोककर कहा, "तुम्हे शाहजादेको जिलाना है, अथवा शाहजादेके साथ [मुझे] तुम्हे भी कब्रमें झोंकना है।"

टिप्पणी—तबीब [फा०] = वैद्य। कोक<कौक्क = बुलाना, आह्वान करना।

[५२]

[1]दावल 'कुं'[2] तीनि रोज 'हुए षाणा षायां'[3] ।
साहिबां ढढणी सु 'कहे'[4] ।[5]
दूहा। साहिवा वाक्य।
'ढढ्ढणि या'[6] णीको करी नीकीय[7] 'नारी देषु'[8] ।
नारी 'अत्थि'[9] 'तदोष कुं'[10] 'नत्थि'[11] 'तदोष न लेषु'[12] ॥

पाठान्तर—१ का० मे यहाँ और है : एतै बीचि दावल कै घरि ढाढणी गई। साहिबा बोली ढढणी सु कह्या। २. का० का। ३ ध० भए षाणा षाया, का० भए षाणइ षाया, अ० हुए। ४. ध० कह्या। ५ का० मे और है : ढढिणी बोली मैं क्या जाणु, ध० मे और है : कम वावा कू तीनि रोज भए षाणा षाया। हूं क्या जाणूं। ६ ध० ढढणि या, अ० ढढणि आ। ७. ध० षरी। ८ का० नीकीय नारी देषि, अ० नीषीय नाडी देषु। ९ ध० हत्थ, का० हाथ। १० त्रिदोष कुं, अ० तदोषु को। ११ ध० नत्थ। १२ का० त्रिलोष न लेषि।

अर्थ—[यहाँ] दावर (न्यायकर्ता)—दानिशमन्दको [साहिबाकी अस्वस्थताके कारण] खाना खाये तीन दिन हो गये, तो ढाढिनीसे साहिबाने कहा : "ऐ ढाढिनी, तूने यह अच्छा किया [कि तू आ गयी]। अब [मेरी] नाडी भली [भाँति] देख। नाडी त्रिदोष [होने] के लिए है अथवा नहीं है, और क्या तै त्रिदोष नहीं देख रही है?"

टिप्पणी—दावल<दावर [फा०] = न्यायकर्त्ता। तदोष<त्रिदोष।

[५३]

[1]"ओहि ओहि इह तउ उलटी कही'[2]।[3]
'तबीब'[4] नंही। 'तबीब की'[5] जाई नही।
'ढढणि कहि रहि साहिबां बोली'[6]।
'देषि रि दिषुं'[7] 'दिलमै दिल'[8] आया।
नारी [9]'दुइ जाइगहइ हइ'[10]।
'साहिजां की साहिबा की'[10]।

पाठान्तर—१ का० मे यहाँ और है : 'ढढणि वायक। वचनिका। २. ध० ताही तइ उलटी कही, का० मे यह वाक्य नही है। ३. का० मे और है : साहिबा हुं। ४. का० तबीबनी। ५ का० तबीबनी• की मै। ६. का० ढढणी हु साहिबा कह्या, ध० साहिबा वाक्य। ७ ध० देषु देषु, का० देषि देषि। ८ ध० दिल मैं दिल, का० दिल मै, अ० दिल मु ं दिल्ल। ९ का० दोइ जागह हुई, ध० हुइ(<दुइ) जाइगहगइ हइ। १०. का० मे नही है।

अर्थ—ढाढिनीने कहा, "वाह वाह, यह तो [तूने] उलटी कही! मैं न वैद्य हूँ और न वैद्यकी सन्तान हूँ।" ढाढिनी कह चुकी तो साहिबा बोली, "देख री, मै देख रही हूँ कि [मेरे] दिलमे [एक और] दिल आ गया है, [जिससे] नाडियाँ दो जगहोंपर [चल रही] है : [एक] राजकुमारकी है और [दूसरी] साहिबाकी।"

टिप्पणी—तबीब [फा०] = वैद्य।

[५४]

दूहा[1] ।। ढढ्ढणि 'ढोरी अंषियां'[2] साहिबा संमुहियांह।
'तइ'[3] तत्ता 'षांन न (ज?) षाइया'[4] दज्झइ 'साहि'[5] 'हीयांह'[6] ।।

पाठान्तर—१ अ० मे यहाँ और है : 'ढढिणी वाक्य'। २. का० ढोरै अंषरी। ३. ध० का० मे नही है। ४ ध० षाण न षाइया, का० षाणा षाइयो। ५ का० समुझि। ६ ध० हिया।

अर्थ—ढाढिनोने साहिबाके सम्मुख आँखें मटकायी [और कहा] "जो तूने गर्म खाना खाया उसीसे शाहज़ादेका दिल दग्ध हो (जल) रहा है।

टिप्पणी—ढोर् <ढोल् = ढुलकाना, चलाना समुह <सम्मुख = सामने आया हुआ। तत्त <तप्त = गर्म। दज्झ् <दह् (?) = दग्ध होना।

[५५]

[1]ढढिणी 'बोली'[2]।
'हम'[3] 'तबहीं'[4] पाई।
जब 'की'[5] सहण 'क्यां सिराई'[6]।
'हमारा क्या (कह्या ?)[7] तूं' पराई।[8]
'इतनी'[9] 'करतइ कपरे फेरे'[10]।
'दीदहि सुं'[11] दीदे जोरे।
साहिबां साहिजा 'जीवइगा'[12]।
'अर दिल्ल मइं की दिल क्या होइगा'[13]।
इह दिल जोरां ही रहइगा जोरा* ही जाइगा''[14]।

पाठान्तर—१. का० मे यहाँ और है चउपाया। २ ध० वाक्य, का० वायक। ३. का० हमहू तौ। ४ का० तबहीका। ५ ध० मे नही है, का० तू। ६. ध० का सिरि आई, का० कीया सिरहि आई। ७ का० हमारे क्या, ध० हमारा क्या है। ८ का० मे और है दीदार सु दीदार लाई। ९ ध० का० इतनी बात। १०. का० कहै वीचि ढढनी कपरे परे। ११ का० दीदा। १२. ध० दाइगा। १३-१४ का० मे नही हैं। १५ का० इया हजूरी ही महबत पावेगा, अ० जोरी (<जोरा) ही जाइगा।

अर्थ—ढाढिनीने कहा, "मैंने यह तभी पा (भाँप) लिया था जब [शाहज़ादेके आनेपर] तू सहनके सिरेपर आयी और मेरे करने (कहने ?) पर तू वहाँसे भागी।" इतना करते-करते (कहते-कहते) [ढाढिनीने] कपड़े पहने और वैद्याका वेष धारण किया। नेत्रोंसे नेत्र मिलाये और कहा, "साहिबा, शाहजादा जीवित होगा, किन्तु [तुम्हारे] दिलमें से [उसका] दिल क्या होगा ?" [साहिबाने उत्तर दिया,] "यह दिल [शाहजादेके दिलसे] जोडा (जुडा) हुआ ही रहेगा और जोड़ा (जुडा) हुआ ही [संसारसे] जायेगा।

टिप्पणी—सहन [फा०] = आगन । सिराय् = सीझना । पराय् <पलाय् = भागना।

परतीति पाई ।
'तबीब'[1] का भेष करि ढढिढ़णी सुलतांण 'कइ' दरबार आई[2]
'तबीबांनि तबीबांनि' पुकारी ।[3]
'जीउ का जाणुं,'[4] क्या स नर क्या स नारी ।
'अवाज्यां बाजी'[5] ।[6]
'लष'[7] दउरे ।
'हत्थइ हत्थ'[8] लीनी जहां साहिजादा कुतबदीन गाजी ।[9]
देषतइं पांणी 'अंजरि'[10] पहर एकइ पुकारचा ।[11]
'इओही'[12] साहिबां णजरि 'साहिबा'[13] णजरि ।
'न जाणुं'[14] 'नमासा'[15] न जाणु' फजरि ।[16]

पाठान्तर—१. का० तबीबणी । २ ध० मे नही है, का० कइ घरि । ३ ध० तबीबानू तबीबानू करि, का० तबीबणी तबीबणी करि । ४ ध० जीव का जानू, का० जीव का जीवन जाणु' । ५. ध० अवाजवा, का० आवाज आवाज जागे । ६ का० मे और है उषदा (उंषदा) उंषद मगे । ७ का० लष एक । ८. का० हाथै हाथ, ध० हाथइ हाथ । ९ का० मे यहाँ और है : तहां बैदनी कु ले गया ताजी । १०. ध० अंजरि पिलाया । ११ का० में वाक्य है : साहिजादा देषते ही पुकारचा । १२. ध० का० मे नही है । १३. का० वे साहिबा । १४. का० बे न जाणु' । १५. ध० निमासाम, का० निमासा । १६. अ० मे यहाँ और है 'यो ही पुकारचा' ।

अर्थ—[इस प्रकार साहिबाकी] उसने प्रतीति प्राप्त कर ली, तो ढाढिनी बैद्याका वेष [धारण] कर सुलतानके दरबारमें आयी । "बैद्या, बैद्या" उसने पुकारा । "मैं जीवका [भी] जीव जानती हूँ, वह चाहे नर हो अथवा नारी हो ।" [जब ये] आवाज़ें बजीं (हुईं), लाख [आदमी] दौड़ पड़े । [उन्होंने उसे] हाथो-हाथ लिया और [उसे] वहाँ ले गये जहाँ शाहजादा कुतुबुद्दीन ग़ाजी था । अंजलीमें पानी [लिये हुए ढाढिनीको] देखते ही वह एक पहर तक पुकारता रहा, "इओही, साहिबाकी नज़र ! साहिबाकी नज़र ! न मैं रात्रि जानता हूँ और न प्रभात जानता हूँ ।"

टिप्पणी—गाजी < ग़ाज़ी [अ०] = धर्मरक्षक । इओही—एक उद्गार वाचक अव्यय । नमासा < निवास = रात्रि । फजर < फज्र [अ०] = प्रभात ।

[५७]

'ढढ़िढणी'[१] बोली ।
'साहिजादे दीदे न भरु'[२] ।
'लज्या न डरु' ।[३]
कीया सु करु ।
'क्या करहिगा मरु'[४] ।
'हथ देषुं'[५] ।

दोहा ॥ नारि (नारी) नारि सुहत्थियां नारी नारि सुहत्थ[६] ।
'साहिजादइ साहिबां हीयां'[७] 'दुउ'[८] लग्गिया 'सनत्थ'[९] ॥[१०]

पाठान्तर—१ का० वैदनी । २ का० साहिजादा दिल भर । ३ का० लज्या न करि, अ० भजी (<लज्जी) न डरु । ४. ध० क्या करोगे, का० क्या करूंगी । ५ ध० मेरा हाथ देषु, का० देषु मेरे हाथ । ६ का० सु हत्थि । ७ ध० का० साहिजादइ साहबीया । अ० साहिजादे साहिबा हीयं । ८ ध० का० दुह । ९ का० सुनत्थ, अ० समत्थ । १०. का० मे और है

साहिजादा साहिबा विरह जो जीवदा जाहि ।
लजा लोइ उलघणा सिरि परि पेरो साहि ।

अर्थ—ढाढिनीने कहा, "शाहजादे, आँखें न भरो ! लज्जाको मत डरो ! जो कुछ [कार्य] तुमने किये हैं, वे ही [पुनः] करो । मृतक क्या करेगा ? हाथ [तो] देखूँ !" [और नाड़ी देखकर उसने कहा,] "[इसके] सुन्दर हाथोंमें नारीकी नाड़ी है, और [इसकी] नाड़ी नारीके सुन्दर हाथोंमें है । शाहज़ादा और साहिबा दोनोंके हृदय भली-भाँति नथकर परस्पर लग (जुड़) गये हैं !"

टिप्पणी—मरु < मडय < मृतक = मुर्दा, अथवा < मड < मृत = मरा हुआ ।

[५८]

[१]साहिजादा बोल्या 'बुझाइयां'[२] बुझाइयां ।
'साहिजादे किणि बुझाइयां' ।[३]
'जिणि'[४] लगाइयां 'तिणि बुझाइयां'[५] ।
अब 'उस सुं'[६] क्या 'करण आइयां*'[७] ।
[८]तबीबइ रोग जाण्या ।[९]

'रोगीई'[10] रोग मान्या।
'साहिजादे दीदे देषणइ लागे'[12]।
'तबीब के रोर भागे'[13]।
'पंच सइ सोने के टके षोरइ मि लाओ'।[14]
'फुरमाण हूआ जीइ तउ 'जिलाओ'[15]।[16]

पाठान्तर—१. का०मे 'वचनिका' और है। २. ध० का० बुझाइया बे, अ० बुझाईया बुझाईया। ३. ध० साहिजादा कउणइ बुझाइया। अ० साहिजादे किणि बुझाईया, का० मे वाक्य नही है। ४. ध० जिणही, का० जिणहि। ५. ध० का० तिणही बुझाइया, अ० तिणि बुझाईया। ६ अ० सु। ७. अ० करण आईया ध० का० करणा। ८. ध० मे 'इसा' और है। ९. का०मे यह वाक्य नही है। १०. ध० रोगीयें। ११ का० मे यह वाक्य नही है। १२. का० साहिजादा मुप बोलणै लागा। १३. का० तबीबनी का रोर भागा, ध० तबीब का रोर भागा। १४ का० पाँच सै टका सोनैका मँगाया। १५. अ० जिलाउं (<जिलाउँ)। १६ का० मे यह वाक्य नही है।

अर्थ—शाहजादेने कहा, "बुझा दिया! बुझा दिया!" [ढाढिनीने पूछा,] "किसने बुझाया?" [शाहजादेने उत्तर दिया,] "जिसने लगाया, उसीने बुझाया। अब उससे क्या करने आयी हो?" वैद्याने रोग जान लिया, और रोगीने रोगको स्वीकार कर लिया। शाहज़ादेके नेत्र देखने लगे, [इसलिए अब] वैद्याकी परेशानी दूर हुई। [बीबी बिवानाने कहा] "पाँच सै सोनेके टके उपहारमें लाओ।" उसका फरमान हुआ, "जिये तो जिलाओ।"

टिप्पणी—रोर<रोल [दे०] = कलह, झगड़ा, बखेडा। खोर<खोड = राजकुलमे देने योग्य सुवर्ण आदि द्रव्य।

[५६]

'ढढिढणी बोली'।[1]
जउ सब कोउ कुसादे 'होउ'[2] तउ 'कछू' कहुं।[4]
सद कइ एक फुरमाणं 'लहुं'[5]।[6]
फुरमांण साहि फुरमांण बीबीयां। बोलणा हइ सु बोलि।
पाछइ का 'कीजइ तबीबियां नु'[8]।[9]
जउ कछू 'बीयायां'[10] बजावइ तउ कछू हम गावइ'[11]।[12]

'साहिजादा जिलावइ'[13] ।[14]
तमासा एक अबही 'दिखावइ'[15] ।[16]
महल 'हतइं'[17] 'ढोल कई मंदिरि मांगी' ।[18]
'जवान हुवांगी' ।[19]
'स्वर'[20] हूआ 'सोर'[21] छूट्या ।[22]
'तबीबइ ओतरइ लागी' ।[23] ।
'दूहा ज्युं कह्या त्युं साहिजादा उठ्या'[24] ।[25]

पाठान्तर—१ का० तबीबनी कहणै लागी । २ घ० होहि । ३ घ० कछु एक । ४ का० मे इस पूरे वाक्यके स्थानपर है : साहिजादा चगा होइगा तब मै ल्युगी । अब मैं सब पाया । साहिजादा मुष बुलाया । ५ का० पाऊं । ६. का० मे यहाँ और है : लोक सब कुसाद कराऊ । ७ का० मे यह वाक्य नहीं है । ८. घ० कीजेगो तबीबिया । ९ का० मे यह वाक्य नही है । १० घ० बीबी । ११ घ० तो हूं गावउ । १२. का० मे यह वाक्य नही है । १३. घ० साहिजादा कउ जिलावउ । १४. का० मे यह वाक्य नही है । ७, ९, १२, १४. इन वाक्योके स्थानपर का० मे हैं . तब सुलतान हुकम कीया । बीबीयानै दौरि सब कुसाद कीया । साहिजादैका फुरमान पाऊ । तौ ढोल मजीरा हुडक मंगाऊं । ज्यु कुछ एक गांऊ । १५ घ० दिषावउ, का० दिषाऊं । १६ का० मे और है : साह फुरमाण एक पाया । १७ घ० मैं, क० मैथी । १८. का० ढोल मजीरा मगाया । १९. घ० जुवान हू जगे, अ० ज्वान हुवागी, का० में यह वाक्य नही है । २० का० सुर । २१ उंर सुर । २२ का० मे और है : पडदा बंधाया । २३ घ० तबीब ऊतरे, का० तबीब ऊबरे । २४. घ० दूहा कंह्या, का० तबीबणी दूहा गाया हुडक वागी । २५ का० मे और है : साहिजादै की नगर लागी ।

अर्थ—ढाढिणी बोली, "यदि सब कोई [शाहजादेसे] दूर हो [जाओ], तो कुछ कहूँ । यह अवश्य है कि [उसके लिए] एक फ़रमान पा जाऊँ ।" [कहा गया,] "शाहका फ़रमान है, और बीबी (बिवानां) का फ़रमान है । तुझे जो कहना है, वह कह । पीछे वैद्याको क्या कीजिए ?" [ढाढिनीने कहा,] "यदि बीबी (बिवानां) कुछ बजाये, तो मै कुछ गाऊँ; शाहजादाको जीवित करूँ और अभी एक तमाशा दिखाऊँ । महलसे ढोल अथवा मर्दल मँगाइए और जबानसे भी स्वर निकालिए ।" स्वर हुआ तो शोर समाप्त हुआ । वैद्या [गीतके साथ] उतरने लगी और ज्योंही उसने दूहा कहा, शाहजादा उठ बैठा ।

टिप्पणी—मंदिरि < मर्दल = मृदग । जवान < जुबान [फा०] = जिह्वा ।

[६०]

दोहा ॥ ढढ्ढणि 'ढोर समुदीया'[१] मुख मुदिया 'न' जीव ।
साहिब साहि 'कुतब्बियां'[3] गुण बंधिया 'सुनीव'[४] ॥[५]

पाठान्तर—१ का० दौर समदीया । २ का० सुनि । ३ का० तबीबिया । ४. अ० सुनीम । ५ अ० मे यहाँ '१' की क्रम-सख्या भी दी हुई है ।

अर्थ—[उसने गाया,] "द्वारसमुद्रकी यह ढाढिनी मुद्रित मुखके साथ (इस तथ्यको उद्घाटित किये बिना) नही जी सकती है कि साहिबा और शाहज़ादा कुतुबुद्दीन [परस्पर] गुणोंके व्याजसे बँध गये है ।"

टिप्पणी—ढोरसमद<द्वारसमुद्र . धुर दक्षिण भारतका एक प्रसिद्ध स्थान । नीव<णिव्व [दे०] = व्याज, बहाना ।

[६१]

'लज्जा गउ गुण आगुणी धण लज्जा बउहार' ।[१]
'लज्जा गउ जुय'[२] जोवणां साहि 'सुणंदा'[3] सार ॥[४]'

पाठान्तर—१ ध० लज्ज गयइ गुण अवगुणइ धण लज्जइ बहु बार, का० लजा गो मुष गुणीयणा घण लजा व्यवहार, अ० लज्जी गउ गुण आगुणी धण लज्जी बउहार । २ ध० लजा गये जु, का० लजा गयो ज, आलज्जी गउ जुय जोवणा । ३. का० समदा । ४. का० मे यहाँ निम्नलिखित छद और है :

जीवंदा सब कुछ मिलै गज अस नर नायक ।
मूयां हमारा क्या चलै साहजादा वायक ॥
जो दिन्हा दिल मुझ कु सो दिल हदा जान ।
मैं तिस बाझू बिसारहूँ आषै साहि सुजान ॥

इनके अतिरिक्त का० मे यहाँपर ऊपर आया हुआ ६० संख्यक दूहा दुहराया हुआ है । [ऐसा ज्ञात होता है कि ये दो छंद हाशियेमे उक्त दोहेके सामने लिखे हुए थे, और इन्हे मूलमे सम्मिलित करते समय वह दोहा एक तो पहले लिखा ही गया था, दुसरी बार इन अतिरिक्त छन्दोको उतारनेके बाद पुनः लिख उठा । इसलिए ये छन्द प्रक्षिप्त ज्ञात होते है ।] अ० में यहाँ '२' की क्रम-सख्या भी दी हुई है ।

अर्थ—"लज्जामें इस गुणीका गुण गया (चला जाता है), लज्जामें स्त्री-का व्यवहार गया (चला जाता है), और लज्जामें दोनों (स्त्री-पुरुष) के यौवन गये (चले जाते है), शाहज़ादा यह सार तत्त्व ही बात सुन रहा है।"

टिप्पणी—ववहार < व्यवहार। आ = यह। जुय < युग = दोनो।

[६२]

साहि घरां साहिबियां जिणि 'दिण्णियां'[१] 'सु जाणि'[२]।
'वइ पुज्जइं दिल लम्भीयां' [३]'कउण'[४] करंदा 'काणि'[५] ॥[६]

पाठान्तर—१ का० दीनीया, ध० दिन्निया। २ ध० का० सुजाण। ३ का० वेय पुजइ दिन लभई, ध० वय पुज्जय दिन लभिया। ४ का० कोणि। ५ ध० काम। ६ अ० मे यहाँ '३' की क्रम-सख्या भी दी हुई है।

अर्थ—[शाहज़ादेने कहा,] 'शाहजादेके घटमें जिस सुजान [स्त्री] के द्वारा साहिबाको स्थान दिलाया गया है, उसको पूजने [प्रसन्न करने] से मैंने [अपना] दिल प्राप्त कर लिया है, [तो] कौन [अब] लज्जा कर रहा है?"

टिप्पणी—घर < घट = शरीर। काणि = लज्जा, मर्यादा।

[६३]

मइ 'सउणा'[१] सुणि 'दिष्षिया'[२] आज 'अणंदी'[३] 'वेलि'।[४]
'साहिबियां'[५] 'सर मझ्झरां'[६] हंस करंदा केलि ॥[७]

पाठान्तर—१. ध० का० सुहणा। २ ध० दिट्ठीया। ३. ध० आणिंदी ४ ध० वेल। ५. का० साहिबा। ६. ध० सर मुझरा, का० सर मझरे। ७ अं० मे '४' की यहाँ क्रम-संख्या भी दी हुई है।

अर्थ—[ढाढिनीने कहा] "मैने शकुनों (या स्वप्नों) को सुनकर [स्वयं] देखा है, आज वेला (या वल्लरी) आनन्दित हुई है [जब कि] साहिबाके [हृदय] सरोवरमें [शाहज़ादा] हंस केलि कर रहा है।"

टिप्पणी—सउण < शकुन स्वप्न। वेलि < वेला। वल्लरी। मझ्झरा < मध्य।

[६४]

जे मुत्ताहल दिट्ठियां 'तइ तन'[1] 'मंझरियां'[2] ।
'ते तइ ही हसि हंसरा वइ वर गंजरियांह'[3] ॥[4]

पाठान्तर—१ का० तेतत । २ ध० वझरीयाहि । ३ ध० ते ताही सुर हसरा उंअइ गुण मजरीयाहि, का० मे यह पक्ति नही है—भूलसे छूटी हुई लगती है । ४ का० मे यह दोहा नही है—किसी प्रकार छूटा हुआ लगता है । अ० मे यहाँ '५' की क्रम-सख्या भी दी हुई है ।

अर्थ—[और] जिस मुक्ताफल (मोती) [की कान्ति] को तूने [उस] शरीर [लता] में देखा था, "ऐ हंस, वह तूही है जिसने उसे वपन कर [अब] नष्ट भी कर दिया है ।"

टिप्पणी—मुत्ताहल <मुक्ताफल = मोती । मंझर <मध्य । वर <वरम् । गज् = आहत करना, नष्ट करना ।

[६५]

[1]साहिब साहिब्यां बिरह, जइ जीवंदा जाइ ।
'लज्जा लीक उलंघणी'[2] सिर परि पेरो साहि[3] ॥[4]

पाठान्तर—१ अ० मे यहाँ और है : साहिबजादा वाक्य । २. अ० लज्जी लोक उलघणा । ३. का० मे यह दोहा नही है—किसी प्रकार छूटा हुआ लगता है । ४. अ० मे यहाँ '६' की क्रम-सख्या भी दी हुई है ।

अर्थ—[शाहज़ादेने कहा,] "शाहज़ादा यदि साहिबाके विरहमे जीता जा रहा है तो [केवल इस कारण कि] उसे लीक (मर्यादा) के उल्लंघनकी लज्जा है और, [उसके] शिरपर [उसका पिता] फ़ीरोज़शाह है ।"

टिप्पणी—लीक <रेखा ।

[६६]

ढढ्ढिणी बोली । तउ 'मूए'[1] 'हमारा क्या चलइ'[2] ।
'साहिजा वाक्य'[3] ।

जिण हीजीय'[४] जहमतीयां सोई 'हूआ'[५] तबीब।
सोई 'लज्जा'[६] रक्खिहइ 'जादे'[७] साहि नसीब ॥[८]

पाठान्तर—१ घ० तू मूआ। २-३ घ० मे ३ तथा का मे २-३ नही है—किसी प्रकार छूटी लगती हैं। ४ घ० जिण हीजी, का० जिणि दीनी, अ० जां होजीय। ५ घ० का० भय। ६ अ० लज्जी। ७ घ० तेडे, का० जोडे। ८. अ० मे यहाँ '७' की 'क्रम-सख्या' भी दी हुई है।

अर्थ—ढाढिनीने कहा, "तब मूए, मेरा क्या [बस] चले ?" शाहज़ादेने कहा, "जिसने [मेरी] जहमतको हरण किया है वही मेरा वैद्य हुआ है। जो शाहजादेको 'नसीब' देता है, वही उसकी लज्जा भी रखेगा।"

टिप्पणी—हिज्ज् < हृ = हरण करना। नसीब [फा०]–भाग्य, प्रारब्ध।

[६७]

'सुणतइं ही लल्ले कीए'[१] लोयण 'जल हल थल्ल'।[२]
'केपण लग्गे'[३] अंग वल 'एण सुणदा हल्ल'[४] ॥[५]

पाठान्तर—१. घ० सुणतइ ही ललते कीये, का० सुणत समे ही लल कीया। २. घ० लोयग जल हलत्थल्ल, का० लोयग जलहर थाल। ३. का० इयु कपिया ए। ४. का० कुण हवदा वल। ५. अ० मे यहाँ '८' की क्रम-संख्या भी दी हुई है।

अर्थ—यह [उत्तर] सुनते ही [ढाढिनीने उसकी] मनुहार की, [उसके] लोचन [अश्रुओंके] जलाशय हो रहे। किन्तु इन हालोंको सुनकर [ढाढिनीके] अंग [अनिष्टके भयसे] काँपने लगे।

टिप्पणी—लल्ल < ललिल [दे०] खुशामद, मनुहार। लोयन < लोचन। जलहल < जल भर = जल-समूह। थल्ल < स्थल = स्थान। वल < वले [फा०] किन्तु, परन्तु।

[६८]

[१]जीवंदा कहि गाईया 'अब'[२] कंपीया तबीब।
बीबी बीहन पूछीया क्या बातीयां 'निसीब'[३] ॥[४]

पाठान्तर—१. अ० मे यहाँ और है : बीबी विमाणा वाक्य । २ ध० अत्र, का० तब । ३ ध० नसीच । (<नसीब), अ० तबीब [यह पूर्ववर्ती चरणमे आ चुका है] । ४. अ० मे यहाँ '९' की क्रम सख्या भी दी हुई है ।

अर्थ—बीबी बिवाना ने पूछा, ' ऐ वैद्या, तूने [शाहज़ादेको] 'जीवित' कह कर गाया, और अब काँप रही है । 'नसीब' में क्या बातें हैं ।"

टिप्पणी—निसीब<नसीब [फा] = भाग्य, प्रारब्ध ।

[६९]

[1]बीबी 'बीहण'[2] वत्तडी मइं जाणीया निसीब ।
साहिजादे दिल अउर दिल 'यों'[3] बोलीया तबीब ॥[4]

पाठान्तर—१ अ० तबीब बोल्या, का० तबीब वायक । २. ध० ऊहत, का० बहुते । ३ ध० इम, का० इयु । ४ अ० मे यहाँ '१०' की क्रम-संख्या भी दी हुई है ।

अर्थ—[बैद्याने कहा,] "ऐ बीबी बिवानां, बात यह है कि मैं [इसके] 'नसीब'को जान गयी । शाहज़ादेके दिलमें [एक] ओर दिल है ।"

टिप्पणी—अउर<अपर = अन्य ।

[७०]

सो दिल 'दिल अज्जइ'[1] मिलइ तउ मिलि मंगल 'गाउ'[2] ।
'नत साहिर्जा न साहिबां'[3] 'जं'[4] धावणा 'सुधाउ'[5] ॥[6]

१ पाठान्तर—ध० जउ दिल मइं, का जो दिल मै । २. का० गायो । ३. ध० नहि तरि साहिब साहिबा, का० नातर साहिब साहिबां । ४. का० जो । ५. ध० ध्यावणा सु ध्यावो, का० धावणा सुधाणो । ६. अ० मे यहाँ '११' की क्रम-सख्या भी दी हुई है ।

अर्थ—"वह दिल और [यह] दिल आज ही मिल जायें, तो [सब] मिलकर मंगल गान करो; नहीं तो न राजकुमार [रहेगा] और न साहिबा [रहेगी] ; क्योंकि दौड़ना-धूपना है, [भले ही] दौड़-धूप करो ।"

टिप्पणी—जं<यत् = कि, क्योकि ।

[७१]

'असि अस माणा'[1] तर तरुणि जोमी जीवण 'पूरि'[2]।
दावल दाणस पुंगरी दीदे 'दीठिहुं मूरि'[3]॥[4]

पाठान्तर—१. का० अस समान। २ का० पूर। ३ ध० दुहू मूर, का० दिट्ठेह मूर। ४ अ० मे यहाँ '१२' की क्रम-संख्या भी दी हुई है।

अर्थ—"[इन] तरुण और तरुणिने एक-दूसरेको ऐमी और ऐसा माना [है] कि जैसे जीवनकी पूर्ति (सफलता) हो। दावर (न्यायकर्त्ता) दानिशमन्दकी कन्याके नेत्र [इसके] नेत्रोंके मूल हो रहे है।"

टिप्पणी—माण् <मानय् = सम्मान करना, आदर करना, अनुभव करना। तर<तरुण। पूरि<पूर्ति। पूगरी<पुद्गल + इका। पौगण्ड + इका = बालिका। किशोरी।

[७२]

'जमा जमी'[1] ति मसीतियां दुहु दिट्ठया रसाइ।
'नदरि'[2] ज 'लम्भइ'[3] 'नदरि'[2] कुं 'नदरि'[2] 'पुकारत'[4] जाइ॥[5]

पाठान्तर—१. का० जिमे जमां। २ ध० का० नजरि। ३ ध० सु लगी, का० ज लागी। ४. ध० पुकारइ, का० पुकारे। ५. अ० मे यहाँ '१३' की क्रम-संख्या भी दी हुई है।

अर्थ—"उन्होने जमा-जमी (स्थिरता) के साथ तो [एक-दूसरेको] मसजिदमें प्रेम-विभोर होकर देखा। और नज़र जब [अन्य] नज़रसे मिलती है तो वह 'नज़र', 'नजर' पुकारती [ही] जाती है।"

टिप्पणी—नदरि<नजर [फा०] = दृष्टि।

[७३]

'इती बात करतइ बीबियां ऊठी'।[2]
सुलतांण पासि गई 'छूटी'[3]।
सुलतांण साहिजादा 'आसिष हूआ'[4]।
'जुवाणिहिं जोग जूआ'[5]।

'लाजतुं सोचणा हूआ' ।[6]
वेगि 'आणहु नत' [7]मूआ ।
जहमतियां 'हमइं'[8] सो धी ।
मिलावणा 'तुमहं'[9] को धी ।
'फुरमांण हूआ' ।[10]
'जहमतियां'[11] क्या 'जाणइ' ।[12]
जिमी 'आकास तल' होइ तउ 'हम आणइ' ।[14]
बीबियां बोली ।
दावल 'दानसवंद कइ'[15] 'आगलि बिछाओ'[16] उँली (औली) ।
'सुलतांण'[17] मानी । दीन दुणियां एक 'ठउड होत जांणी'[18] ।

पाठान्तर—१. का० मे 'वचनिका' और है । २ ध० इतनी बात करत बीबी बाणा उठी, का० उतनी बात करतइ बीचि बीबी बिवाना उठी । ३ का० अपूठी । ४. का० आसिक हूवा, अ० आसिष हूआ । ५ ध० मे यह वाक्य नही है, का० जुवानहु जोग हूवा । ६ ध० मे यह वाक्य नही है, का० लाजनु सोचनै हूआ, अ० लाजहं सोचणा हूआ । ७. ध० आणउ नही तरि, का० आनि नही तर । ८ ध० हमाउ, का० हमह । ९. ध० तुमहूं । १० ध० का० में नही है । ११. ध० जहमतीया हमहू, का० जहमतीया हम । १२. का० जाना । १३. ध० असमान वीचि । १४ का० सो आना । १५. का० दानसमंद की, अ० दाणस बंध कइ । १६. ध० आगै बिछायो, का० आगै बिछाई । १७. ध० सुलतान मान्या, का० तब सुलताण बात मानी । १८. ध० होता जाण्या, का० ठौर होती जाणी ।

अर्थ—इतनी बातें करते-करते बीबी (बिवानां) उठी । सुलतानके पास वह छूटी (भागी) हुई गयी । [उसने कहा,] "सुलतान, शाहज़ादा आशिक़ हुआ है, वह युवतीके योग्य युवा [हो गया] है । हमें लाजोंसे (के कारण) सोचना हो गया है । शीघ्र आओ, नही तो मरा । शाहजादेकी जहमत [तो] हमने शोध ली है, और [उसे दूर करनेके लिए] मिलानी है तुम्हें कोई कन्या । फ़रमान हुआ, "ज़हमत हम क्या जानें (हमारे लिए 'जहमत'का क्या सवाल)? पृथ्वीपर और आकाशके नीचे कहीं भी (वह) हो, तो हम उसे लायें ।" बीबी (बिवानां) बोली, "दावर (न्यायकर्त्ता) दानिशमन्दके आगे औली बिछाओ ।" सुलतान मान गया और [उसने] दीन (दानिश-

मन्द) तथा दुनिया (सुलतान) को एक स्थानपर होता (एक सम्बन्धमें बँधता) [निश्चित] जान लिया।

टिप्पणी—आसिष <आशिक [अ०] = प्रेमी, अनुरक्त। धी <दुहिता = कन्या। जिमी <ज़मीन [फा०] = पृथ्वी। ऊली (औली) [दे०] = कुल—परिपाटी। ठउड [दे०] = ठौर, स्थान।

[७४]

'पावइं पाव सुलताण-दरबारि 'आया'।[१]
'पाछइ साहा सुषासण चउडोल डोली असपती अंस चढ़ाया'[२]।
दावल 'दरबार सोर हूआ'[४]। सुलतांण 'आया'[५]।
'सुकराणा सुकराणा करता सामहा धाया'।[६]
'सुलताण कह्या इउं कीया'[७]।
बे दावल साहिज़ादा जीइया।
दावल 'बोला'[८]।
सुलतांण के बषत 'बड़े'[९]।
दुनी के दीदे ऊघरे।
'इयारह के हाए'[१०] भरे।
दुसमणां के दिल 'जरे'[११]।
'सुलतांण'[१२] षैर करणा।

पाठान्तर—१ घ० सुलतान पयादा हूआ दरबार आया, का० मौहला माहि तै पातिसाह पावु पावु दरबार आए। २ घ० पीछै सुषासण दोलीया असपती अस चढाए, का० पीछै नै पालषी सुषासण चौडोल धाए। ३. का० मे यहाँ और है : जब सुल्तान महलमें थी वागा पहनि नीकल्या तब देसतै इषका गरब गल्या। इंद्र षानजादे। मलक मलकजादे। दरबार देखते ही इंद्रका गरब मिटाना। असपति सुलतान अैसै चढीया। तब च्यार चक भंगाना पडा था। [यह वर्णन सुलतानके पैदल चलकर आनेके साथ ठीक नही बैठता है, यह तो किसी चढाईका लगता है।] ४. का० कै ताई षबर हुई जु। ५ का० आए। ६ घ० सुकराणा सुकन करता सामहा धाया, का० तब दावल सुकराणा

सुकराणा करते साम्हे धाए। ७ का० आय करि सलाम कीया, ध० सुलतान तुम्हां क्या कीया। ८ का० दावल बोल्या, ध० मे यह वाक्य नही है। ९ का० सबरे। १० का० यारा के दीदे, ध० याराहाके दिल। ११. ध० जुरे। १२ का० सुलताण 'कछु'।

अर्थ—पैदल ही सुलतान [दावर के] दरबार आया और शाहके पीछे सुखासन, चौडोल, डोली तथा अश्वपतिका अश्व—[यह सब] चढ़ आये। दावरके दरबारमें शोर हुआ कि सुलतान आया। [दावर] 'शुकराना' 'शुकराना' करता हुआ दौड़ा। उसने कहा, "सुलतान, तुमने यह क्या किया (कि यहाँ तुम पैदल आये) ?" [सुलतानने कहा,] "रे दावर, शाहज़ादा जी गया।" दावर बोला, "सुलतानके भाग्य बड़े हैं! [शाहज़ादेके जीवित होनेसे] दुनियाके नेत्र खुल गये, मित्रोंके हृदय भर गये और दुश्मनोंके दिल जल गये! सुलतान दान-पुण्य करना!"

टिप्पणी—सुकराणा < शुक्रान [अ०] = कृतज्ञता-ज्ञापक पुरस्कार। यार [फा०] = मित्र, सहायक।

[७५]

'अमहुं 'षइर'[१] करी'।
'तुमह षइर करणा'।[२]
साहिबां 'साहिजादे कुं'[३] वरणा।
[४]'ऊताल'[५] ही मंडप छवावउ।
'अषत'[६] पढावउ।
'सादा नइ बजावउ'।[७]
षूब षूब होइ 'त्यु' करावउ'।[८]
[९]'दावल बोल्या'।[१०]
'जु फुरमाण दीना'।[११]
इती 'बात कुं'[१२] सुलतांण क्या समीना।[१३]
तुमुं तरकसबंद 'अर'[१४] ईयार बाणइ।[१५]
'दुनिया दाणसबंद बड़े बषाणइ'।[१६]

पाठान्तर—१. अ० एइर। २ का० मे ये दो पंक्तियाँ नही है, और इनके स्थानपर है : सुलतान बोल्या। ३. ध० साहिजादा स्यु। ४ का० में और है :

दावल बोल्या। हजरत सलामत मुझ कू वोलावते तो तब ही आवता पाए। इतनी बात कुं क्या तुम्ह आए। पातिसाह दावलके वषाने। य्हा आइ तुम्ह पीर जाने। ५. ध० का० इताल। ६ का० अषित। ७. का० सादा ने बजावउ, अ० सादा नइ बजावउ। ८ का० तो ओरता मगावौ, अ० पूबइ होइ त्यु करावउ। ९ का० मे और है: बीयाहनके गीत गवावौ। १०-१६ का० मे यह अंश नही है। १२ ध० वातइ। १४. ध० हूं यार।

अर्थ— [सुलतानने कहा,] 'मैने दान-पुण्य किया। तुम [भी] दान-पुण्य करना। साहिबाको शाहजादेसे वरण करना है। शीघ्रतासे मण्डप छवाओ, और अक्षत पढ़ाओ। बाजोंको बजवाओ। [जिससे] 'ख़ूब' 'ख़ूब' हो, वही कराओ। दावर बोला," "जो [सुलतानने] फ़रमाया, इतनी बातके लिए, सुलतान, क्या खेद ?" [बादशाहने कहा,] "[तो] सेना (सैनिक), तरकश-बन्द और ऐयार बाने धारण करे, [जिससे] दुनिया दानिशमन्दको बड़ा बखाने।"

टिप्पणी—ख़ैर<ख़ैरात [अ०] = दान-पुण्य। ऊताक<उत्तावल [दे०] = उतावली, शीघ्रता। समीना<सम्म<श्रम = खेद (?)। तुम<तुमन = सेना। ईयार<ऐयार [अ०] = छद्मवेषी [सैनिक]।

[७६]

इतनी बात करतइं मंडप 'छावणइ'[१] लागे।[२]
'गायणे गावणइ लागे'[३]।
'नर ततइं नीसाण दग्गे'[४]।
'सज्जणा जग्गे'[५,६]।
'वेलिया बधाय गूडी'।[७]
'नर ततइं नफेरी मंडी'।[८]
'भेरी भूंगल भीमं नढी'।[९]
'सहणाइ तंढी'।[१०]
[११]'जंझि मंदिर नाइ संगा'।[१२]
'तंति'[१३] तुंबर राइ रंगा। 'वाजिया ढप ढोल ढंगा'।
• 'ढाहिया ढंगा'[१४]।

सेहरा ढढ़िढ़नी सु गाणइ ।
साहिजादे सु 'वषाणइ' ।[16]
तुंग तोरण 'करस ठाणइ' ।[17]
नेहरा 'ठाणइ'[18] ।
[19]बीबियां संगि साहिजादा ।
आइ दावल 'दरहि'[20] वादा ।
निहसियां नीसाण नादा ।
नारियां नादा ।

पाठान्तर—१ ध० छवावणइ । १—४ का० मे नही है—छूटे हुए लगते हैं, ४. ध० मे भी नही है । ५. का० सजन बोलनै लागै । ६. का० मे और है साद्याने वागे । ढोल = ढोल हुडक ढक्का । ७ का० मे यह वाक्य नही है, अ० वेलि आवधराइ गुडी । ८ का० मे नही है, अ० नर ततइ नफेर मडी । ९. ध० भीम तुडी, का० भीतरंगा । १० ध० सरणाई तुडी, का० सहणाई नफेरि भृंगा । ११ का० मे और है : मृदग तालरि उपंगा । १२. का० झंझ मदिर न्याय । १३. का० तंत । १४ ध० ढाहियइ ढंगा, का० मे यह तथा इसके पूर्वके दो वाक्य नही हैं और अधिक है निरत नीसान वगा । सोवतावासि जंगा । १५. का० मे और है : अनेक राय रग गाया । ढढिणी सेहरा सुनाणा [किन्तु पीछे यह शब्दावली पुनः आती है] । १६ का० कुं वषाणो । १७. का० सकल जाणौं, अ० करस ठाणइ । १८ ध० चाणइ, का० गाणै । १९. का० मे यहाँ 'बहुत' और है । २० का० दरबारह ।

अर्थ—इतनी बातें करते ही [लोग] मण्डप छाने लगे और गायक गाने लगे । लोगोंने तदनन्तर निशान दागे, [जिससे] स्वजन जाग पड़े । वेलियाँ (बन्दनवार) और गुड़ियाँ (पताकाएँ) बाँधी गयीं । तदनन्तर लोगोंने नफ़ीरी माँडी । भेरी और भूँगल भीम रवके साथ निनादित हुए, और शहनाई उच्च स्वरमें बज उठी । झाँझ, मर्दल और साथमे नागसुर, तन्त्री, तथा तुम्बुरुने राग रँगे । डफ, ढोल, और ढंग बज पड़े । [इस तुमुल निनाद-से] ढंग ढह गये । ढाढिणी सेहरा (मौरका गीत) गाती है, और वह राज-कुमारको बखानती है । ऊँचे तोरण तथा कलश वह स्थापित करती है और नेहरा ठानती है । बीबी (बिवानां) के साथ शाहजादा आकर दावरके द्वारपर पहुँच गया । निशानों और नारियोंके नाद [कानोंको] धर्षित करने लगे ।

टिप्पणी—गायन = गायक । तत <तत = तदनन्तर । सज्जण <स्वजन । नफेर <नफीरी [अ०] = तुरही या क़रनाय । तंढ <तंड [दे०] = उच्च स्वर

का । मंदिर<मर्दल=मृदंग । नाइ<नाग = नागसुर । ढग=ढाँग, टीला । सेहरा<शेखरक=मौर । वखाण्<वक्खाण्<व्याख्यानय्=वर्णन करना । तुंग<उत्तुङ्ग । दर [फा०]=द्वार । वाद्<वा = गमन करना । निहस्< णिहस्<नि+घृष् = घर्षण करना । नीसाण<निशान [फा०]=धौसा ।

[७७]

सेहरउ दूहा[1]

साहिब 'सा हत्थइ हीया'[2] हत्थइ साहिब साहि ।
'वेरू'[3] मंडप मंडिया ढढ्ढणि 'वरन्यइ* काहि'[4] ।।[5]

पाठान्तर—१ अ० सेहरउ दोहा, ध० सेहरइ दुहा, का० सेहरा दूहा । २ का० साह स हथ कीया । ३ का० वारू । ४ ध० वयन कहाइ, का० वरण कीयाह । ५ अ० मे इस प्रसगमे आने वाले दोहोकी स्वतन्त्र क्रम-संख्याएँ है, जिनमे-से इसकी है '१' ।

अर्थ—सेहरा दूहा--'शाहजादेके हाथमें साहिबाका हृदय है और साहिबाके हाथमें शाहजादेका । द्वारपर मण्डप माँडा गया है, ढाढिनी किसे वर्णन करे ?''

टिप्पणी—वेर<द्वार=दरवाजा ।

[७८]

'वर'[1] सिर सोहइ सेहरा वरणी 'सिरि'[2] सिंदूर ।
जांणे 'सझ सुमष्षिया सिंधु सपत्ता'[3] सूर ।।[4]

पाठान्तर—१. अ० व । २ का० सिर । ३ ध० का० सभि (सभ-ध०) समुषिया सिध तपदा (नपदा—का०) । ४ अ० मे इसकी क्रम-सख्या '२' है ।

अर्थ—"वरके सिरपर मौर शोभित है, और वधूके सिरपर सिन्दूर है, मानो सन्ध्याके समक्ष पहुँचा हुआ सूर्य सिन्धुमें सम्प्राप्त [हो रहा] है ।"

टिप्पणी—सेहरा<शेखरक = मौर । सुमष<समक्ष = सामने । सपत्त< सम्प्राप्त ।

[७९]

वर कर 'वीर'[1] अंगूठियां वरणी कर 'करि'[2] लाल।
'जाणे'[3] हीयइ हिलगियां काम 'स कढ्ढइ'[4] साल ॥[5]

पाठान्तर—१. का० बे। २ का० कर। ३ का० जानिक। ४. ध० सुकढण, का० करदा। ५ अ० मे इसकी क्रम सख्या '३' है।

अर्थ—"वरके करोंमे सुन्दर अगूठियाँ है, और वधूके करोंमें लाल कडियाँ (चूडियॉ) हैं, [जो ऐसी लग रही हैं] मानो [किसीके] हृदयसे हिलगकर काम अपने शल्य निकाल रहा हो (कामने अपने शल्य निकाले हो)।

टिप्पणी—वीर<विल्ल [दे०] = अच्छ, स्वच्छ, विलसित। करि<कडय + इका<कटक + इका = कडी, वलय, चूडी।

[८०]

'आसिर अषत भणंदीया'[1] 'सेष सुणंदा सार'[2]।
जांणे 'जलहर वुट्ठियां 'सारसु कीया* सुढार'[3] ॥[4]

पाठान्तर—१ ध० असिर अषित पढि दीया, का० आसा अषित पढिया। २ का० साहि सुणदा सोर। ३ ध० सरसु कया सुढार, का० सरस कीया न ठोर। ४ अ० मे इसकी क्रम सख्या '४' दी हुई है।

अर्थ—आशीर्वादका अक्षत कहने हुए शेख सार (सुन्दर) [सेहरा] सुन रहा है। [यह सेहरा ऐसा लग रहा है] मानो जलधर बरसे हो [जिससे सुखी होकर] सारसोंने सुन्दर शब्द किया हो।

टिप्पणी—आसिर<आशिष = आशीर्वाद। वुट्ठ<वृष्ट = बरसा हुआ।

[८१]

वाए वज्जण 'वज्जणा'[1] सज्जणां मिलि 'सचोल'[2]।
आसा पूरण 'साईयां'[3] 'पइ'[4] ढढिणिया 'के'[5] बोल ॥[6]

पाठान्तर—१ का० वाज्जीया। २ का० सुबोल। ३. ध० पाइयां। ४ का० पय। ५ का० का। ६. अ० में इसकी क्रम-सख्या '५' दी हुई है।

अर्थ—"बजनियोंने बाजे बजाये और सजन तथा सगोत्री मिले। सातिशय आशा पूरी हुई और ढाढिनके बोल प्राप्त (पूरे) हुए।"

टिप्पणी—वाय् <वादय् = बजाना। सचोल <स + चोल्लक = साथ-साथ भोजन करनेवाले। साइ <साति = सातिशय। पइ <पत्त <प्राप्त।

[८२]

'साहिब साहि'[1] घरं दीयां तरह 'सलग्गी'[2] वेलि।
जे जे 'रत्ति उकत्तियां'[3] 'काल्हि कहंदी केलि'[4]॥[5]

पाठान्तर—१ ध० साहिब सार, का० साहिबा साहि। २ का० सुलग्गी। ३ का० रतोकतीया। ४ का० काल्ह करती केल। ५ अ० मे इसकी क्रम-सख्या '६' दी हुई है।

अर्थ—"साहिबाने उसे शाहज़ादेके घटमें दिया, तो वह [प्रीति] वेली लग गयी। जो-जो अनुराग [पूर्ण केलि] की उक्तियाँ है, उन्हे मैं कल कह रही हूँ (कहूँगी)।"

टिप्पणी—घर <घड <घट। तरह <तरिहि <तर्हि = तो, तब। रत्ति < रक्त = अनुरागपूर्ण।

[८३]

'फजरि हूअंदा साहि दर गई'[1] गुण रष्षणहार।
'मलिणीयां र'[2] तबीबियां ढढिणी तीजी वार॥[3] [4]

पाठान्तर—१ का० फजर हुवदी साहिबा गया। २ का० मालन होइ, अ० मल्लिणीया। ३ का० मे निम्नलिखित दोहे इस प्रसगमे और है

देनि कुकम देह भू वलि मोतीया वधाई।
वारू मडप छाईया ढढणि बाहर गाइ॥
साहिजादा साहबीया झालि करदा कोल।
साहजादा आया इहा ढढणीया दे बोल॥

(तुल० ७७.२, ८२ २ तथा ८१ २)।

४. अ० मे इसकी क्रम-संख्या '७' दी हुई है।

अर्थ—प्रभात हो रहा था और यह गुणी स्त्री (ढाढिनी) शाहजादेके द्वारपर गयी, [पहली बार यह] मालिन थी, [फिर] वैद्या थी और तीसरी बार ढाढिनी थी।

टिप्पणी—फजरि<फज्र [अ०] = प्रभात।

[८४]

ढढिणियां क्या गाया।[१]
हलकइ 'हालि अलापिया'[२] हलकइ 'हुरक बजाइ'[३]।
जे 'रति सुट्ठि सुगुट्ठीया'[४] 'ते सु कहंदी गाइ'[५]॥[६]

पाठान्तर—१ का० ढढणी कुछ गावौ। २. का० राग अलापही। ३. का० हुडुक बजाव। ४ ध० रत सुठ सुगुठीया, का० राति सुट्ठु सुवाटीया। ५. का० में छूटा हुआ है। ६ अ० मे इसको क्रम-सख्या '८' दी हुई है।

अर्थ—ढाढिनीने क्या गाया ? हलके ही हिलकर (हिलते हुए) उसने आलाप की और हलके ही हुडुक बजाकर [वर वधूकी] जो रति (अनुराग) की सुष्ठु गोष्ठी हुई, उसे गाकर वह कह रही है।

टिप्पणी—सुट्ठि<सुष्ठु = शोभन, सुन्दर। गुट्ठी<गोष्ठी।

[८५]

प्रथम पलिंगा साहिबां साहि 'दिहंदा वयण'[१]।
अंबर हदा 'इंदला'[२] 'इह अउर उगंदा'[३] गयण ॥[४,५]

पाठान्तर—१ ध० गहदा पैणि, का० गयदी रयण। २. का० इदुला। ३ ध० ज्यो र उगदा, का० उर गयदा। ४ का० मे और है

साहिजादा साहिबा सरिस प्रमुदित बोले बाणि।
दुषा हदा सचीया सुष फलदा [.... ....]॥
[तुल० छद ८६]

५. अ० मे इस छदकी क्रम-सख्या दी हुई है, और वह है-'९'।

अर्थ—"साहिबाके पर्यंकमें आकर प्रथम ही राजकुमार यह वचन दे (कह) रहा है '[उधर] आकाशका चन्द्रमा है, तो यह दूसरा [मेरे] आकाशमें उग रहा है'।"

टिप्पणी—वयण <वचन। इदला <इन्दु = चन्द्रमा। गयण <गगन = आकाश।

[८६]

झलहल 'झालंदे'[1] नयण साहि 'गहंदा पाणि'[2]।
दुष 'छिणंदा सिचणा'[3] सुष्ष 'फलंदा जाणि'[4]॥[5]

पाठान्तर—१ का० कदे। २. ध० गहंदा पैण, का० गयदा पाण। ३ का० विणदा सचणा। ४ ध० का० थियदा जाण। ५ अ० मे इस छदकी क्रम-सख्या दी हुई है और वह है '१०'।

अर्थ—"नेत्र [प्रसन्नतासे] झलमल-झलमल कर रहे हैं और शाहजादा साहिबाका हाथ पकड रहा है, मानो [वृक्षका] दुःखपूर्ण सींचना अब छिन्न (समाप्त) हो रहा है, और [उसमें] सुखका फल [लग] रहा है।"

टिप्पणी—जाणि <मानो।

[८७]

के दिन केही केलियां के दिन केही केलि।
दरिया 'हिया' तरंगिया 'कउण गिलदा पेलि'[2]॥[3, 4]

पाठान्तर—१. का० केर। २ ध० कि न गिलदा पेल, का० कुन गनदा-केलि। ३ का० मे और है

साहिजादा साहबीया लब्धा सुप कहति।
दरिया चसै तरगी को तस पार लहति॥
[तुल० छद ८७]

४. अ० में इस छन्दकी क्रम संख्या दी हुई है, और वह है '११'।

अर्थ—किसी दिन किसी प्रकारकी केलि और किसी दिन किसी प्रकारकी केलि [थी]। समुद्र तथा हृदयकी तरंगोको कौन खेलमें गिन (?) सकता है?

[८८]

जादे जा दिन 'अग्गला'[1] साहिब सा दिन रूप।
'सइंमुह सोम बिलग्गीया'[2] 'तो न बुझदा'[3] धूप ॥[4]

पाठान्तर—१ का० आगला। २. ध० सामुह सोम विलग्गीया, का० सोमे सोम विलवीया। ३ का० कोन कढदी। ४ अ० मे इस छन्दकी क्रम-सख्या दी हुई है, और वह है '१२'।

अर्थ—शाहजादेके जो [यौवनके] अगले दिन हैं, साहिबाके वे ही रूपके है, फलत. शतमुख (सूर्य ?) [शाहज़ादा] सोम (चन्द्र) [साहबा] से [कितना भी] लिपट रहा है तो भी उसकी धूप (मिलन-लालसा) मिट नही रही है।

टिप्पणी—सइ < सय < शत = सौ।

[८९]

[1]इतनी बात करतइं 'उह रितु'[2] गई।
'अउर'[3] रितु फजर भई।[4]
'मुरग हुं बाग दई'।[8]
'गाइण'[5] हु ललित कई।[6]
'तारहु का'[7] तेज छई।
सुविहाण अंबर 'दई'।[9]
[9]वसंत 'रितु' [10] पाछी भई।
'धूपकाला कहल'[11] लई॥

पाठान्तर—१ का० मे यहाँ और है . वचनिका। कोककी कला परवीन साहिजादा। तिसकै कामका उवादा। रोज ३।४ गैर महल रहीया। तब साहिजादा साहिजादै कु कहीया। बहुत गुनीजन मिलै है। बहुत करी है आसा। एक बार महला दईयै साहिजादा देषीयै तमासा। २ का० अहोराति। ३ ध० उह। ४. का० यह वाक्य नही है। ५. का० गायना। ६ का० में और है तीजै रोजकी फजर भई। ७ ध० तारु, का० तारन। ८ ध० का० लई। ९. का० मे और है ' गुनी जन गुनि धुनि लई। साहिबा साहिजादे की बलाइ गही। १०. का० रुति। ११. ध० धूप काल हलहल, का० धूप काए कलहल।

अर्थ—इतनी बातें करते वह [रात की] ऋतु गयी और दूसरी ऋतु प्रभातकी हुई। मुर्ग़ेने भी बॉग दी। गायकोंने भी ललित [रागिनी] की। तारोंका भी तेज—क्षय हुआ। आकाशने सुप्रभात दिया। वसन्त ऋतु पीछे हुई और धूपकी ऋतुने कहक (दाहकता) ग्रहण की।

टिप्पणी—अउर<अवर<अपर = अन्य। फजर<फज्र [अ०] = प्रभात। गायण<गायन = गायक। कहल = दाहकता।

[९०]

इतनी वात करतइं साहिजादह कुमकुमइ 'विरपे'[१] भराए।[२]
'बारि ऊंछह'[३] लगाए।[४]
'अबीर हु धर वणाए'।[५]
'कपूर कस्तूरी भूषण भराए'।[६]
'फूलहुं वितन तणाए'।[७]
'गायणहुं गाए'।[८]
एकइं 'योग'[९]।[१०] 'एकइं भोग'[११]।[१२]
'न जाणीइं साहिजादे कुं क्या सु 'रोग'[१३] ॥[१४]

पाटा·तर—१. घ० वरष। ३ घ० वारुहछाह। ९. घ० जोगइ। ११. घ० भोगइ। १३ घ० रुचइ। २, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १४ का० में इन समस्त वाक्योके स्थानपर है : साहिजादै हुकम कीया। समीयाने तनावौ। छिरकाव करावौ। गिलमा विछावौ। सिंहासन वयावौ। सादाने बजावौ। सब गुनीजन बोलावौ। अपनी-अपनी कला है सो ले ले आवौ। साहिजादा मौज तूठा। लाख लाख दान वूठा। कसतूरी कपूरा अरगजा चदन बनावौ। चोवा जवाद के भुवन भरावौ। खाक की जाहिगा अबीर मगावो। मुखमल कतीफा। जरबाब सु महल बनाना। आछै जरकसी समीयाना ताना। मोतीया चौक पूराना। साहिजादै कुं लैत भुवाना। जरी जराव का पहरीया वागा। एक एक नग लाष लाष केरा। कटि मेखला जर कपुर बषानै। आप है नवग्रह सधि रास जानै। साहिबा साहजादै अरगजै भीनै है। रग सुरगी उढणी साहिजादी—नी है। ता भीतर नाग सरस लटकती वैनी है। चपल दीदे जाके कटित्थभ करते है। पच बान साहिजादै कु मेलूबे देते है। सहजादा नै महला दीया है। गुनी जन जय जयै सबद कीया है। कोटि कमल वने। मेघ घटा घने। बारह आदीत

उगा। इंद्रका पारिषा पूगा। गुनी जन बोलवा लागे। छत्रीस वाजित्र वागे। [इन वाक्योंकी शब्दावली और उक्तियाँ कुछ यहाँकी और कुछ बादमे आनेवाले प्रसगकी है।]

अर्थ—इतनी बातें करते शाहज़ादेने कुमकुमे और वरषे (सिल्हक) भराये, जलके उत्स लगाये। धरापर अबीर भी बनायी (रचायी)। कपूर और कस्तूरी-के आभरण भराये। फूलके वितान तनाये। गायकोंने भी [गीत] गाये। एकने योगके, एकने भोगके, [इस विचारसे कि] शाहज़ादेको न जाने क्या रुचिकर हो।

टिप्पणी—वरष < वरक्ख < वराख्य = गन्ध-द्रव्य-विशेष, सिल्हक। ऊछ < उच्छ < उत्स = झरना। गायण < गायन = गायक। रोग < रोअग < रोचक = रुचिजनक।

[९१]

'इतनी वात करतइं दुइ नटिणी आइ षरी हुई'।[1]
'एक जोगिणी का स्वांग कीयै'[2] 'एक भोगिणी का'।[3]
'दोउ दूहे कहे'[4]।

पाठान्तर—१ का० इतनै वीचि दोइ नटकी आई। २ का० एकै जोगिनी-का भेष कीया, झ० एक जोगिणीका स्वाग। ३ घ० एक भोगणीका स्वागका लीयै, का० एकै भोगिनीका भेष कीया। ४ का० मे इसके स्थानपर है . जाकै सूधै भीनी चोली।

अर्थ—इतनी बाते करते दो नटनियाँ आकर खडी हुईं : एक योगिनीका स्वाँग किये हुए और एक (दूसरी) भोगिनीका। दोनोंने दूहे कहे।

[९२]

'पढमां ची'[1] सिंगारी 'बोली'[2]।
[3]साहिजादे। लोयण ते 'लोइँदिए'[4] जे 'दिट्ठां ही पिट्ठ'।[5]
'पाधर'[6] 'सर जिम कड्ढीइं'[7] नेह 'समट्ठा* निट्ठ'[8]॥[9]

पाठान्तर—१ घ० प्रथम चइ, का० प्रथम पढम। २. का० बोली है। ३. का० मै 'भोगिनी वायक' और है। ४ घ० लोयदीया। ५. को० दिट्ठाइं

पिठि। ६ अ० पीधर (पाधर), का० पवर। ७ का० सर जन कढिए। ८. ध० समिट्ठा निट्ठ, का० समिट्ठा निट्ठि अ० समठा निठ। ९ अ० मे इस प्रसगके दोहोकी स्वतन्त्र क्रम-सख्या दी हुई है, और इस दोहेकी क्रम-सख्या है '१'।

अर्थ—पहले-पहल शृंगारी (भोगिनी) बोली, 'शाहज़ादे, लोचन तो वे देखते हुए होते है, जो दीखते ही प्रविष्ट हो जाते हैं, और जो स्नेहसे ऐसे भली-भाँति समर्थ (पुष्ट) होते हैं कि उन्हें निकालना शरोंको सीधा निकालने-जैसा होता है।

टिप्पणी—ची ही (दे० 'दक्खिनी हिन्दी' पृ० ५३)। लोय्<लोच् = देखना। पिट्ठ<पइट्ठ<प्रविष्ट। पाधर<पद्धर [दे०] = सीधा। समट्ठ<समर्थ।

[६३]

जोगिणी 'बोली'[१]।

> लोयग ते लोयंदीइ जे 'लोअंदे'[२] जग्ग।
> 'अप्पा'[३] काम कमच्छलां 'बहु देषंदा'[४] कग्ग॥[५]

पाठान्तर—१ का० वायक। २ ध० लोयदीया जे लोइदे, का० लोयदीया जे लोयदा, अ० लोयदीइ जे लोअदे। ३ का० आपा। ४ का० बह देषदे। ५. अ० मे इस दोहेकी क्रम-सख्या है '२'।

अर्थ—योगिनी बोली, "लोचन वे देखते हुए होते है जो जगत् [की वास्तविकता] को देखते [होते] है। अपने कर्म्म और कर्म छलको बहुतेरे काग भी देख रहे होते हैं।"

टिप्पणी—अप्पा<आत्म। काम<कर्म्म। कग्ग<काग।

[६४]

भोगिणी 'बोली'[१]।

> लोयण ते 'लोइंदीइ'[२] जे पेम सु 'वुट्ठइ धार'[३]।
> रीझडिआं झड 'मंडि कइ'[४] 'सव्वसु'[५] अप्पणहार[६]॥

पाठान्तर—१. का० वायक। २ ध० जोअंदीया का० लोयंदीया। ३ का० वुट्ठार। ४ का० मडीया। ५ ध० सरवस, अ० सरवरैसु। ६ अ० मे इस दोहेकी क्रम-सख्या है '३'।

अर्थ—योगिनी बोली, "लोचन वे देखते हुए होते हैं, जो प्रेमकी धारा बरसते हैं, और जो रीझनेपर झड़ी बाँधकर [अपना] सर्वस्व अर्पित करनेवाले होते है।"

टिप्पणी—वुट्ठ < वृष्ट = बरसा हुआ। अप्प < आत्म। सव्वसु < सव्वस्स < सर्वस्व।

[९५]

जोगिणी बोली।

लोयण ते 'लोइंदीए'[1] जे 'लोइंदे'[2] अप्प।
तीन्ही तिन्नि' अवत्थडी कउ ण करंदा 'वप्प'[4]।।[5]

पाठान्तर—१. ध० का० लोयदीया। २ का० लोयदा। ३ ध० तिन्ही नन्ह, का० तिन्हा विण। ४ का० अप्प। ५ अ० मे इस दोहेकी क्रम-सख्या है '४'।

अर्थ—योगिनी बोली, "लोचन तो वे देखते हुए होते है, जो आप (आत्म) को देखते हैं। उनकी तीन ही अवस्थाएँ—जाग्रत, स्वप्न और तुरीय—होती हैं, और वे कभी [अपने आपको] ढँकते नही हैं—(सुषुप्तिको नहीं प्राप्त होते हैं)।

टिप्पणी—अवत्थ < अवस्था। कउ < काउ = कदापि। वप्प् < त्वच् (?) = ढँकना, आच्छादित करना।

[९६]

भोगिणी बोली।

लोइण ते 'लोइंदीए'[1] जे अणरत्तां 'ही'[2] रत्त।
'दीया'[3] देह 'स दज्झीया'[4] तोइ पडंदा पत्त।।[5]

पाठान्तर—१ ध० का० लोयदीया। २ ध० का० मे नही है। ३ ध० दीवइ, का० दीवै। ४ ध० सु झपीया। ५ अ० में इस दोहेकी क्रम-सख्या है '५'।

अर्थ—मोगिनी बोली, "लोचन तो वे देखते हुए होते है जो [मादक द्रव्यादिसे] अनराते ही राते होते हैं, जो [उन पतिंगोकी भाँति होते हैं] दीपकसे [जिनका] देह दग्ध हो गया है, तो भी [जो दीपकके पास] पहुँचकर उसमें पड़ते ही हैं।"

टिप्पणी—रत्त < रक्त = अनुरक्त, लाल। पत्त < प्राप्त।

[९७]

जोगिणी बोली।

> लोयण ते 'लोइंदीए'[1] जे जुग 'जोइ अरत्त'[2]।
> माया 'ओढण'[3] भुल्लिया जांणि कलाली मत्त[4]॥

पाठान्तर—१ ध० का० लोयदीया। २ का० जोई रत्त। ३ का० माया ढढणो। ४. अ० मे इस दोहेकी क्रम-सख्या '६' है।

अर्थ—योगिनी बोली, "लोचन तो वे देखते हुए होते हैं जिन्होंने जगत्-को अ-रक्त [भावसे] देखकर मायाके [आकर्षणपूर्ण] ओढ़न (परिधान) को उसी प्रकार भुला दिया [है] जैसे कलाली [मदिरासे] मत्त व्यक्तिको [भुला देती है]।"

टिप्पणी—जुग < जगत् = ससार। कलाल < कल्यपाल = मदिरा बेचने-वाला।

[९८]

भोगिणी बोली।

> लोइण ते 'लोइंदीए'[1] जे 'अंबा'[2] ही अब्ब।
> 'ज्युं हीउ पाउस रंगीया'[3] 'ताइ'[4] मिलंदा सब्ब॥[5]

पाठान्तर—१ ध० का० लोअदीआ। २. का० अबा। ३. ध० ज्युं ही उसु रगीया, का० जु ही पाउसु रगीया, अ० ज्यु ही पीउस(<पाउस) रंगीया। ४. ध० तोइ, का० तइ। ५ अ० मे इस दोहेकी क्रम-सख्या '७' है।

अर्थ—योगिनी बोली, "लोचन तो वे देखते हुए होते हैं जो अंभस् (जल) वाले बादलों [के समान] होते हैं, जो जैसे ही पावस उनका हृदय रँग देता है, वैसे ही वे [बरसनेके लिए] समस्त रूपसे मिल रहते (जाते) हैं।"

टिप्पणी—अंबा <अभस् = जल । अब्ब <अभ्र = बादल। पाउस < प्रावृट् = वर्षा। ताइ <तदा।

[९९]

जोगिणी बोली।

> लोइण ते 'लोइंदीए'[1] जे जाणि परंदा गत्त।
> को घरीयां घर लग्गीयां रत्ता तोइ अरत्त॥[2,3]

पाठान्तर—१ ध० लोयदीया। २ का० मे इस दोहेके स्थानपर है :

> लोयण ते लोअदीया माया माहि अग्ग।
> पोयण जलहर ऊपरै तोइ न भीजैं अग॥

३. अ० मे इस दोहेकी क्रम-सख्या '८' दी हुई है।

अर्थ—योगिनी बोली, "लोचन तो वे देखते हुए होते हैं, जो गत (गए) से जान पड़ते होते हैं। किसी घड़ी यदि वे घर (गृहस्थी) से लगे भी हुए होते हैं तो उससे रक्त [ज्ञात] होते हुए भी वे [सचमुच] अ-रक्त होते हैं।"

टिप्पणी—गत <गत = गया हुआ।

[१००]

भोगिणी बोली।

> लोइण ते 'लोइंदीए'[1] जे रंगइ करियांह'[2]।
> 'बीकर'[3] 'बाजि न चड्डही'[4] ज्युं 'गज बंगरियां'[5]॥[6]

पाठान्तर—१. ध० का० लोयदीया। २ का० जे रगइ करीया, अ० ने रगइ करियाह। ३. का० बीयकरि। ४ ध० बाज न चढही, का० बाज न चडई। ५. अ० च बगरीयाह। ६ अ० मे इस दोहेकी क्रम-सख्या '९' है।

अर्थ—योगिनी बोली, "लोचन तो वे देखते हुए होते है जो एक मात्र रंग (प्रम) करते है, जैसे [घोड़ेपर चढनेवाला] घोड़ेको बेचकर विकृत अंग वाले हाथीपर नहीं चढ़ता है।"

टिप्पणी—वीक् <विक्क् <वि + क्री = बेचना। वंगर<वग<व्यङ्ग = विकृत अगका।

[१०१]

[1]इतिनी बात करतइं साहिजादे कुं 'ठढ'[2] लागी।
'निवासा हुउणइ लागी'[3]।
'दाणसवंद'[4] साहिजादी सुं साहिजादइ कह्या।
साहिबा 'आसा आण'।[5]
'आए' [6]पग 'पाण'[7]।
'अबीर 'महि'[8] मुझइ भरम 'होइ'[9]।
न जाणीयइ 'गिरइ ती'[10] क्या होइ।

पाठान्तर—१ का० मे और है वचनिका। नटनिया सबद करि बहुत भेद बताया। बगसीस लाष टका सोने का पाया। नटनई बाहिर गई। साहिबा के चालनै की त्यारी भई। सा दावल दानसमद कै अनेक षाणा मिजमानी करी। साहिबा कै ताई मुहुर जुहर षच भरी। विदा करी। दुलहा वधाया। विविध रग राग हुआ सादाने वागे। लाख कोडी यु मोजह वचन लागे। साहिजादा महला रग करता है। मानु सुपके सागर भरता है। गुलाब कमकमाके होद मै रमता है। अबीर अरगजा कादम करचा। साहिजादै आसप सु मन धरचा। २ ध० का० ढढि लागणै। ३ ध० निवासाम हुणइ लागी, का० मे यह वाक्य नही है। ४ अ० दाणसबध। ५ ध० का० आसव आणि। ६ ध० का० मे यह नही है। ७. का० पाणि। ८ का० तै। ९ ध० हो चाहइ, का० होता है। १० ध० गिरइ थी, का० गिरें थी।

अर्थ—इतनी बातें करते शाहज़ादेको ठण्ड लगी, और रात्रि होने लगी। [दावर] दानिशमन्दकी शाहजादीसे शाहज़ादेने कहा, "साहिबा आसव ला,

जिससे पैरोंमें प्राण आयें। अबीरमें मुझे भ्रम हो रहा है; [यदि गिर गया तो] न जाने गिरनेसे क्या हो !

टिप्पणी—निवासा < निवास = रात्रि। आसा < आसव = मदिरा। पाण < प्राण = चेतना।

[१०२]

साहिबां 'अरगजइ'[१] भीनी हइ।
रंग पर रंग उढणी साहिजादइ दीनी हइ।
[२]'फुरमांण'[३] धाई।
'जाणुं'[४] काठ की पूतरी 'कुं करि'[५] वणाई।
'पाचि'[६] का करावा।
'सारइ'[७] लाल का प्याला।
'जाणे* नील कमल पर बे दीयै की जाला'[८]।
करणी के 'झार तर साहिबां' भरया।
'जाणे'[१०] अपछरा अमी हरया।
[११]'बार दुइ दीन्हा'[१२]।
'साहिजादइ लीन्हा'[१३]।
'तजइ कइ आवतइं हवाल कीन्हा'[१४]।
'ते हवाल कहणा'[१५]।
'जिणइ'[१६] दुनिया जाणी 'तिणहुं'[१७] का लहणा।

पाठान्तर—१ का० अरगजै, अ० अरगजा। २ का० मे यहाँ और है: साहिबा साहिजादै कु कह्या। जानि सराब के सोसे आनि। पगपाणि [तुल॰ पूर्ववर्ती वाक्य]। ३ ध० फुरमान ही, का० कहत ही। ४ का० मानु। ५. का० मे नही है। ६ ध० पाचका, अ० पाचिका, का० काच। ७ का० सारी, अ० सारे। ८ ध० का० जाने नील कमल पर वे दीयै (वेली—ध०) की झाला, अ० जाणी नील कमलपर बे दीयकी जाला। ९ का० झड तलै। १०. ध० जानो, का० जानु। ११. का० में यहाँ और है· साहिबा र दौरी। मै दीया दूवा। अबीर माझि मुझे भरम हूवा। १२ का० साहिबा आनि दोइ प्याला दीया। १३ का० तैसा साहिजादा लीया। १४ का० ताजै (तीजै) आवतै ही प्याला हाथ छूटि गिरीया। १५. का० मे नही है। १६ का० जिणइ दीन। १७. ध० तिनही।

अर्थ—साहिबा अरगजासे मीनी है, शाहजादेने रंगपर रंग [की] ओढ़नी [उसको] दी है। वह फरमान पर [ऐसी] दौड पड़ी, मानो किसी प्रकारसे बनायी हुई काठकी पुतली हो। पच्चीकारीका क़राबा (बडा पात्र) था और समस्त रूपसे लाल [से निर्मित] प्याला था, [जो उस क़राबेपर ऐसा लगता था] मानो नीले कमल पर बिना दीपकोंकी ज्वाला हो। करना (?) की झाड़के नीचे साहिबाने [वह] प्याला भरा, मानो अप्सरा द्वारा हरा हुआ अमृत [भरा गया] हो। [इस प्रकार] दो बार उसने [प्याला] दिया। और शाहजादेने [उसे] लिया। तीसरी बार प्यालेके आते ही [साहिबाने] [एक] हवाल कर दिया। वह हवाल कहता है। जिन्होंने दुनिया [की नश्वरता] जानी है, उन्हें [इस हवालसे] क्या लेना है (उनके लिए इस घटनामें क्या रखा है) ?

टिप्पणी—क़राबा <क़राबः [अ०] = शीशेका बडा पात्र। दीया < दीअअ <दीपक। करणी = करना। पुष्प (?)।

[१०३]

दूहा—लंक 'लहकी'[१] झीणियां 'की भांगी रतिभार'[२]।
'सास सरदा वुदीयां (सरंदा बुट्ठियां) कुसल कहदइ वार'[३]॥[४]

पाठान्तर—१ का० लहक्कै। २ घ० कइ भगी रत भार। ३ यह पक्ति घ० का० मे नही है। इनमे अगले दोहेका भी प्रथम चरण नही है। इस छदके प्रथम चरणसे अगले छदके प्रथम चरणके तुक-साम्यके कारण ये बीचके दोनो चरण छूटे लगते है। ४ अ०मे इस प्रसगके दूहोकी भी स्वतत्र क्रम-सख्या दी हुई है, और उसके अन्तर्गत इस दूहेकी क्रम सख्या '१' है।

अर्थ—'या तो [साहिबाकी] क्षीण कटि रति भारसे टूटी होनेके कारण लचक गयी, अथवा कुशल (?) कहते समय साँसें चलती हुई व्युत्थित हो गयीं (ज़ोरोंसे चलने लगीं), [इसलिए यह हुआ]।

टिप्पणी—लहक् = लचकना। झीण <क्षीण। भाणी <भग्न। सर् <सृ = गमन करना। वुट्ठिअ <व्युत्थित = उठा हुआ।

[१०४]

'की पग पंतरि चुक्कियां की भीनी रस भार'[1]।
'लष्ष लियंदा सट्ठि का'[2] प्याला भज्जणहार[3]॥

पाठान्तर—१ यह चरण ध० का० मे नही है—पूर्ववर्ती दूहेके प्रथम चरण से तुक-साम्यके कारण छूटा हुआ लगता है। २. का० लाष लहदा साठि द्या। ३ अ० मे इस दूहेकी क्रम-सख्या '२' है।

अर्थ—अथवा पैर पदान्तर करनेमें चूक गये, अथवा वह रस भारसे भीनी हो रही थी [इसलिए ऐसा हुआ] कि साठ लाखका लिया जा रहा (लिया) हुआ प्याला टूटनेवाला हुआ।

टिप्पणी—पंतर <पदान्तर <डग रखनेमे होनेवाली भूल। भज्ज् < भञ्ज् = तोडना।

[१०५]

भग्गा लाल सु भज्जणा 'भग्गी भम्म सु बाल'[1]।
गई सासू 'सरणागतां'[2] कउण 'हुअंदा हाल'[3]॥[4]

पाठान्तर—१. का० त्रिभगन भग्गी बाल। २ ध० सरणागती। ३ का० हवदा हवाल, अ० हूअदी हाल। ४ अ० मे इस दूहेकी क्रम-सख्या '३' है।

अर्थ—वह लाल [निर्मित] भाजन (पात्र) टूटा तो भ्रम (भय) के कारण वह बाला भागी। वह सासकी शरणागत गयी (हुई) कि उससे यह कौन-सा हाल हो रहा (हो गया) था।

टिप्पणी—भग्ग <भग्न = टूटा हुआ। भज्जण <भाजन = पात्र। भम्म < भ्रम = भय।

[१०६]

[1]टुक एक 'जातइ'[2] साहिजादइ कह्या
'बे'[3] साहिबां 'अजहु'[4] न आई।
'अपइ'[5] छिपी 'क्रिनहुं'[6] छिपाई।[7]
'अबे मरणा तइं'[8] क्या बुराई।

'कुमकुमा कइ जल महि तइ'[9] निकस्या।
'मानहुं कमल'[10] विकस्यां।
[11]'अबीर महिं षोजइं षोज देष्या'[12]।
'देषइ तउ पग लस्या'[13]।
प्याला 'भूजा'[14] देष्या।[15]
देषत ही 'हस्या'[16]॥[17]

पाठान्तर—१ का० मे यहाँ है वचनिका। साहिबा बीबी बिवाना पास जाइ छिपी है। मन मै डरी है। २ का० जाता। ३ का० मे नही है। ४ ध० अजुह सु, का० मे नही है। ५ का० आप। ६ का० कै किसही कै। ७ का० साहिबा गई, मुझ कु काम बान लाई। ८ का० और मरणै थी। ९ का० कमकमै कै जल, अ० कुमकुमा के जल महि थी। १० ध० मनहि कमल, का० मानु कवल। ११ का० मे यहाँ 'तब साहिजादै' और है। १२ ध० अबर नइं षोजइ षोज देष्या, का० अबीर अरगजै मै षोज पोज आई देषि हस्या। १३. ध० देषत ही पग लस्या, का० साहिबा का पाव देषि लस्या, अ० देषइ तउ पल गस्या। १४ ध० भागा। १६ ध० हसि पेष्या। १५-१७ का० मे इन दो वाक्योके स्थानपर हैं ' प्याला के टुकरे ठौर ठौर परे। साहिजादा अपणै मन मै डरै। कबही साहिबा कै चोट आई होइगी।

अर्थ—कुछ क्षणोके जाते (बीतते) ही शाहजादेने कहा, "रे, साहिबा आज (अभी) भी नहीं आयी? वह आप ही कहीं छिप गयी या किसीने उसे छिपा दिया? रे, [उसके न होनेपर] मरनेसे क्या बुराई [होगी]?" वह कुमकुमेके जलमें से [होकर] निकला, मानो कमल विकसित हुआ हो। अबीरमें खोज करते हुए [उसने] उसकी खोज देखी। देखता है तो [साहिबाका] पैर उसमें लसित (अंकित) है। [साथ ही वहाँ] उसने प्याला टूटा देखा। देखते ही वह हँसा।

टिप्पणी—भूजा < भग्न = टूटा।

[१०७]

दूहा—षइर 'करंदा कोडि कहि'[1] मन अप्पणइ विचारि।
षूब 'स'[2] पत्थर भग्गीया 'बिभगन'[3] भग्गी नारि[4]॥

पाठान्तर—१ ध० करंदा कोड कहि, का० करूदे कोडि दा, अ० करनइ कोडि कहि। २ का० सु। ३. ध० जे हुन। ४. अ० मे प्रसगके इस अकेले दोहेपर '१' की सख्या दी हुई है।

अर्थ—[उसने कहा,] "अपने मनमें विचार कर मैने करोड़का ख़ैर (दान पुण्य) करनेकी [बात] कही थी, किन्तु यह ख़ूब रहा कि पत्थर [का प्याला] टूट गया और [उसके] टूटनेके परिणाम-स्वरूप [मेरी] नारी भाग गयी।"

टिप्पणी—खइर <ख़ैरात [अ०] = दान-पुण्य।

[१०८]

साहिजादा हसता हइ।
पग देषि देषि उलसता हइ।
मा आवती चीनी।
चादर सिर परि लीनी।
'लाजनु संकुचि आया'[१]।
'जाणहुं'[२] चंद 'बादलइ*'[३] छिपाया।
'मा अरदास करी'[४]।
पूत साहिबां 'षून हमहि दीन'[५]।
मा क्या षून।
[६]'सठि लष लिअंदा'[७] प्याला 'भग्गा हइ'[८] अउर क्या षून।
[९]'साठि लष लिअं[दा]'[१०]।

पाठान्तर—१ ध० लाजन ही सकुचाया, का० लाज सुकचाया। २ का० में नही है। ३ ध० बादरइ, का० बादरै, अ० बादलि। ४ ध० कीनी। ५. ध० षून मइ दीनी, का० षूब भरी। ६ का० मे और है 'पूत', ध० मे 'पुत्र'। ७ का० साठि लाष का। ८ का० भागा। ९ का० मे यहाँ और है साहिजादा वायक। १० ध० मे यह वाक्य नही है, का० अैसा षून ल्यावै को प्यादा।

अर्थ—शाहजादा हसता है और साहिबाके पैरो [के चिह्न] को देख-देखकर उल्लसित होता है। [उसने] माँको आती हुई पहचाना। [अत:]

चादर उसने सिरपर कर ली। लज्जासे वह [ऐसा] सकुचाया, मानो चाँदको बादलने छिपाया हो। माँने निवेदन किया, 'पुत्र, साहिबाने [हमें] ख़ून [का ज़ुर्म] दिया। [शाहज़ादेने पूछा,] "माँ क्या ख़ून ? [उसने कहा,] "साठ लाखका लिया जाता हुआ प्याला टूटा है, और क्या ख़ून ? साठ लाख-का लिया जाता हुआ !"

टिप्पणी—ऊलस् < उल्लस् = उल्लसित होना, उमगमे आना। भग्गा < भग्न।

[१०६]

'अमा सच्च'[१]।
हमहुं सुलताण पेरो साहि उपाए।
'समरकंद साहिजादी बीबी बिवांणां'[२] जाए।
'मा साहिबां का न्याउ अछए'[४]।[५]
'उसकइ दावल पछइ'।
मांगि 'बे लाल ढमरे'[७]।
न जांणउं 'उंती घरी कित एक अमरे'[८]।[९]
'मां के सिर उपर फेरि फेरि भाने'[१०]।
मानुं चांद तारां 'सुं'[११] रिसानइ।
'अेह'[१२] बेला लाल धरती 'हुइ रही'[१३]।

पाठान्तर—१ ध० मा सच्च हइ, का० मा सच। २ ध० पुत्र साहिबा साहिजादी बीबीयन। ३ का० मे पुन यहाँ है. साहिजादा वायक। ४ का० इस बात का न्याउ है, ध० मा साहिबा का न्याव छइ। ५ का० मे और है: साहिबा तौ न्याय डरें। ६ का० जिसकै दावल दान पीछै। ७ ध० बे लाल के ढावरे, का० कै लाल के ढावरे। ८ ध० उत घरी केते ही आवरे, का० उसकै घरि कितनेक आउरे। ९ का० मे यहाँ और है. ल्यावौ प्याले मे है। १० का० अमा के सिर पर फेरे, प्याले उवारि उवारि भाने। ११ का० परि। १२. ध० उहिं, का० उवह। १३ ध० हुई, का० भई।

अर्थ—[शाहजादाने कहा,] "माँ [यह] सच है। किन्तु हम भी तो सुलतान फीरोज़ शाहके पैदा किये हुए और समरकन्दकी बीबी बिवानांके

जन्म दिये हुए हैं। माँ साहिबाका [जो] न्याय है, [वह तो] उसके दावर [दानिशमन्द] के पक्ष में (पास) है।" फिर उसने कहा, "कालके दो ढमरे माँगो (मँगाओ)।" न जाने उस घड़ी कितने ही वहाँ [लाये] गये। [उन सबको] शाहजादेने माँके सिरपर फेर-फेरकर तोड़ डाला, मानो चाँद तारोंसे रुष्ट हुआ हो, [इसलिए] उन्हे तोड़ रहा हो। उस वेलामे धरती लाल हो रही।

टिप्पणी—उपाया <उप्पाइअ <उत्पादित = उत्पन्न किया हुआ। अछ् < अस् = होना। पछ <पक्ष = पास। ढमरा [दे०] = पिठर, स्थाली। अम् = जाना। मान् <भञ्ज् = भग्न करना, तोडना।

[११०]

'सुलताण सुण्या'।[1]
'सुणतइं जुंहरी बुलाए'।[2]
'कइंमति कराई'।[3]
तीनि अरब बासठि कोडि बारह लाष 'कुतबदी गमाई'।[4]
'सुलताण कह्या'[6] टुकरे भंडारि 'धरावउ'॥[7]

पाठान्तर—१ का० मे इसके स्थानपर है बीबीया उठि उठि पातिसाह पास गई। सुलतान कु वात कही। सत्ता सवहै चक रही। साहिजादै जुलम कीया। प्याला सब भानि दीया। सुलतान मन रोस न आया। २ का० सुनतै ही जुहरी बुलाया। ३ ध० कीमति कराए, का० कोमति कराया। ४ यहाँ ध० मे और है : साठि हजार नव सइ नेऊ, यहाँ का० मे और है . पचीस हजार च्यार सै चोरासी इतनी कीमति सुणाया। ५ का० इतनी कुतबदी बहाया। ६ का० मे इसके स्थान पर है अब क्या चाहै। ७ ध० धरहु, का० वाहौ।

अर्थ—सुलतानने सुना और सुनते ही जौहरियोंको बुलाया। उनकी क़ीमत करायी। [जौहरियोंने कहा,] "तीन अरब बासठ करोड़ बारह लाख [की क़ीमत] कुतुबुद्दीनने गँवायी।" सुलतानने कहा, टुकड़ोंको भाण्डारमें रखवाओ।

टिप्पणी—गमाँव् <गमय = समाप्त करना।

[१११]

एक पाइ खरा कुतबदी अरदास करइ'।[1]
'टुकरे पाउं तउ कछू नाम ना चलाउं'।[2]
'सुलताण'[3] कह्या 'तेरा ई हइ'[4]।[5]
'राषि भावइ गमाइ'[6]॥

पाठान्तर—३. ध० तेरे ही है। ४. अ० सुलताणि। १,२,५,६ का० मे इन वाक्योके स्थानपर है : इतनी साहिजादै एक पाव षरे हूये। सुलतान सुं वीनती करी। टुकरे भंडार चाहोगे तो नाम ना न चलै। [पातिसा]ह हुकुम कीया। लूटाइ भावै तेरे ही है। अब ए निरमाइल भए। साहजादा ए। षलक मुलक धाया। *टुकरै नाषनै लागा। सादाना वाजनै लागा। एक चडते है। एक पडते है। एक भरते है। षूब षूब धसते है। साहिबा साहिजादा हसते है। षलक निहाल कीया। लाष लाष का सब किसही नै दीया।

अर्थ—[यह सुनकर] एक पैरपर खड़ा होकर कुतुबुद्दीन निवेदन करता है, "मै [उत्तराधिकारमें] टुकड़े पाऊँगा तो तुम्हारा कुछ भी नाम न चला सकूँगा।" सुलतानने कहा, [सब कुछ] तेरा ही है, चाहे रखे, चाहे गँवाये।

टिप्पणी—अरदास < अर्ज़दाश्त [फा०] = निवेदन। गमाव् < गमय् = समाप्त करना, नष्ट करना।

[११२]

'जिण ही*'[1] जीव अरंगिया 'घरि घरि लग्गी लाइ'[2]।
हलकइ 'जलहल ओल्हिया'[3] रहइ 'सुरेष उसाहि'[4]॥

पाठान्तर—१ का० जिनही, अ० जिणी। २. ध० ज्वल न भई जन जाइ, का० घर घर आऊ जास। ३ का० जलहर वुट्ठीया, ध० कह्या सु साह कुतबदी। ४ ध० सु राषउसाहि, का० सु रष्यो पास।

अर्थ—[शाहज़ादेने कहा,] "जिन्होंने जीवको [प्रेमसे] रँग लिया है, उन्होंने घट-घटमें आग लगा दी है; जिन्होंने [प्रेमके] हलके जलधरकी आर्द्रता ग्रहण की है, वे ही सुलेख (सुयश) को ऊँचा कर सके हैं।"

टिप्पणी—घर < घट = शरण, अन्त.करण। ओल्ह < आर्द्र। उसाह् < उत् + सार्ध् = उन्नत करना (?)।

[११३]

'सुलतांण फुरमाण दीना'[1] ।
'लइ टुकरे गउष परि चीना'[2] ।
'फकीर लूटणइ लागे'[3] ।
'सादानइं वाजणइ लागे'[4] ॥

पाठान्तर—१ अ० सुलताणि फुरमाण दीना । ४ ध० सादाने वागे । १,२,३,४. का० मे ये वाक्य नही है, और इनके स्थानपर है : वचनिका । जा लगि दीप निछत्र द्र् दायम । ता लगि साहिजादा साहिबा कायम । जां लगि मेरु मेखला सायर । दीपै शसि जाम दिवायर । अविचल जा लगि धरती अवर । ब्रह्मा विष्णु रुद्र रिषेसर ।

अर्थ—सुलतानने फ़रमान दिया और टुकड़ोंको गवाक्षपर चुन दिया गया। फ़कीर [उन्हें] लूटने लगे और [लोग] बाजोंको बजाने लगे ।

[११४]

बज्जे 'वज्जत'[1] वज्जीया 'हूआ हूअंदे'[2] काइ ।
जीमी 'जीवइ कुतबदी'[3] मूआ वहंदा 'साहि'[4] ॥

पाठान्तर—१ का० वाजित्र । २. का० हुई हुयदी । ३. का० जावो कुतबदी । ४. का० गई बहुते ['साहि' शब्द छूटा हुआ है], ध० जिन नामना न जाइ ।

अर्थ—बाजे बजते हुए बज उठे, होते होते क्या हो गया ? पृथ्वी-तलपर कुतुबुद्दीन [अब भी] जी रहा है, [जब कि] बहुतेरे शाह मृत (विस्मृत) हो गये ।

टिप्पणी—जिमी <ज़मीन [फ़ा०] = पृथ्वी ।

कुतुबशतकका वार्त्तिक तिलक

पाठ

कुतुबशतकका वार्त्तिक तिलक

[निम्नलिखित पाठ सं० १८२२ में लिपिबद्ध की हुई अनूप संस्कृत पुस्तकालय बीकानेरकी प्रति स० ४७ के अनुसार है, जिसकी प्रतिलिपि राजस्थान विश्वविद्यालयके हिन्दी विभागके एक प्राध्यापक डॉ० हीरालाल माहेश्वरीने की थी। यह तिलक पूरी रचनाका नहीं उसके छन्द २-३ का ही है।]

दिली तखत पेरोज शाह सुलितान थाना।
तिसकै साहिजादा कुतबदी जुवाना।
बरस नव तीस उमरह प्रमाना।
बीवीयै लाजलौ भौ बंधाना ॥
डोसीयो आगै बीबी बिवाना बैठी।
तिन्हौ पचसै हथ सोवन लठी।
बारीयां बेलीया नैनौ दिपावै।
पै साहिजादा उन आगै सरकणै न पावै ॥

(१) दिल्ली कै तषत सुलतान पेरोज स्याह षतम बादस्याहान बादस्याही करै। सु कैसा एक पातिस्याह। दस लाष हाथी। बीस लाष असवार ॥ कौन कौन उमराउ। करैकन दाज उजीर। कालू चवर ढाल उजीर। मलिक सरूप सौद्धावर। मीया चिमनषा सिलहदार। हिसाम मलूक सभा चातुर। राव सिध पाल राव गंग। पातल नेतल सग। ह्वद हेजम ओढण गडे ड गषड. । मोल्हण ठाकुर। रायो चेतन सेवडा। ए सुलतान पेरोज षतम बादिस्याहके मज[लि]सी उमराव ॥ चौदाह सै हरम चालीस हरम की चौकी। एक एक राति आवै ॥ तिसके च्यारि बेटे। स्याह दरीया। स्याह एदल। स्याह महमद। स्याह षुन्नी महमद। ए च्यारि बेटे ॥ तिसकै पेरोज षा सिकारी। तिन दरियाव की मछी मारी। आड्ड षाना पेरोज षा सौ पैदा हुवा ॥ बकरा हिरण सो लडावै। अैसा सुलतान। पेरोज साह षतम बादिसाह ॥

(२) तिसकी निवै बरस की उमर हुई। आँषै की पलकौ गालै सौ आई लगी। पातिसाह देषणै सौ रहा। तब पलको सौ रेस के डोरे लगे रहै। ज्यौ रग-

रेज चूनडी कौ बंद देता है। जब कीसी उमरावका काम होला होय। तब पातिसाह तषत आइ बैठै। पलकौ के डोरे षैचि दिस तारै सों बाधीए। तब पातिसाह को नजरि आवै। हाथी का हाथी। घोडे का घोडा। आदमी का आदमी नजरि आवै। मुहल्ला ले पातसाह उठै।

(३) तब सिकार सौ बहुत प्यास पातसाह का रहै। पै घोडै असवार हुवा न जाय। तब सिकार काहे की देषीयै। तब गिलम ऊपर ऊजली सितारे की चादरि बिछाय तिसपर चीनी सकर बषेरीयै। सकर कौ आय माषी लगै। तब मकडी माष्यौ पर छोडिए। सो मकडी चीते की। चीते की नाहायति दौडि कै मषी कौ पकडै। ज्यौ हिरण कौ चीता पकडै। तब पातिसाह बहुत षुसियाली होय। सु अैसी मकडी की सिकार पातिसाह जी देषै। जगल की सिकार सौ रहै। तब अैसी मकडी की सिकार देषै। अैसे मो सुलतान पेरोज साह षतम। बादिसाहान अैसी पातिसाही का धणी॥

(४) एक दिन तष्त पर क्यास करता हुवा ज मेरे च्यारि बेटे। परि असल पातिसाह जादा कोई नही। किसी पातिसाह की बेटी ब्याहीए। तिसके पेट का असलि पातसाहजादा होइ तौ भला। पातिसाह पुदाइ की बदिगी करणै लागा। दिलवजातह दिल होय एक तन मन एक ध्यान होय। चित सौ लव लगाइ षुदाय की बदिगी करणै लागे। पाव उरि करै। सिर नीचा रषै। सोना रूपाकी जजीर सो पातस्याह औधे लटकै। आपणे साहिब कौ यादि करै। आषरि तू। बातल तू। जाहिर तू। है हदा। है ददा। सरोस की बदगी करै। तसबी पातिसाह चारचौ पहर यादि करै। पहर र फजरि। सुबही पहर। साम के वक्त की अर च्यारि पहर अपने उमरावै का हाथी घोडा का, मलिक मुलिक के षबरिदार चिहरा मुहला के होय। षुब चुम्त बदगी खुदाय की थी। तब साहिब मिहरबान हुवा।

(५) नब्बै बरष की उमर मौ समरकंद के पातसाह का नालेर आया सुलतान सलेम का। पातिस्याह पेरोज साहि षतम बादिसाहि कौ। पातसाह कौ फेरि जवांनी चढी। बहुत षुषाल हुवा। षुदाय को आदि करता हुवा। ए पाक परवर दिगार तु बडा साहिब करीम मिहरबान। कोई अैसी नबै बरस की उमरमे बेटी कौन कै दे पै तू दे। मोतियन का सेहुरा सै बाधि पातिसाह परणनै कौ असवार हुवा। जाय समरकद के पातसाह की बेटी ब्याही। अष्त काजी यौ पढै। पातिसाह के दिलके दरद कढे (कढै ?)। पेरोज साह नै बीबी बिवाना ब्याही।

(६) सु बीबी बिवाना अवलि बहुत सुरति जमाल। षूब फूहिम आकलिदार। किसी कै काजी मुला कै आगै पढाए तौ इल्म आवै। किसी कौ पडितौ पास

रषीए तौ बिद्दा आवै। बीबी बीवाना कौ फारसी। हिंदुही। च्यारौं ही हकीकति। तरीक बेद की। कुरान की। षुदाय की इन्याइति रहम सौ। दिल मही थी। पैदा हुई। अैसी बीबी बिवाना पातसाह कौ ब्याही। पेरोज षत्म बादिसाह दिल्ली आऐ।

(७) दिल्ली आइ फेरि पातसाह षुदाय की बंदगी करने लागे। किस वासतै बदिगी करनै लागे। कि साहिब मिरवान बीबी बिवाना कौ पहलै ही एक अवल फरज्यंद का पेट रहै। अवल बीबी बिवाना कौं फरज्यद होइ। अैसी बदिगी करता करता षुदाय मिहरवान हुवा। बीवी बिवाना कौ फेरि पेटि उमेद रहै।

(८) यक रौज फजर का वष्त है। बादिसाह तष्त पर आय बैठे। मिसाष करनै लागे दात्यौण। अैसे मै बीबी बिवानाकी दाई हरमषानै सौ दौडी ही आई। पातिसाहि पूछ्या कि दाई क्यो आई। आलमपनाह सलामति षुस षबरि ल्याई। बीबी बिवाना कौ पेट की उमेद रही। पातिसाह हुकम कीया कि दोय लाष रुपैए बिवाना ऊपर कुरबान करी षैर करो। ए दाई तू ब माग क्या मागती है। पातसाह सलामति मै क्या मागौ। मागणै लायक पातिसाह नै बदी करी नाह। अै दाई कुछू तू माग। जीवो पातसाह सलामति मै क्या मागौ। जिस रोज बीबी बिवाना कै फरज्यद होय। तिस रौज बादिसाह की जौष आवै सु दीजीए षूब।

(९) हुकम षुदाइ का अैसा हुवा। कि बीबी बिवाना कै फरज्यंद हुवा। उमेद की षबरि पर दोइ लाष रुपैए कुरबान हुवए थे। अब तौ लाषौ। करोडौके मुह कुरबान होते हौ। दिली कै बाजारि ठौर ठौर मोती अवछाडीयै है। डेरै डेरै ठौर ठौर नवबतौ बाजती है। पातिसाह के मनच्यते कारिज हुए।

(१०) एक रोज गुजरान हुवा। दूसरा रोज गुजरान हुवा। तीसरा चौथा पाचवा छठै ठै रोज बीवी बिवाना नौ षूद सायति मै गुसल किया। सिर मै पानी डालि कपडे पिहने। सहजादे कु न्हुलाइ कै कपडे पिन्हाए। ताज कुलह की ताषी सिर पर रषी। दाई कपडे पिन्हाइ ले पातसाह की नजरि पेस कीया। तब पातसाह की नजरि अैसा आया। तो। सा माहीना एक का लडिका होय। पातसाह नै हुकम दीया। ए दाई साहिजादा फेरि माहीने का होई तब नजर करिये। फेरि फेरि महीने कौ ओर पातसाह की नजरि। साहिजादा राषा तब पातिसाह की नजरि साहिजादा अैसा आया। तैसा महीना तीनि का लरिका नजरि आवै। अैसा देषा पातसाह उमराउ सौ बोले कि साहिजादा बहुत अजमति पैदा हुवा। कि हा हजरति साहिजादा षूब अजमति पैदा होइगा। बरषुरदार उमरदराज होह।

(११) पातिसाह कह्या कि यारो उलमावो। पडितो, कुछ साहिजादे का नाव षुब सा राषौ। उलमा वा पडित बोले कि पातिसाह सलामति पहिलौ तस पातसाह कौन नाम रषै। कि ना, यारौ बडा भाई ह्यदू छोटा भाई मुसलमान। हिन्दूई मौ पडित नाम रषौ। सोई नाम षूब। तब पडिता आपणा सास्त्र देष्या। तब साहिजादा कुतबदीन नवल नाम नजरि आया। पडित कहते नाही, पातसाहि बोले, क्यौ यारौ क्यौ बोलते नाही। कि जीवो पातसाह सलामति। ए उलमा भी आपना फाल देषौ, हजरति भी आपना फाल देषौ। तब हम कहैगे। तब पातसाह नै भी फाल देषा। तब पातसाह कौ भी कुतबदीन नवल नाम नजरि आया। तब ताई उलमा व पडित बोले नाही। पातसाह लागे पूछणै। क्यौ यारो बोलते क्यौ नाही कि अवलि पातिसाहि बोल्यौ। तुमारे फाल मै क्या नाम नजरि आया। तब पडित उलमाव बोले साजगार बरषुरदार हमारे फाल मै भी याही नाम है। साहिजादा कुतबदीन नवल नाम दीया। पातसाह नौ। नाम देकर साहिजादा हरमषानै मै ले गए। कि बीबी बिवाना तुम्हारे बेटे का नाम साहिजादा कुतबदीन नवल नाम दीया है। बिवाना तसलीम करि कहा की षूब कीया।

(१२) पातिसाहि कहणै लागै कि बीबी बिवाना हमारी एक अरज है। हजरति क्यैसी क्या अरज है। तब पातसाह बोले कि कुतबदीन नवल का एक ब्याह ढूढि कै पैदा करो। तब बीबी बिवानै बोली। पातसाह तुम कुतबदीन नवलको एक ब्याह का नाव क्यौ लीया। कुतबदी दिल्लीके घर पातिसाहजादा पैदा हुवा। बहुत बदिगीका फरजद है। इसकै वासतै तुम कौण कौण बदिगी षुदाय की है की। तिसको एक ब्याह का नाव क्यौ लीया। एक सै सौ ब्याह कुतबदी के हमेसौ करै। तौ भी किसी बात की कमी नाही। एता जबाब बीबी बिवाना नै दीया। तब पातसाह बोले बीबी बिवाना कुतबदीन नवलके हम बहुत ब्याह करैगे। मै अवलि ब्याह कुतबदीका तहा करैगे जहा लडिकी सुरति जमाल होइगी। षूब फहीम होइगी जैसा पष होइगा। मा साहिजादी। बाप साहिजादा। नानी साहिजादी। नाना साहिजादा। अैसे पष सूरति पाक फहमदार ए तीन बस्त जिस लडिकी मै होइगी कुतबदीन नवल कौ अवलि तहीं ब्याहैगे। पीछै ब्याह और बहुतेरे करेंगे। यह जवाब पातसाहि नै कीया। तब बीबी बिवाना फेरि बोली। पातसाहि सलामति यह बात दरोग लगती है। दरोग किस वास्तै। कि हीजरति सूरति पाईगी तौ फहीम कहा (कहा) पाईएगी। अर फहीम पाइएगी तौ पष कहा पाईएगी। तिस थे याह बात दरोग लगती है। पातसाह बोले ए बीबी जिस षुदाय नै हमको कुतबदी बेटा दीया है सो अलहि कुतबदी कौ

ऐसा ब्याही भी देइगा। तब बीबी बिवाना बोली। पातिसाह अलह तौ इस-सौ भी आले आले देगा। पर मुसकलि सौ पैदा होहिगे। पातसाह बोले षुब बीबी या मुसिकल यासान साब अलाह ते होइगी। पै कुतबदी षुब जतन सौ राष्या चाहिए। जहा तक षूब ब्याह ढूढि-करि पैदा करौ।

(१३) तब ग्यारह सै आदमी कुतबदीन नवल पास रषे तिसमै पंज सौ बूढो। तिन्हौ कै हाथ पच सै सोवन लठी। छिह सै छडीदार सोनेकी छडी लिये रहौ। तिन्हौ को पातिस्याह हुकम कीया कि वारीया बेलिया नैना दिषलावो। पै साहिजादा अनत जाणै न पावै। ग्यारह सै आदमी असी भाति रषै। तिन्ह कौ य हकीकति फुरमाई जु कौडी लायक आदमी आवै तिसकौ लाष देहु तौ लाष दीजीयौ। फेरि जुवाब करणै न पावै। पीछै षाल काढूगा। एक सौ मुहर की हिमानी दरवाजै की षैर कौ, साहजादै कौ, कोई मत पूछियौ। सौ मुहुर उपराति कोई बडा गुनी आवौ तिसकी साहिजादे कौ मालूम होई तब बिदा होई।

(१४) सोनेके तुके कुतबदीन नवल चलावै। तिसपर अज्ञातच लीषीए। जो पावै तिसही का। कोई किस ही कै हाथ सौ लेणै न पावै। आठवै रोज जुमाराति आवै तिस रोज पज पज हार के दो ईराकी बकसीए सो किस रौस बकसए, पचीस पचीस मुहर कौ गज एक की नीलक परीद की तिसका जीन करिए, कचे सूत सौ नग जौ हार परोए यह मेलि करि घोडेके गले यौ बाधीए अपनी समसेर जमधड कौ कचा सूत से परोईए। नग बाँधीए। तूझे ढूढनेवाले कगा[ल] आठवै रोज दिली कै बडे बाजार आइ जमा होई, नगोकी दोस्ती कुतबदीन नवल घोडै को षुरी करावैगे, मसालौ के चादणै असवार के डील सौं तारे से नग टूटि टूटि परैगे मसालैको उजियारे गरीब लूटहिगे, आप षुसाल होय साहिजादा दरवाजै षासै आई उतरै जब जिसकौ हाथ पहली बाग लागै उसका ही घोडा, कुदरति नाही उसके हाथ सौ कोई और लेणै न पावै एक दोइ नग लगे रहै सो उसके वष्त के दूसरा घोडा उसही रौस का फेरि रास होणै लागा।

(१५) आप अदर षाणा षाणे कु आए छ सै छडीदार बाहरि षडे रहै पज सौ बूढी साथ अदरि गए जाई बीबी बिवानाकी हजूरि षाणा षाणै कौ बैठा। कुतबदीन नवल ह्यदूगी तुरकी कुरान भी हाजरि हुऐ अवलि पुरान वाला बोला साहिजादे सलामति बहुत षुब सायति का वक्त है एक निवाला उठायए। होम कुरानवाला बोला ए साहिजादे बहुत षूब सायति का वक्त है घुट एक ठढा अब पाणी की लीजिए, योगिणी पाणीकी घुटै, ईस ही रौसनिवाले गिणे, कुतबदीन नवल षाणा षाय करी बाहरि आया दूसरा घोड़ा उसही रौसका फेरि करि आया

हाजिर हुवा फेरि मसालाकी रोसनाई मौ षुरी करावते नग लुटावते आपर्णे महल आए।

(१६) महल सुलतान पेरोज षतम बादिसाह नै सहर बाहिरे कराए किस वास्तै जु दुनिया की ब्रतास पवन लागनै न पावै दुनिया का जनावर ईस की नजरि न आवै दुनिया का दरष्त उसकी नजरि न आवै जु ईस की नजरि पडै सु जगल का ही जनावर जंगल का ही दरष्त जगल का ही देषै पवन भी लगै सु जगल की ही लगै।

[समाप्तिकी पुष्पिका नहीं है, इसलिए ज्ञात होता है कि प्रति अपूर्ण छोड़ दी गई थी, प्रतिलिपि भी यहींपर समाप्त हुई है।]